कामाख्या सिद्धि

और

कामाख्या तन्त्र

स्वामी आशुतोष गिरि

कामाख्या सिद्धि और कामाख्या तन्त्र

आजकल भारत के बहुत से नगरों में और विदेशों में भी तन्त्र शास्त्र के प्रति लोगों की रुचि बढ़ चली है जिसके कारण बहुतेरे चतुर व्यक्तियों ने अपने आपको तान्त्रिक घोषित करके अपनी तंत्र की दुकानें खोल ली हैं और वास्तविकता तो यह है कि धर्म से अनभिज्ञ एवं धर्मभीरू जनता ऐसे तान्त्रिकों के चंगुल में सरलता से फँस जाती है। यदि इन किसी भी तन्त्र के व्यवसायिकों से कोई पूछे कि भारत में तान्त्रिक सिद्ध पीठ कहाँ-कहाँ है? उन पीठों में कौन-कौन सिद्ध तान्त्रिक हैं? जिन्हें दीक्षा देने का अधिकार है और तान्त्रिक सामर्थ्य क्या होती है, वह सिद्धि क्यों प्राप्त की जाती है या किस तन्त्र पद्धति से किस महाविद्या अथवा शक्ति की सिद्धि के लिए कितने दिनों तक साधना करके कौन सी सिद्धि प्राप्त होती है? तो वह तथाकथित ढोंगी तान्त्रिक कुछ भी उत्तर नहीं दे सकेंगे।

वस्तुतः तन्त्र शास्त्र में तो समस्त साधना रहस्य बताये गये हैं जिनका किसी साधारण व्यक्ति के लिए अध्ययन कर पाना भी कठिन कार्य है। इस प्रस्तुत ग्रन्थ में भारतवर्ष की सर्वप्रसिद्ध कामरूप कामाख्या देवी की सिद्धि का विधान एवं दुर्लभ कामाख्या तन्त्र का ज्ञान प्राप्त करके आप इस ओर आगे बढ़ सकेंगे।

रणधीर प्रकाशन की उत्कृष्ट प्रस्तुति

कामाख्या सिद्धि

और

कामाख्या तन्त्र

लेखक :
स्वामी श्री आशुतोष गिरि जी
पुजारी कामाख्या महापीठ (कामकोट)

मूल्य : 200.00

रणधीर प्रकाशन, हरिद्वार

प्रकाशक : रणधीर प्रकाशन
रेलवे रोड (आरती होटल के पीछे) हरिद्वार
फोन : (01334) 226297

वितरक : रणधीर बुक सेल्स
रेलवे रोड, हरिद्वार
फोन : (01334) 228510

दिल्ली विक्रेता : गगन बुक डिपो
4694, बल्लीमारान, दिल्ली-110006

जम्मू विक्रेता : पुस्तक संसार
167, नुमाइश का मैदान, जम्मू तवी (ज.का.)

संस्करण : सन् : 2010

मुद्रक : राजा ऑफसेट प्रिंटर्स, दिल्ली-92

KAMAKHYA SIDDHI AUR KAMAKHYA TANTRA
WRITTEN BY : SWAMI SHREE ASHUTOSH GIRI JI (PUJARI KAMAKHYA MAHAPITH)
PUBLISHED BY : RANDHIR PRAKASHAN, HARDWAR (INDIA)

भूमिका

आजकल भारत के बहुत से नगरों में और विदेशों में भी तन्त्र शास्त्र के प्रति लोगों की रुचि बढ़ चली है जिसके कारण बहुतेरे चतुर व्यक्तियों ने अपने आपको तान्त्रिक घोषित करके अपनी तंत्र की दुकानें खोल ली हैं और वास्तविकता तो यह है कि धर्म से अनभिज्ञ एवं धर्मभीरू जनता ऐसे तान्त्रिकों के चंगुल में सरलता से फँस जाती है। यदि इन किसी भी तन्त्र के व्यवसायिकों से कोई पूछे कि भारत में तान्त्रिक सिद्ध पीठ कहाँ-कहाँ है? उन पीठों में कौन-कौन सिद्ध तान्त्रिक हैं? जिन्हें दीक्षा देने का अधिकार है और तान्त्रिक सामर्थ्य क्या होती है, वह सिद्धि क्यों प्राप्त की जाती है या किस तन्त्र पद्धति से किस महाविद्या अथवा शक्ति की सिद्धि के लिए कितने दिनों तक साधना करके कौन सी सिद्धि प्राप्त होती है? तो वह तथाकथित ढोंगी तान्त्रिक कुछ भी उत्तर नहीं दे सकेंगे।

वस्तुत: तन्त्र शास्त्र में अनेकों शक्तियों की उपासना और साधना का रहस्य बतलाया गया है। यह शक्ति पूजा कब से चली इसका कोई विशेष विवरण तो नहीं मिलता परन्तु ऋग्वेद से लेकर उपनिषद, देवी भागवत पुराण, कालिका पुराण, स्कन्द पुराण और लिंग पुराण आदि में शक्ति का माहात्म्य प्रचुर रूप से मिलता है। इन सब प्राचीन ग्रन्थों व पुराणों का अवलोकन करने से प्रतीत होता है कि शक्ति रूप की उपासना वैदिक काल से चली आती है इससे यह भी स्पष्ट होता है कि शैव और शाक्त मत साथ-साथ प्रचलित थे; कुछ लोग दक्षिणाचारी शाक्त मत को दक्षिण मार्ग या वैदिक शाक्त मत भी पुकारने लगे।

एक समय सारे एशिया में महायान मत फैला था जिसके द्वारा भी सभी देशों में शक्ति पूजा का प्रचार हुआ। प्रारम्भ में शाक्त, शैव, गाणपत्य, वैष्णव

और बौद्ध आदि सम्प्रदायों के साथ-साथ वैदिक शाक्त सम्प्रदाय भी चलता रहा जिसमें बाद में तान्त्रिक शाक्त धर्म की विधियाँ और शाखाएँ भी जुड़ती गईं। तत्पश्चात् शाक्त धर्म में वामाचार भी आकर जुड़ गया। दक्षिण और वाम दोनों मार्गों वाले दश महाविद्याओं की उपासना करते हैं इन दसों विद्याओं के नाम और उनके पति इस प्रकार हैं—

महाविद्या के नाम	*पति का नाम*
१. महाकाली	महाकाल
२. उग्रतारा	अक्षोभ्य
३. षोडशी	पंचवक्त्र रुद्र
४. भुवनेश्वरी	त्र्यम्बकम
५. छिन्नमस्ता	दक्षिणा मूर्ति
६. भैरवी	एकवक्त्र रुद्र
७. धूमावती	विधवा
८. बगलामुखी	सदाशिव
९. मातंगी	मतंग
१०. कमला	विष्णु

इनमें धूमावती विधवा कहलाती है और षोडशी के अन्य नाम त्रिपुर सुन्दरी, ललिताम्बिका, श्रीदेवी इत्यादि भी प्रचलित हैं।

अनन्त और अव्यक्त आद्याशक्ति ही सारी सृष्टि उत्पन्न करती हैं। उस अज्ञेय और अव्यक्त के विकास में एक ही परमतत्व का आगम होता है इसलिए इसे 'आगम' कहते हैं। उस परमतत्व का ही नाम ईश्वर या शिव है। जब अपने तपोबल से ब्रह्मा सृष्टि तो करते जाते थे परन्तु उसमें वृद्धि नहीं हो पा रही थी तो उनकी प्रार्थना पर शक्ति ने विमर्श (स्फूर्ति+ओज) का रूप धारण करके उसमें प्रवेश किया जिसमें तैजस रूप में शिव भी प्रविष्ट हुए। जब शिव में शक्ति ने प्रवेश किया तब बिन्दु का विस्तार हुआ इस संयोग से नादरूपी स्त्री तत्त्व की उत्पत्ति हुई। यह बिन्दु और नाद दोनों मिलकर ऐसे एक रूप हुए कि उनका नाम भी अर्द्धनारीश्वर पड़ गया इसीको तन्त्र की भाषा में संयुक्त बिन्दु भी कहते हैं। बिन्दु दो हैं—श्वेत तो पुंसत्व है और रक्त

स्त्रीत्व है। दोनों के मेल से कला उत्पन्न होती है। किसी-किसी आगम तन्त्र ग्रन्थ में जहाँ देवी-कामकला के स्वरूप का वर्णन है वहाँ संयुक्त बिन्दु सूर्य को उनका मुख कहा गया है। अग्नि लाल और उनकी अर्धकला को उनकी जननेन्द्रिय बताया गया है। इसी सृष्टि करने वाली देवी को पूरा, ललिता, भट्टारिका, त्रिपुरसुन्दरी और षोडशी भी कहते हैं। सब वस्तुओं और शब्दों की उत्पत्ति त्रिपुरसुन्दरी के द्वारा होती है, इसलिए इस देवी का नाम 'परा' है। चारों प्रकार की वाणी (परा, पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी) में इसी परा को प्रथम बताया गया है।

कामरूप कामाख्या में जो देवी का सिद्ध पीठ है वह इसी सृष्टिकर्त्री त्रिपुरसुन्दरी (दश महाविद्याओं में प्रमुख मानी गई है) का है। कामाख्या में जो आजकल प्रसिद्ध तान्त्रिक विराजमान है उनका कथन है कि पिछले साठ वर्षों में वहाँ एक भी व्यक्ति तन्त्र साधना के निमित्त नहीं आया है। कुछ ऐसा ही अनुभव दक्षिण भारत के प्रसिद्ध सह्याद्रि पीठ के प्रमुख पुजारी जी का भी है। फिर भी न जाने बड़े-बड़े नगरों में बड़े-बड़े नामपट्ट लगवाकर अपने आपको तान्त्रिक घोषित करने वाले ये लोग कहाँ से आ गए हैं। तन्त्र शास्त्रानुसार तो दश महाविद्याओं से जो एक में सिद्ध हो जाता है उसे इतनी शक्ति प्राप्त हो जाती है कि वह जो कुछ कह देता है वही हो जाता है। आठों सिद्धियाँ उसके चरणों में लोटती हैं और उसे किसी बात की कमी नहीं रह जाती। ऐसा सिद्ध तान्त्रिक न तो किसी से कुछ लेता है, न माँगता है, न संग्रह करता है, न मठ बनाता है और न जनसंकुल स्थान में रहता है।

कामाख्या सिद्धि के बारे में जो भी जानकारी मुझे सिद्ध पीठ से मिली उसे मैंने कई वर्षों की मेहनत से संग्रहीत करके 'रणधीर प्रकाशन, हरिद्वार' को सौंपी है अब वह इसे जनहित में शुद्ध रूप से छपवाकर प्रस्तुते कर रहे हैं इसके लिए मैं तन्त्र प्रेमियों और साधकों की ओर से उन्हें धन्यवाद ही दे सकता हूँ। पाठक लाभ उठाएँ और मैं पुनः कहूँगा—

दृशा स्पर्शेण फूत्कारैः पांदागुष्ठेन बोधितैः।
उदकेनाभिमन्त्रेणालुब्धश्च तनुते श्रियम्॥

अर्थात् जो व्यक्ति कोई भी तन्त्र (महाविद्या) सिद्ध कर लेता है वह निर्लोभ होकर किसी व्यथित को आँखों से देखकर, हाथ से स्पर्श कर, फूँक मारकर, पैर के अंगूठे से कुरेदकर या अभिमन्त्रित जल देकर प्रत्येक शरणागत का कल्याण कर सकता है।

—आशुतोष गिरि
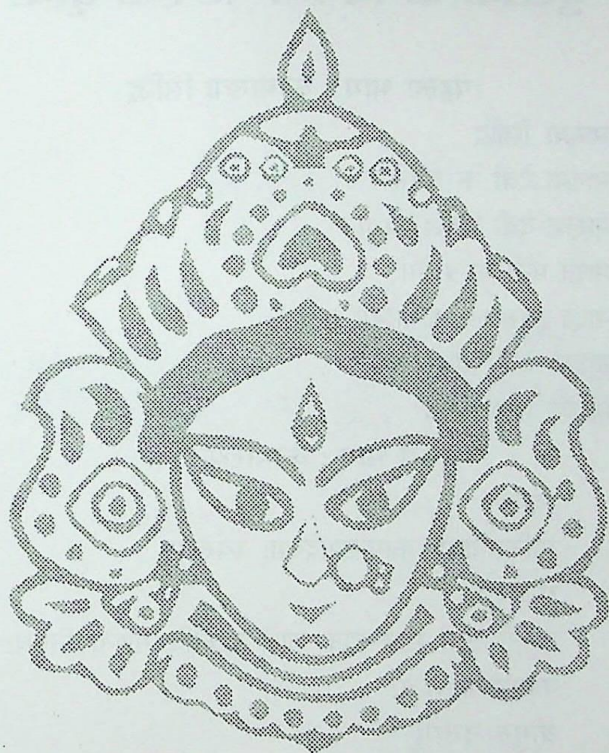
पुस्तक के विषयों पर एक दृष्टि

पहला भाग : कामाख्या सिद्धि

दूसरा भाग : कामाख्या तन्त्र

पहला भाग

कामाख्या सिद्धि

अनुक्रम (पहला भाग)

कामाख्या सिद्धि

ॐ नमः शिवाय शान्ताय पञ्चवक्त्राय शूलिने।
नन्दि-भृङ्गि-महाव्यालगण-युक्ताय शम्भवे॥
शिवाये हरकान्तायै प्रकृत्यै सृष्टिहेतवे।
नमस्ते ब्रह्मचारिण्यै जगद्धात्र्यै नमो नमः॥
संसारभय-सन्तापात् पाहि मां सिंहवाहिनि।
राज्य-सौभाग्य-सम्पत्ति देहि मामम्ब पार्वति॥

मंगलाचरण श्लोक

ॐ दुर्गे दुर्ग विनाशिनी भय हरी माता भयहारिणी।
कामाक्षा गिरिजा उमा भगवती वागीश्वरी योगिनी॥
बन्दी सुन्दर भैरवी सुललिता सिद्धेश्वरी रेणुका।
वाराही वरदायिनी गिरि सुता कुर्वन्तु नो मंगलम्॥
श्रीमत्त्रिपुरा भैरव्याः कामाक्षायोनि मण्डलम्।
भूमण्डले क्षेत्ररत्नं महामायाधि वासितम्॥
नातः परतरं स्थानं क्वचिदस्ति धरातले।
प्रतिमासं भवेद्देवी सूत्र साक्षाद्रजःस्वला॥
तत्रत्या देवता सर्वाः पर्वतात्मकतां गताः।
पर्वतेषु वसन्त्येव महत्यो देवता अपि॥
तत्रत्या पृथ्वी सर्वा देवीरूपा स्मृता बुधैः।
नातः परतरं स्थानं कामाख्यायोनिमण्डलात्॥

(श्रीमद् देवीभागवत् पुराण)

जब शिवजी सती का शरीर लेकर घूम रहे थे, तब उनका योनि भाग

जहाँ गिरा, वह स्थान कामाख्या (कामाक्षा) देवी के नाम से प्रसिद्ध हुआ। वहीं भगवती 'त्रिपुर-सुन्दरी' का पवित्र स्थान है। संसार में महामाया से सुशोभित जितने भी क्षेत्र हैं, उन सबों में यह स्थान 'शिरोमणि' कहा गया है। भूतल में इससे बढ़कर देवी का सिद्ध-स्थान दूसरा कोई नहीं है। वह ऐसा जागृत (जागता) स्थान है, जहाँ आज भी प्रतिमास भगवती रजस्वला हुआ करती हैं। उस समय वहाँ के रहने वाले सभी प्रधान देवता उस पर्वत पर चले जाते हैं और वहीं पर्वत श्रेणियों के रूप में निवास करते हैं। प्राज्ञों (विद्वानों) का कहा है कि उस अवसर पर वहाँ की सम्पूर्ण भूमि देवीमयी हो जाती है। इसीलिए 'कामाख्या योनि मण्डल' से बढ़कर कोई दूसरा श्रेष्ठ स्थान नहीं है।

माण्डूक्य उपनिषद में इनको ब्रह्म निरूपित किया गया है।

एष सर्वेश्वर एष सर्वज्ञ एषोऽन्तर्याम्येष।
योनिः सर्वस्य प्रभवाप्ययोहि भूतानाम्॥

वह सर्वेश्वर है, वह सर्वज्ञ है, वह अन्तर्यामी है, वह सबका उत्पन्न करने का स्थान-योनि है (योनि ही ब्रह्म है) समस्त प्राणियों की उत्पत्ति, स्थिति और लय का स्थान भी वही है।

(माण्डूक्योपनिषद् उपनिषद ६)

कामाख्यादेवी का पौराणिक इतिहास

पूर्वकाल में प्रयाग में एकत्र होकर मुनियों ने एक महान यज्ञ कियां। इस यज्ञ में ब्रह्मा जी सपरिवार सम्मिलित हुए थे। अपने गणों को साथ लिए शिवजी भी सती सहित उसमें आए। भगवान् विष्णु ने भी लक्ष्मी जी के साथ भाग लिया। अन्यान्य देवता भी अपनी-अपनी पत्नियों के साथ उस यज्ञ में आए थे। एक बार, शास्त्रों में ज्ञान काण्ड पर विचार हो रहा था। सभी ऋषि-मुनि भी वहाँ उपस्थित होकर उस विचार विनिमय में आनन्द लेकर विचार-प्रकट कर रहे थे कि इतने में प्रजापतियों के स्वामी दक्ष जी वहाँ आ पहुँचे और वे केवल ब्रह्मा जी को प्रणाम कर, उनकी आज्ञा से अपने आसान पर बैठ गए। पुनः सभी ऋषि, मुनि, देवादि ने दक्ष की बड़ी पूजा की, परन्तु परम

स्वतन्त्र लीला विहारी महेश्वर अर्थात् शिवजी अपने आसन पर ही बैठे रहे। उन्होंने दक्ष को प्रणाम भी नहीं किया। इसे दक्ष ने अपना घोर अपमान समझा और वे क्रोध से तिलमिला उठे। ''उन्होंने सभा के मध्य में सबको सुनाते हुए शिवजी को बहुत कुवाक्य कहा कि यह पाखण्डी, दुर्जन, पापशील, ब्राह्मण निन्दक, बड़ों का अनादर करने वाला और सर्वदा स्त्री में आसक्त रहने वाला है। सम्बन्ध से तो यह मेरा दामाद है, परन्तु इतना धृष्ट है कि अपने आसन से उठकर इसने मुझे प्रणाम तक नहीं किया। अत: मैं इसे बहिष्कृत करता हूँ। अब आज से यह देवताओं के साथ यज्ञ में भाग नहीं पावेगा।''

यह सुनते ही नन्दीश्वर की आँखें लाल हो गईं। उसने दक्ष को बहुत डाँटा और फटकारा। दक्ष ने नन्दीश्वर और शिवजी के समस्त गणों को भी शापित किया। अब नन्दीश्वर को और भी क्रोध आ गया। उसने उस महागर्वित दक्ष से कहा—हे दुष्ट बुद्धे! क्या तू शिवतत्व को नहीं जानता। रे मूर्ख! यह जो तूने भृगु आदि ऋषियों के बीच में महाप्रभु भगवान् शंकर का उपहास किया है इससे शिवजी के प्रभाव से मैं भी तुझे शाप देता हूँ कि तुम सब ब्राह्मण वेद का वास्तविक अर्थ न समझकर केवल अर्थवाद पर ही विश्वास करोगे। जब नन्दीश्वर ने इस प्रकार ब्राह्मणों को शाप दे दिया, तब वहाँ बड़ा हा-हाकार मच गया। तब भगवान् शंकर नन्दीश्वर को समझाते हुए बोले कि हे महाप्राज्ञ! तुम्हें क्रोध न करना चाहिए था। मैं ब्राह्मण और वेद को माननीय जानता हूँ अत: इनको शाप नहीं देता। तुम यह बात यथार्थ में जान लो कि दक्ष का शाप मुझे नहीं लगा है। अब तुम शान्त हो जाओ। इस प्रकार नन्दीश्वर को शान्त कर शिवजी अपने सब गणों को साथ ले निज-धाम को चले गए। दक्ष भी मित्रों और ब्राह्मणों को साथ ले अपने स्थान को चला गया। इस प्रकार भगवान् शिव और प्रजापति दक्ष का विरोध हुआ जो दिनों-दिन बढ़ता गया। दक्ष शिव से बहुत ईर्ष्या करने लगा।

दक्ष यज्ञ—इसी बात को लेकर कनखल नामक तीर्थ में प्रजापति दक्ष ने एक बहुत बड़े यज्ञ का आयोजन किया। उस यज्ञ में दक्ष ने भृगु आदि तपस्वियों को ऋत्विज बनाया गया। सभी गन्धर्वों, विद्याधरों, सिद्धगणों, यज्ञों, आदित्य समूहों और सभी नागों को दक्ष ने अपने इस महायज्ञ में वरण

किया। अगस्त्य, कश्यप, अत्रि, वामदेव, भृगु, दधीचि, भगवान् व्यास, भरद्वाज, गौतम, पैल, पराशर, गर्ग, भार्गव, ककुपसित, सुमन्तु, त्रिक, कंक और वैशम्पायन आदि ये सभी ऋषि मुनि उस यज्ञ में आए। त्रिमूर्तियों में ब्रह्मलोक से ब्रह्मा सपरिवार और बैकुण्ठ से श्री विष्णु जी अपने पार्षदों और परिवार सहित आए। इसी प्रकार अन्यान्य देवता भी सपरिवार दक्ष के यज्ञ में पधारे। परन्तु दक्ष ने उस यज्ञ में शिवजी को निमन्त्रण नहीं दिया। अपने ईर्ष्या के कारण उसने यह तर्क दिया कि वे कपालधारी हैं। यहाँ तक कि उसने अपनी प्रिय पुत्री सती को भी यही कहकर नहीं बुलाया कि वह कपाली की भार्या है। जब इस प्रकार यज्ञ आरम्भ हुआ तब उसमें भगवान् शिव को न आया देख दधीचि ने सब देवताओं और ऋषियों से पूछा कि इस महायज्ञ में भगवान् शिव क्यों नहीं आए। दधीचि के ये वाक्य सुनकर मूढ़ बुद्धि दक्ष ने मुस्करा कर कहा कि देवताओं के मूल श्री विष्णु जी तो आ ही गए हैं, फिर शिव की इस यज्ञ में क्या आवश्यकता है ? यह कहो कि मैंने ब्रह्मा जी के कहने से उसे अपनी कन्या दे दी, नहीं तो कुलीन, माता-पिता से रहित, भूत-प्रेतों के स्वामी आत्माभिमानी, मूर्ख स्तब्ध, मौनी और ईर्ष्यालु को कौन पूछता ? वह इस यज्ञ कर्म के कदापि योग्य नहीं है और इसीलिए मैंने उसे नहीं बुलाया है। मेरे इस यज्ञ को तो आप सब मिलकर सफल बनाएँ। दक्ष के ऐसा कहने पर दधीचि ने सब मुनियों को सुनाते हुए कहा कि आप लोग चाहे जो कहें पर भगवान् शिव के बिना तो यह यज्ञ अपूर्ण ही रहेगा और इस अनर्थ से आप सब नाश को प्राप्त होओगे। ऐसा कह दधीचि ऋषि उस यज्ञ भूमि से अकेले ही निकल कर अपने आश्रम को चल दिए। दक्ष हँसने लगा। उसने अन्य ऋषियों एवं मुनियों से कहा कि यह दधीचि शिव-भक्त था, चला गया यह अच्छा ही हुआ। मैंने शिव तथा शिव भक्तों को बहिष्कृत कर दिया है अत: बहिष्कृतों को मैं अपने यज्ञ में चाहता ही नहीं। विष्णु आदि सभी देवता तथा आप सब लोग वेद के वक्ता हैं, मेरे यज्ञ को सफल बनाइए। होनहार होकर रहती है, अत: दक्ष की इस बात को सुनकर उन लोगों ने देवताओं की पूजा आरम्भ करा दी।

सती का दक्ष के यज्ञ में जाना—सती देख रही है कि सभी देवता

तथा ऋषिगण अपने-अपने वाहनों पर चढ़कर सपरिवार जा रहे हैं। सती को नारद जी ने भी उनके पिता के यज्ञ करने का समाचार दिया। फिर, जिस समय देवता और ऋषिगण उस यज्ञ में हँसते-बोलते हुए जा रहे थे, उस समय दक्ष-पुत्री सती अपनी सखियों के साथ गन्धमादन पर्वत पर धारागृह में कौतुकपूर्वक अनेक क्रीड़ाएँ कर रही थीं। उस समय सती ने देखा कि रोहिणी और चन्द्रमा भी दक्ष के यज्ञ में जा रहे हैं। रोहिणी भी दक्ष की कन्या है और चन्द्रमा उनके जमाई हैं। तब सती ने अपनी विजया नामक सखी से पूछा कि रोहिणी के साथ चन्द्रमा कहाँ जा रहे हैं तो सती के वचन सुनकर विजया शीघ्र ही चन्द्रमा के पास गई और उनसे पूछा। चन्द्रमा ने दक्ष-यज्ञ महोत्सव का पूर्ण वृत्तान्त कह सुनाया। उसे सुन विजया ने आकर जो चन्द्रमा ने कहा था, सती से कह दिया। यह सुन सती देवी बड़ी विस्मति हुई और बार-बार शिवजी के लिए आमन्त्रण न आने का कारण विचार कर हृदय में चिन्ता करने लगी। वह शिव के पास आईं और बोलीं कि मैंने सुना है कि मेरे पिता ने एक महायज्ञ रचा है, वहाँ इस समय बड़ा उत्सव हो रहा है। सभी ऋषिगण उसमें एकत्र हुए हैं। आपको मेरे पिता का यज्ञ नहीं सुहाता है, आप इसका कारण मुझे शीघ्र बताइए। सब काम छोड़ आप मेरी प्रार्थना से मेरे पिता के यज्ञ में चलिए। सम्बन्धियों का यही धर्म है कि समय पर प्रेम बढ़ाने के लिए उनके समीप जाएँ। सती के ये वचन शिवजी के हृदय में बाण से लगे। फिर भी वे इस प्रकार प्रिय वचनों में बोले कि हे देवि! तुम्हारे पिता दक्ष मुझसे विशेष वैमनस्य रखते हैं। इसी कारण उन्होंने मुझे निमन्त्रण नहीं दिया है और जो बिना बुलाए दूसरों के घर आते हैं वे मरण से भी अधिक अपमान पाते हैं। इस कारण हमें और तुम्हें दक्ष के यज्ञ में नहीं जाना है। मैं तुमसे सत्य कहता हूँ कि बाणों से विद्ध होने पर भी मनुष्य इतना व्यथित नहीं होता जितना अपने सम्बन्धियों के आक्षेप और तीखी बातों से मनुष्य का हृदय दुःखी होता है। यह सुन सती जी क्रुद्ध हो गईं और शिवजी से बोलीं—हे शम्भो! आप ही से यज्ञ सफल होता है। परन्तु इस पर भी मेरे दुष्ट पिता ने आपको नहीं बुलाया। अतएव मैं दुरात्मा अपने पिता और यज्ञ में आए दुरात्मा देवताओं और ऋषियों का यह अभिप्राय जानना चाहती हूँ कि उन्होंने ऐसा

क्यों किया। हे नाथ! इसके लिए मैं अपने पिता के यज्ञ में जाती हूँ। हे परमेश्वर! आप मुझे इसकी आज्ञा दीजिए। सती जी का यह दृढ़ विचार देख सर्वज्ञ भगवान् शंकर बोले—हे देवि! यदि तुम्हारी वहाँ जाने की इच्छा हो तो मैं तुम्हें आज्ञा देता हूँ कि तुम अपने पिता के यज्ञ में जाओ। नन्दीश्वर नामक मेरे बैल को सजाकर इस पर चढ़कर महाराजाओं के ठाट-बाट से, अपने सब आभूषण पहनकर जाओ। शिवजी ने इस प्रकार कहा तब सती जी वस्त्राभूषण धारण कर पिता के घर को चलीं।

सती का अपमान—जहाँ दक्ष का विशाल यज्ञ हो रहा था, सती जी वहाँ जा पहुँची। सती को आई हुई देखकर उनकी माता ने तो यथोचित सत्कार किया, परन्तु बहिनों ने बड़ा अपमानजनक नाक-भौं सिकोड़ा। पुनः दक्ष तथा उसके अनुनायियों ने कुछ भी आदर नहीं किया। बड़े दुःखी हृदय से सती ने माता-पिता दोनों को समान रूप से प्रणाम किया। अब वे यज्ञ मण्डप में पहुँची। यज्ञ में विष्णु आदि सब देवताओं का पृथक-पृथक भाग देखा परन्तु शम्भु का कहीं भी भाग दिखाई न दिया। इससे सती को बड़ा क्रोध आया। फिर तो वह सभी को क्रूर दृष्टि से देखते हुए बोलीं कि हे पिताजी! आपने भगवान् शंकर को क्यों नहीं बुलाया। वे तो स्वयं 'यज्ञ स्वरूप', 'यज्ञांग' और 'यज्ञों के दक्षिणा स्वरूप' हैं। बिना उनके आए आपने इस यज्ञ का सम्पादन ही कैसे कर लिया? आप शंकर को कोई सामान्य देवता समझते थे? यह आपने उनका अपमान किया है। हे नीच पिता! आज आपकी बुद्धि भ्रष्ट हो गई है। तभी तो इस समय आपने उन आदि-देव और देवों के देव भगवान् शंकर को नहीं पहचाना। फिर ये ब्रह्मा, विष्णु आदि देवता और मुनीश्वर भी बिना शिवजी के तुम्हारे इस यज्ञ में कैसे सम्मिलित हुए। इस प्रकार कहकर शिव स्वरूपा सती ने सब देवताओं को धमकाया और विष्णु जी को तो उन्होंने बहुत लज्जित किया। तब दक्ष अपनी पुत्री के ये वचन सुनकर क्रुद्ध हो उसे वक्र दृष्टि से देखते हुए बोले—हे भद्रे! बहुत कहने से क्या लाभ? तू यहाँ चली क्यों आई? चाहे यहाँ रह चाहे चली जा। मुझसे तेरा कोई प्रयोजन नहीं। तेरा पति तो भूतों का राजा है, जो वेद बहिष्कृत, अकुलीन और अमांगलिक है। इसी कारण तेरे कुवेषधारी पति

शिव को मैंने यज्ञ में नहीं बुलाया।

फिर तो जगत को उत्पन्न करने वाली देवी अत्यन्त क्रुद्ध हो अपने पिता से इस प्रकार बोली कि हे पिता जी! जो शिव की निन्दा करता है अथवा सुनता है वे दोनों ही नरकगामी होते हैं। अपने स्वामी का अपमान सुनकर मेरे जीने से ही क्या लाभ होगा? अतएव मैं अग्नि में प्रवेश कर इस शरीर को त्याग कर दूँगी।

सती का देह त्याग—इतना कहकर सती शंकर का स्मरण कर उत्तर की ओर मुख करके जा बैठीं और आचमन कर नेत्र बन्द कर लिए तथा शरीर त्यागने की इच्छा से योगाग्नि द्वारा शीघ्र ही अपने शरीर को भस्म कर डाला। फिर तो आकाश और भूमि पर देवताओं और मुनियों को भयभीत करने वाला अद्‍भुत हा-हाकार मच गया। उधर सती के प्राण छोड़ते ही शिवजी के गण हाथ में शस्त्र लेकर उठ खड़े हुए और सब ओर प्रलय मचाने लगे। उनके इस आक्रमण को देख विघ्नों की शान्ति के लिए महर्षि भृगु वेद मन्त्रों से अग्नि की आहुतियाँ देने लगे जिससे महाबलशाली ऋभु नामक बहुत से असुर उत्पन्न हो गए। उनसे शिवगणों का युद्ध होने लगा। उन्होंने शिवजी के गणों की शक्ति क्षीण कर दी और ये गण शिवजी के पास भागे।

आकाशवाणी—ठीक इसी समय दक्षादि देवताओं को सुनाते हुए यह आकाशवाणी हुई कि हे मूर्ख दक्ष! तूने यह बड़ा अनर्थ किया है। अपने घर में स्वतः आई हुई, साक्षात् मंगलस्वरूपा अपनी पुत्री सती का तूने अपमान किया है। रे मूर्ख! तूने सती और शंकर का पूजन नहीं किया। तुझे तो शंकर की अर्द्धांगिनी सती का आदर ही करना योग्य था। वह अनादि शक्ति, जगत की सृष्टा, रक्षिका और संहारिका हैं। इसी प्रकार भगवान् शंकर ही सबके स्वामी और सब देवों के कल्याणकर्त्ता हैं जिनके दर्शन मात्र से यज्ञों का फल प्राप्त हो जाता है। परन्तु तुझ दुष्ट ने उनका सत्कार नहीं किया। इस कारण तेरा यज्ञ नष्ट हो जाएगा क्योंकि जहाँ पूज्यों की पूजा नहीं होती वहाँ अमंगल ही होता है। रे दक्ष! जो तू यह समझता था कि शंकर की पूजा किए बिना ही मैं अपना कल्याण कर लूँगा, अब तेरा वह गर्व चूर्ण-चूर्ण हो जाएगा। सर्वेश्वर

शिव और परमेश्वरी शिवा से विमुख होने पर कोई भी देवता तेरी सहायता करने योग्य नहीं हैं। इस आकाशवाणी को सुन सभी देवता और मुनि आश्चर्य करने लगे तथा भविष्य की आशंका से ग्रस्त होकर चिन्ता करने लगे।

वीरभद्र और महाकाली की उत्पत्ति—इधर भृगु के मन्त्रों से उत्पन्न भृगु गणों द्वारा मार भगाए गए शिवजी के गण शिवजी के शरण में पहुँचे और सती शरीर त्याग आदि का सारा वृत्तान्त कह सुनाया। उसे सुन शिवजी के क्रोध का अन्त न रहा। लोक संहारकारी शंकर ने अपनी एक जटा उखाड़कर उसे एक पर्वत पर दे मारा जिससे उसके दो खण्ड हो गए और प्रलयकाल के समान एक भयंकर शब्द के साथ महाबलशाली वीरभद्र उत्पन्न हुए। फिर जटा के दूसरे भाग से अत्यन्त भयंकर और करोड़ों भूतों से घिरी हुई महाकाली उत्पन्न हुई। तदनन्तर वीरभद्र ने शिवजी को प्रणाम कर हाथ जोड़ निवेदन किया कि हे प्रभो! मैं क्या करूँ? मुझे शीघ्र ही आज्ञा दीजिए। यदि आप कहिए तो मैं क्षण भर में ही समुद्र को सोख डालूँ, पर्वतों को चूर्ण कर दूँ, ब्रह्माण्ड को भस्म कर डालूँ अथवा देवताओं और मुनीश्वरों को भस्म कर दूँ। आपकी कृपा से मेरे लिए कोई भी कार्य करना अशक्य नहीं है। यह सुन मंगलापति भगवान् शिव किंचित् सन्तुष्ट हुए और वीरभद्र को आशीर्वाद देकर बोले—हे तात्, वीरभद्र! ब्रह्मा का पुत्र दुष्ट दक्ष एक यज्ञ कर रहा है जो बड़ा अहंकारी और विशेषकर मेरा विरोधी है। तुम जाकर उसके यज्ञ को विध्वंस कर दो और देवता, यज्ञ, गन्धर्व कोई वहाँ हो तो आज उन सबको भस्म कर डालो तथा ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, यम कोई भी बचने न पाएँ। तुम्हारे वहाँ पहुँचने पर विश्वेदेवा आदि तुम्हारी स्तुति करेंगे। परन्तु तुम उन्हें भी भस्म करके शीघ्र ही मेरे पास चले आना। जो देवता दधीचि ऋषि के कहने पर भी मेरे विरोधक बने वहाँ बैठे हैं उन्हें आकुल कर अग्नि में जला डालना और हे वीर! दक्ष को तो उसकी पत्नी और बान्धवों सहित जलाकर पुनः तिल मिलाकर तिलांजलि दे आना। वीरभद्र से ऐसा कहकर क्रोध से आँखें लाल किए हुए भगवान् शंकर मौन हो गए।

अब शिवजी को प्रणाम कर वीरभद्र अन्य प्रबल गणों और देवियों को साथ लेकर दक्ष का यज्ञ विध्वंस करने चला। जैसे ही वीरभद्र पहुँचा, वैसे ही

इन्द्र, विष्णु आदि सभी देवताओं का परिहास किया तथा युद्ध के लिए ललकारा। फिर एक-एक करके सभी देवताओं को अपने त्रिशूल से मार घायल कर पृथ्वी पर गिरा दिया। अब इस भयानक मार से सब देवता भाग चले।

वीरभद्र का युद्ध और यज्ञ विध्वंस—इसके बाद अपने गणों सहित वीरभद्र यज्ञ मण्डल में पहुँचा। युद्ध से भागे देवता भी यह समाचार देने के लिए पहले ही विष्णु के पास पहुँचे और कहा कि हे रमानाथ! जैसे भी हो इस यज्ञ की रक्षा कीजिए। तब ऋषियों के ऐसा कहने पर विष्णु जी वीरभद्र से युद्ध करने के लिए चले। उन दोनों का बड़ा भयंकर तथा लोमहर्षण युद्ध हुआ। उस युद्ध में वीरभद्र ने भगवान् शंकर का स्मरण कर विष्णु के सभी पार्षदों को अपने त्रिशूल से मार-मार कर सुला दिया। पुनः विष्णु के वक्षस्थल में त्रिशूल मारा, इससे विष्णु मूर्छित हो पृथ्वी पर गिर पड़े। पुनः होश आने पर उठकर अपना सुदर्शन चक्र ले वीरभद्र को मारने दौड़े। परन्तु वीरभद्र ने अपने अद्भुत तेज से चक्र को वहीं रोक दिया, वह विष्णु के हाथ में ही रह गया, विष्णु भी वहीं रुके रह गए। उनका स्तम्भन हो गया। यह देख याज्ञिकों ने यज्ञ मन्त्रों का प्रयोग कर विष्णु का स्तम्भन छुड़ाया। पुनः विष्णु ने अपना शार्ंगधनुष उठा उस पर बाण चढ़ाया। तब तक वीरभद्र ने तीन बाण मार कर उनके धनुष के तीन टुकड़े कर दिए। अब ब्रह्मा ने विष्णु से शिवजी के उस महागण का परिचय दिया। विष्णु भी उस वीर को असह्य और अजेय जानकर अन्तर्धान हो अपने लोक को चले गए और ब्रह्मा भी पुत्र शोक से पीड़ित ब्रह्मलोक को चल दिए तथा सोचने लगे कि अब क्या करना चाहिए। तब इन दोनों ब्रह्मा और विष्णु के चले जाने पर वीरभद्र ने सबको जीतकर भृग रूप धारण कर भागते हुए यज्ञ भगवान् को पकड़ा और उनका सिर काट डाला तथा प्रजापति, धर्म, कश्यप और अरिष्टनेमि आदि मुनियों को पकड़कर उन्हें लातों से मारा। देवमाता सरस्वती की नाक अपने नखों के अग्रभाग से काट डाली और अन्य देवताओं को भी पृथ्वी पर पटक-पटक मारा। मणिभद्र नामक प्रतापी गण ने भृगु जी की छाती पर पैर रखकर उनकी दाढ़ी उखाड़ डाली। पूषा शिवजी के शापित होने पर हँसे थे इसलिए चण्ड नामक गण ने उनके दाँत उखाड़ लिए। फिर कुपित शिवजी के गणों

ने दक्ष के यज्ञ में मलमूत्र की वर्षा कर उसे भ्रष्ट कर दिया और जो दक्ष यज्ञ बेदी के भीतर जा छिपा था उसे वहाँ से पकड़ वीरभद्र ने उसकी छाती पर चढ़कर हाथ से ही उसका शिर मरोड़कर तोड़ डाला और अग्नि कुण्ड में फेंक दिया। इस प्रकार शिवजी के आदेशानुसार सब कार्य कर वीरभद्र कैलाश जा पहुँचे और सारा समाचार उनके निवेदन किया। शिवजी ने प्रसन्न हो उसे अपने गणों का नायक बना दिया।

ब्रह्मा जी का उद्योग—उधर जब रुद्र की सेना से घायल देवताओं ने ब्रह्मा जी से जाकर दक्ष यज्ञ विध्वंस का समाचार कहकर दक्ष के मारे जाने का समाचार दिया तो उनको बड़ा क्रोध हुआ। ब्रह्मा सोचने लगे कि अब देवताओं को सुखी करने के लिए मैं क्या करूँ कि दक्ष भी जीवित हो जाए और उसका यज्ञ भी पूर्ण होए। तब श्री सहित विष्णु का ध्यान ब्रह्मा जी करने लगे जिससे उनको ज्ञान हुआ। अब वे बैकुण्ठ लोक को गए और विष्णु भगवान् की स्तुति की तो उन्होंने ब्रह्मा से कहा कि दक्ष ने बहुत बड़ा अपराध किया जो अपने यज्ञ में शिवजी को भाग नहीं दिया, साथ ही परमेश्वरी सती का अपमान किया जिसके लिए हम सभी देवता शिवजी के अपराधी हैं। अतएव अब आप, हम और सभी देवता शिवजी की शरण में जाकर उनका चरण पकड़ उन्हें प्रसन्न करें तभी शान्ति होगी, अन्यथा प्रलय हो जाएगी। ऐसा कह भगवान् विष्णु, ब्रह्मा जी तथा अन्यान्य देवता कैलाश पर जाते गए। अलकापुरी से आगे उस विशाल वटवृक्ष के पास ये लोग पहुँचे जहाँ दिव्य योगियों से सेवित श्रेष्ठ शिवजी विराजमान थे, उनके चारों ओर उनके गण और यज्ञों के स्वामी कुबेर विराजमान थे। तब उनके निकट पहुँचकर विष्णु आदि समस्त देवताओं ने बार-बार नमस्कार कर उनकी अनेक विभूतियों और नामों सहित स्तुति की और कहा कि हे दया सागर, हे महेश्वर! आपकी कृपा के बिना हम सब नष्ट-भ्रष्ट हो गए हैं। अब हम आपकी शरण आए हैं, आप प्रसन्न होकर हमारी रक्षा कीजिए। हे शंकर जी! हमें अनेक आपत्तियों से बचाइए। हे नाथ! आप प्रसन्न होकर दक्ष के यज्ञ को पूर्ण करें। भग देवता की पहले जैसी आँखें हो जाएँ, यजमान जीवित हो, पूषा के दाँत हो जाएँ तथा भृगु की दाढ़ी फिर पहले के ही समान ठीक हो जाए। आपकी कृपा से इन

देवताओं को आरोग्यता लाभ हो। हम लोग इस अवशिष्ट यज्ञ कर्म में आपको भाग देंगे। इस प्रकार सभी देवता श्री विष्णु सहित शिवजी के चरणों में प्रणाम करके बारम्बार विनती करने लगे।

चतुर्भुज विष्णु आदि सभी देवताओं के इस प्रकार की स्तुति से भगवान् शंकर प्रसन्न हो देवताओं को धैर्य बँधाते हुए बोले कि हे देवो! सुनो, मैं तुम पर क्रुद्ध हूँ फिर भी तुमको क्षमता करता हूँ। दक्ष के यज्ञ को मैंने विध्वंस नहीं किया है, किन्तु जो दूसरों का बुरा चाहता है उसी का बुरा हो जाता है। देखो दक्ष ही उस यज्ञ का शिर है, अतएव उसका बकरे जैसा शिर होगा। भग देवता सूर्य के नेत्र से यज्ञ भाग को देखेंगे तथा पूषा के टूटे हुए दाँत ठीक हो जाएँगे और यजमान के दिए हुए यज्ञ के भाग का उपयोग कर सकेंगे—यह मैं सत्य कहता हूँ। मेरा विरोधक भृगु बकरे की सी दाढ़ी पाएगा और मेरे गणों द्वारा मारे गए देवताओं के टूटे हुए अंग भी ठीक हो जाएँगे और सभी अध्वर्यु प्रसन्न होंगे।

शिव द्वारा दक्ष को जीवन दान—यह कहकर वेदों के अनुसरणकर्त्ता, परम दयालु, चराचरपति, भगवान् शंकर मौन हो गए। तब उनका यह कहना सुन देवताओं को बड़ी प्रसन्नता हुई तथा सबने शिवजी को धन्यवाद दिया। पुनः देवर्षियों सहित शिवजी को उस यज्ञ में आने के लिए आमन्त्रित कर ब्रह्मा, विष्णु तथा समस्त देवगण कनखल नामक स्थान में जहाँ दक्ष ने यज्ञ आरम्भ किया था, गए। भगवान् शंकर ने वहाँ पहुँचकर वीरभद्र द्वारा भंग यज्ञ का निरीक्षण किया और देखा कि स्वाहा, स्वधा, पूषा, दृष्टि, धृति सरस्वती और सभी ऋषि, पितर सभी टूटे-फूटे अंग लिए और कोई मरे हुए पड़े हैं। यज्ञ की यह दशा देखकर वीरभद्र को बुला भगवान् शंकर ने हँसकर उससे कहा कि यह तुमने क्या किया, ऋषियों को इतना कठिन दण्ड इतने शीघ्र दे डाला। अच्छा तो अब तुम शीघ्र ही दक्ष का मृतक शरीर लाओ। वीरभद्र ने शीघ्र ही शिर रहित दक्ष का शरीर उनके सामने रख दिया। तब उसे शिर रहित देख शिवजी ने पूछा कि इसका शिर कहाँ है? वीरभद्र ने सविनय उत्तर दिया कि उसे तो मैंने पहले ही अग्नि में हवन कर दिया है। अब शिवजी ने देवताओं से कहा—देखो, मैंने जो पहले कहा था

वही हुआ। पुनः भगवान् शंकर ने यथोचित पशु अर्थात् बकरे का शिर लेकर प्रजापति दक्ष के शिर पर जोड़ दिया और ज्यों ही कृपा दृष्टि से देखा वह जीवित होकर उठ बैठा। उसने उठते ही प्रसन्नन चित्त हो शंकर भगवान् का दर्शन किया, उसका कलुषित हृदय निर्मल हो गया। फिर भगवान् शिव की विनम्र भाव से स्तुति करने लगा। ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्रादि देवताओं ने भी शंकर जी की स्तुति की।

शिवजी की विनम्रता—इसके बाद भगवान् शंकर अत्यन्त दुखित और उदास उस यज्ञ शाला में गए। वहाँ उन्होंने देखा कि सती का चिन्मय शरीर (जीव) अग्नि में जल गया है, तब 'हा सती' ऐसा बार-बार पुकारते हुए उस मृत शरीर को उठाकर अपने कन्धे पर रख लिया तथा विक्षिप्त से होकर इधर-उधर देश-देश्न में भटकने लगे। इससे संसार चक्र रुक गया और प्रलय सा होने को हो गया।

विष्णु द्वारा सती के अंगों को काटना—अब ब्रह्मा आदि देवताओं के मन में अत्यन्त भय और चिन्ता समा गई। वे सब भगवान् विष्णु से प्रार्थना करने लगे कि हे विष्णु भगवान्! अब कोई ऐसा उपाय करें कि शिव सती को भूलकर पूर्ववत् हो जाएँ। भगवान् ने मुस्करा कर कहा कि हे देवताओं! न तो शिव को सती भूल सकती है और न ही सती को शिव। ये दोनों अब भी एक हैं। ऐसा कह शिव-शिवा का स्मरण कर तुरन्त उन्होंने अपने सुदर्शन चक्र से भगवती सती के अंगों को काट डाला जिससे वे अंग छिन्न-भिन्न होकर अनेक स्थानों पर जा गिरे। अतः जहाँ कहीं वे शरीर खण्ड गिरे वहीं शंकर जी की अनेक मूर्तियाँ प्रकट हो गईं।

शिव द्वारा देवी-पीठों की मान्यता—तब शिव ने देवताओं से कहा—जो इन स्थानों पर भक्तिपूर्वक भगवती शिवा की उपासना करेंगे, उनके लिए संसार में कोई भी पदार्थ दुष्प्राप्य न होगा। क्योंकि जहाँ-जहाँ शक्ति ने अपना शरीर खण्ड त्यागा है वहाँ-वहाँ जगदम्बा निरन्तर निवास करेंगी और वे स्थान 'सिद्ध देवी पीठ' के नाम से प्रसिद्ध होंगे। और उन पीठों में काशी तथा कामाख्या प्रमुख होंगे। इन सभी स्थानों (पीठों) में रहकर जो मनुष्य पुरश्चरण (अनुष्ठान) करेंगे, उनके मन्त्र सिद्ध होने में कोई सन्देह नहीं रहेगा। भगवान्

शंकर इतना कह विरह से अधीर हो शिव ने उन-उन स्थानों में जप, ध्यान तथा समाधि द्वारा समय व्यतीत किया। अब जिन-जिन पीठों में देवी के जो-जो अंग गिरे उनके नामा के साथ तथा जो शंकर (भैरव) वहाँ प्रकट हुए उनका वर्णन इस प्रकार है—

५२ शक्ति पीठ

क्र. सं.	*स्थान का नाम*	*देवी के अंग*	*देवी तथा भैरव (शिव) का नाम*
१.	हिंगुला	सती का ब्रह्मरन्ध्र	देवी कोटारी और भीमलोचन भैरव हैं।
२.	(करबीये) शर्कराय	तीनों चक्षु	देवी महिषमर्दिनी और क्रोधिश भैरव हैं।
३.	सुगन्धाय	नासिका	देवी सुगन्धा और त्र्यम्बक भैरव हैं।
४.	काश्मीर	कण्ठ	देवी भगवती व महामाया और त्रिसन्धेश्वर अमरनाथ तीर्थ भैरव हैं।
५.	ज्वालामुखी	जिह्वा	देवी अम्बिका और उन्मत्त भैरव हैं।
६.	जलन्धर	वाम स्तन	देवी त्रिपुरमालिनी और भीषण भैरव हैं।
७.	वैद्यनाथ	हृदय	देवी जयदुर्गा और भैरव वैद्यनाथ हैं।
८.	नेपाल	दोनों जाँघे	देवी महामाया और कपाली भैरव हैं।
९.	मानव क्षेत्र	बाएँ हाथ का आधा भाग	देवी दाक्ष्णाइणी और अमर भैरव हैं।
१०.	उत्कल (विराज क्षेत्र)	नाभि	देवी विमला और जगन्नाथ भैरव हैं।
११.	गण्डकी नदी के मध्य	दाहिना गाल	देवी गण्डकी चंडी और चक्रपाणि भैरव हैं।
१२.	बेहुलाय	वाम बाहु	देवी बहुला और भीरुख भैरव हैं। (कटवा पश्चिम में केतु ग्राम-बर्दवान जिला)

१३. उज्जैनी	दक्षिण कोहनी	देवी मंगलचण्डी और कपिलाम्बर भैरव हैं।
१४. चटगाँव	दाहिने हाथ का आधा भाग	देवी भवानी और चन्द्रशेखर भैरव हैं।
१५. करनाट	दोनों कान	देवी जयदुर्गा और अभीरुख भैरव हैं।
१६. त्रिपुरा	दाहिना चरण	देवी त्रिपुर सुन्दरी और त्रिपुरेश भैरव हैं।

(यह स्थान भी कामरूप देश में ही आता है और कामाख्या योनि मण्डल के अन्तर्गत है।)

१७. त्रिसोताय	वामपाद	देवी भ्रामरी और ईश्वर भैरव हैं।
१८. कामरूप (कामाख्या)	महामुद्रा (योनिपीठ)	देवी कामाख्या और उमानन्द भैरव हैं।
१९. प्रयाग	दोनों हाथों की अंगुलियाँ	देवी ललिता और भव भैरव हैं।
२०. जयन्ती	वामजंघा	देवी जयन्ती और क्रमदीश्वर भैरव हैं।
२१. कालीघाट	दाहिने पैर की अंगुलियाँ	देवी कालिका और नकुलेश्वर भैरव हैं।
२२. किरीट	देवों का मुकुट	देवी विमला और सम्बर्थ भैरव हैं।
२३. वाराणसी	कान का कुण्डल	देवी विशालाक्षी और काल भैरव हैं।
२४. कोन्नाश्रम	पीठ	देवी सर्वाणि और निमिष भैरव हैं।
२५. कुरुक्षेत्र	दाहिने पैर का गुल्फ (एड़ी)	देवी सावित्री और स्थान भैरव हैं। (अश्वनाथ)
२६. मणिबंध	कर ग्रन्थि	देवी गायत्री और सर्वानन्द भैरव हैं। (पुष्कर)
२७. श्रीहट्ट	ग्रीवा	देवी महालक्ष्मी और सम्बरानन्द भैरव हैं।
२८. कांची देश	शरीर के हड्डी का ढाँचा	देवी वेदगर्भा और रुरु भैरव हैं। (पश्चिम बंगाल बोलपुर)

२९. कालमाधव	वाम नितम्ब	देवी काली और असितंग भैरव हैं।
३०. सोननद	दक्षिण नितम्ब	देवी नर्मदा और भद्रसेन भैरव हैं।
३१. रामगिरि	दक्षिण स्तन	देवी शिवानी और चन्द्र भैरव हैं।
३२. वृन्दावन	केश	देवी उमा और भूतेश भैरव हैं।
३३. सूचीदेश	ऊर्ध्वदन्त पंक्ति	देवी नारायणी और संहार भैरव हैं।
३४. पंच सागर	आखोदन्त (चौघड़)	देवी वाराही और महारुद्र भैरव हैं।
३५. करोनवा नदी के किनारे	जरायु	देवी अर्पणा और वामन भैरव हैं।
३६. श्री पर्वत	दक्षिण गुल्फ	देवी सुनन्दा और नन्द भैरव हैं। (लद्दाख)
३७. विभाषके (तमलुक)	वाम गुल्फ	देवी भीमरूपा और सर्वानन्द भैरव हैं।
३८. प्रभास	उदर	देवी चन्द्रभागा और रुक्कुतुन्द्रा भैरव हैं। (मथुरा)
३९. भैरव पर्वत	ऊर्ध्व ओष्ठ	देवी महादेवी और लम्बकर्ण भैरव हैं।
४०. मगध	दक्षिण जंधा	देवी सर्वानन्दकरी और व्योमकेश भैरव हैं।
४१. जनस्थान	चिबुक (ठुड्ढी)	देवी भ्रमारी और विक्रीतक्ष भैरव हैं। (खानदेश)
४२. गोदावरी तीर	वाम गंड	देवी विश्वमातृका और दन्तपाणि भैरव हैं।
४३. रत्नावली	दक्षिण स्कन्ध	देवी कुमारी और शिव भैरव हैं। (मद्रास)
४४. खीरग्राम	दाहिने पैर का अंगूठा	देवी योगाद्या और क्षीर खण्डक भैरव हैं।
४५. मिथिला	वाम स्कन्ध	देवी महादेवी और महोदय यहाँ के भैरव हैं।

४६. नलहटी	कंठनली	देवी कालिका और योगीश भैरव हैं।
४७. कालीघाट	मुंड	देवी जयदुर्गा और क्रोधिश भैरव हैं। (कटवा)
४८. बक्रेश्वर	मनः भ्रूमध्ये	देवी महिष मर्दिनी और बक्रनाथ भैरव हैं। (दुवराजपुर)

(इसी स्थान पर महामुनि अष्टावक्र ने सिद्धि प्राप्त की थी।)

४९. जशोर (ईश्वरीपुर)	पानीपद्म	देवी यशोश्वरी और चण्ड भैरव हैं।
५०. अट्टहास	अधः ओष्ठ	देवी फुल्लरा और विश्वेश भैरव हैं।
५१. नन्दीपुर	गले का हार	देवी नन्दिनी और नन्दिकेश्वर भैरव हैं। (सैंथिया)
५२. (क) लंका	नूपुर	देवी इन्द्राक्षी और राक्षेश्वर भैरव हैं।
(ख) विराट	वामपादांगुली	देवी अम्बिका और अमृत भैरव हैं।

ध्यान

ॐ उत्तप्तहेमरुचिरां रविचन्द्र वह्नि नेत्रां धनुश्शरयुतांकुशपाशशूलम्। रम्भैर्भुजैश्च दधतीं शिवशक्तिरूपां कामेश्वरी हृदि भजामि धृतेन्दुलेखाम्॥

मैं उस शिवशक्ति रूपा कामेश्वरी भगवती का हृदय में भजन करता हूँ, जो तपाए हुए स्वर्ण की भाँति मनोहर गौर रूपा हैं, सूर्य, चन्द्रमा एवं अग्नि जिनके तीन नेत्र हैं, जिसने चन्द्रमा की रेखा मस्तक पर धारण की हुई हैं और मनोहर भुजाओं से धनुष, बाण, अंकुश, पाश तथा शूल धारण किए हुए हैं।

वर देने में देवी का एकाधिकार

कथा प्रसंग (१)

आशुतोष भगवान् शंकर औघड़दानी, शीघ्र प्रसन्न होने वाले और अपने आशीर्वाद और वर से ब्रह्मा की भाग्य लेखनी को भी मिटा देने वाले हैं, यह बात सर्वविदित है। एक बार उनकी इस प्रक्रिया से क्षुब्ध होकर ब्रह्मा जी

भवानी के पास जाकर इसी बात को निवेदन करते हुए बोले—देवि! आपने हमें जो कार्य सृष्टि क्रम का सौंपा है उसमें भोलेनाथ विघ्न डाल रहे हैं। मैं भाग्य में आयु लिखता हूँ, परन्तु शिवजी शीघ्र प्रसन्न होकर अधिक आयु दे देते हैं। इससे मेरी लेखनी मिट जाती है, इतना ही नहीं भगवान् विष्णु का काम 'पालन करने का' भी बढ़ जाता है। पूर्व जन्म के पाप-पुण्य के कारण जो भी सुख-दु:ख प्राणियों के भाग्य में लिख देता हूँ, वे मनुष्य मृत्युलोक वासी भगवान् शिव को प्रसन्न कर कालचक्र को अपने पक्ष में कर लेते हैं। शिवजी अपनी संहार शक्ति का भी प्रयोग नहीं करते साथ ही वह बात आपकी आज्ञा का उल्लंघन भी है। अत: यह कार्य अब मैं नहीं करूँगा। इससे मेरा महत्त्व घटता है।

ब्रह्मा जी की यह बात सुनकर देवी मुस्कराईं और बोलीं—हे चतुर्मुख! यह मत भूलो कि तुम तीनों त्रिदेवों को उत्पन्न करने वाली और महत्त्व देने वाली मैं ही हूँ। मेरी शक्ति से तुम लोग अपना कार्य करते हो। तुम तीनों में सत्व, रज और तम रूप से विद्यमान होकर मैं ही सृष्टि रचती हूँ, पालन करती हूँ और संहार करती हूँ। मैं अपनी शक्ति तुमसे छीन लूँ तो तुम तीनों निष्प्राण हो जाओ। अत: तुम्हारे द्वारा विष्णु अथवा शिवजी के द्वारा कृत कार्य मेरी ही प्रेरणा से होता है। परन्तु फिर भी मैं शिवजी को यह सीख दूँगी कि फिर वे कभी इतनी जल्दी प्रसन्न होकर वरदान न दें। केवल मैं ही जब चाहूँ जैसे भी वर दूँगी, इतना ध्यान रहे। क्योंकि मेरे लिए तुम्हारी 'भाग्य की लेखनी' क्या चीज है; जबकि मैं तुम्हें भी मिटा सकती हूँ। मेरे लिए कुछ भी असम्भव नहीं है। यह सुनकर बिचारे ब्रह्मा जी ब्रह्मलोक को लौट आए और सृष्टि रचना का अपना काम ज्यों का त्यों करने लगे।

इसी समय भस्मासुर ने भगवान् शिवजी को तपस्या कर प्रसन्न कर लिया। शिवजी ने उसे दर्शन देकर वर माँगने को कहा। देवी की प्रेरणा से उसने वर माँगा कि मैं जिसके भी सिर पर अपना हाथ रखूँ वह भस्म हो जाए। शिवजी ने 'तथास्तु' कहा। भस्मासुर को पार्वती की सुन्दरता का ज्ञान पहले से था। उसके मन में आया कि वरदान को इन्हीं पर आजमाकर इन्हें भस्म करूँ तथा पार्वती को अपना लूँ। बस फिर क्या था? अपना हाथ शंकर जी की

ओर बढ़ाते हुए दौड़ा। शंकर जी भागे, भागते गए। भस्मासुर भी बराबर इनके पीछे लगा रहा, खदेड़ता रहा। शंकर जी अपने को बचाने के लिए थोड़ा साँस लेने के लिए खड़े भी न हो सके। उन्हें अपनी 'संहार शक्ति' का ध्यान भी न रहा। अन्त में वे भागते-भागते थक गए तो उन्हें भगवती का ध्यान आया, स्मरण किया।

तब देवी ने विष्णु को प्रेरित किया। भगवान् विष्णु पार्वती बनकर मार्ग में खड़े हो गए। भस्मासुर के पास आते ही पार्वती रूप विष्णु बोले कि अरे भाई! कहाँ भाग रहे हो? मैं तो तुम्हें ही खोज रही थी, मैं तुमको चाहती हूँ। क्या तुम शंकर के पीछे जा रहे थे? क्यों? अरे! वह तो बावला है, भांग धतूरे में मस्त रहने वाला। विष्णु की इस मर्म भरी बात को वह कामातुर भस्मासुर समझ न सका। उसको भी बिना प्रयत्न के मनचाही चीज मिल गई थी। रुककर कहा—देवि! मैं भी तुम्हें महारानी बनाना चाहता हूँ। चलो मेरे संग। पार्वती के भेष में विष्णु बोले कि ठीक है; मैं चलने को तैयार हूँ। परन्तु वर चाहने वाली कन्या को इतना तो अधिकार दीजिए कि उसके होने वाले पति में वे सभी गुण हैं या नहीं जो वह चाहती है, इसकी जानकारी अच्छी प्रकार कर ले। तो शंकर जी के सभी गुण या उससे अधिक तुममें हैं या नहीं? इस पर भस्मासुर बोला—देवि! मैं तुम्हारे शंकर जी से किसी भी प्रकार कम नहीं हूँ। अतः तुम्हीं देख लो कि मैं तुम्हारे योग्य हूँ या नहीं? अब पार्वती रूपधारी विष्णु बोले कि मुझे शंकर जी का वह नाच बड़ा अच्छा लगता है जब वह सिर पर अपना दाहिना हाथ रखकर दाएँ पैर को तोड़ ऊपर कर तथा बाएँ हाथ के अँगूठे और अनामिका को मिला बाहर आगे की ओर करके नाचते थे। तो तुम पहले उस प्रकार का नाच नाचकर भाव-भंगिमा के साथ दिखाओ। बस फिर क्या था? भस्मासुर भी देवी की प्रेरणा से अपने प्राप्त वर को भूल गया तथा जैसे ही नाचने की मुद्रा बनाते हुए अपना हाथ सिर पर रखा वैसे ही भस्म हो गया।

उसी समय से औघड़दानी शिव बहुत सम्भल करके वर देने लगे। इस प्रकार देवी की माया से ब्रह्मा जी की शिकायत दूर हो गई तथा शिवजी अपनी संहार शक्ति का प्रयोग ब्रह्मा जी के लेखनी के मेल से करके सृष्टि क्रम

चलाने में योगदान देने लगे।

कथा प्रसंग (२)

जब-जब ब्रह्मा, विष्णु, महेश तथा अन्य देवता या उनके भक्त किसी कार्य को करने में असमर्थ होते हैं या कोई आपत्ति में पड़े होते हैं तब तब ये उस शक्ति की ही प्रार्थना करते हैं और देवी भी इन्हें तथा अपने भक्तों को दर्शन देकर उनके दुःख और कष्ट को दूर करती हैं ऐसा करने के लिए वह वचनबद्ध हैं। स्त्री वामांगी कही जाती है अतः ब्रह्म के भी स्त्री पुरुष भेद से दो अंग हैं। दाहिना अंग उनका पुरुष का तथा बायाँ स्त्री का अंग शास्त्रों में बताया गया है। इसमें भी बायाँ अंग ही प्रधान माना गया है। देखिए जब भी हम किसी देवी-देवता का नाम लेंगे तो पहले उसकी शक्ति का तब उसका; क्योंकि बिना शक्ति के किसी देवता का कोई अस्तित्व ही नहीं है जैसे—प्रकृति-पुरुष, लक्ष्मी-नारायण, वाणी-हिरण्यगर्भ, उमा-महेश्वर, शची-पुरन्दर, सीता-राम, राधे-श्याम आदि। रावण के अत्याचार से दुःखी हो सब देवताओं के प्रार्थना करने पर भगवती को सीता के रूप में उत्पन्न होना पड़ा और उनकी प्रेरणा से भगवान् विष्णु को राम बनना पड़ा। महिरावण ने तो राम की तथा उनकी सारी सेना को परास्त कर दिया था उसी समय सीता जी ने काली का रूप धारण कर महिरावण का वध किया और देवताओं को अभय किया।

दक्ष प्रजापति ने देवी की आराधना की थी और देवी को भी कन्या रूप में वर माँगा था, उसी वर के फलस्वरूप उमा रूप में देवी ने उनके यहाँ जन्म लिया। शंकर जी के साथ उनका विवाह हुआ बाद में उनके पिता को मोह पैदा हुआ और यज्ञ करके उमा-महेश्वर का अपमान किया। शक्ति के न होने से शिवजी मोहवश उनके शरीर को कन्धे पर लेकर दौड़ने लगे। इससे सारा त्रयलोक का कार्य ठप्प पड़ गया। देवी की सृष्टि में यह व्यतिक्रम को समाप्त करने के लिए विष्णु ने उमा के शरीर को अपने सुदर्शन चक्र से टुकड़े-टुकड़े कर डाला। इस प्रकार जहाँ-जहाँ उमा के शरीर के अंग गिरे वहाँ-वहाँ उस स्थान के नाम से देवी की पूजा होने लगी। इसके साथ ही शंकर ने यह भी कहा कि इन स्थानों पर देवी सशरीर रहकर भक्तों की मनोकामनाएँ पूरी करेंगी। मैं भी उन स्थानों पर सदैव विद्यमान रहूँगा। इस प्रकार कामाख्या,

शताक्षी, मीनाक्षी, लिंग धारिणी आदि देवियाँ एक ही हैं।

इसके बाद देवी ने पार्वती रूप धारण किया। उसी शरीर कोश से श्री अम्बिका जी का प्राकट्य शुम्भ-निशुम्भ के वध के लिए हुआ। महिषासुर के वध के लिए अपराजिता देवी सकल देवताओं के शरीर से प्रकट हुईं। दुर्गा सप्तशती के ११वें अध्याय में सभी देवताओं ने मिलकर उनकी स्तुति की तथा वरदान प्राप्त किया। इसी प्रकार जब राजा सुरथ और समाधि नाम के वैश्य के आराधना से प्रसन्न होकर प्रत्यक्ष देवी ने दर्शन दिया और कहा— "मत्तस्तत्प्राप्यतां सर्वं परितुष्टा ददामि तत्" अर्थात् मैं तुमसे प्रसन्न हूँ, तुम जो भी माँगोगे, वह सब कुछ दूँगी। इस प्रकार हम देखते हैं कि भक्तिपूर्वक देवी की पूजा अर्चना करने से देवी प्रसन्न होकर साधक को सब कुछ देने को सदैव तैयार रहती हैं।

देवी को प्रसन्न करने के लिए यन्त्र-मन्त्र-तन्त्र आदि हैं। जो वस्तु स्तुति, प्रार्थना मन्त्रादि देवी को पसन्द हैं उनको करने से वे तुरन्त अचूक फल दिखाती हैं।

अतः शास्त्रों में बताई गई विधि अनुसार अथवा गुरु के आदेशानुसार कार्य से निश्चय ही सफलता प्राप्त होती है।

हे कामाक्षा मां! अपने सभी भक्तों के ऊपर शीघ्र प्रसन्न होकर उन्हें दर्शन दीजिए और आनन्द दीजिए। क्योंकि आपका प्रण है कि आप अपने भक्तों को सदैव सब प्रकार से रक्षा करेंगी।

अतः इस पृथ्वी पर साक्षात् प्रकट उन कामाख्या देवी को हमारा कोटि-कोटि प्रणाम।

कामरूप कामाख्या का परिचय

कामरूप कामाख्या का स्थान आसाम प्रदेश में है। आसाम का प्राचीन नाम कामरूप देश है। नदी, पहाड़ों जंगलों और घाटियों से सुशोभित यह देश सदैव ही मनुष्य को अपनी ओर आकर्षित करता रहा है। यहाँ के निवासी भी अत्यन्त सुन्दर होते हैं। इस समय यह देश पाँच छह भागों में बँट गया है। तात्पर्य यह है कि इस समय का असम, मेघालय, त्रिपुरा, मणिपुर, नागालैण्ड

और मणिपुर प्रदेश तत्कालीन कामरूप देश ही था। आधुनिक असम प्रदेश का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

यह प्रदेश भारत के पूर्वी भाग में है। यह तीन ओर पहाड़ियों से घिरा है पर इसका काफी भाग मैदानी है। यह मैदान यहाँ की प्रमुख नदी ब्रह्मपुत्र भारत की महानदियों में से एक है। इसका पाट अपने देश के सभी नदियों में सबसे अधिक चौड़ा है। इस नदी के बहुत चौड़े होने के कारण इसके आर-पार जाने के लिए अभी तक एक ही पुल बन सका है। ब्रह्मपुत्र की धारा भी बहुत तेज है। यह बहुत गहरी भी है, इसीलिए इसमें समुद्र से गुवाहाटी नगर तक स्टीमर चले जाते हैं।

यहाँ दो मौसम होते हैं—१. अक्टूबर से फरवरी तक जाड़ा और २. मार्च से सितम्बर तक गरमी। यहाँ कुछ ऐसे भाग भी हैं जहाँ एक बार वर्षा शुरू हो जाती है तो कभी-कभी महीने भर तक सूर्य भगवान् के दर्शन नहीं होते। घनघोर वर्षा के साथ बादलों का गर्जन होता रहता है। अधिक वर्षा के कारण कई जगह साल भर दलदल बने रहते हैं। इन दलदलों में यदि मनुष्य या पशु फँस जाए तो उनसे जान बचाकर निकल आना बड़ा कठिन होता है।

चारों ओर से वर्षा का पानी बह-बहकर इस नदी में इस तेजी से इकट्ठा होता है कि प्रतिवर्ष की इसमें बाढ़ आती है। यह नदी अपने किनारे को तेजी से काटा करती है और देखते ही देखते किनारों के गाँव के गाँव बह जाते हैं। नदी बराबर अपना रास्ता बदलतती रहती है। यही कारण है कि इस नदी के किनारे बड़े-बड़े नगर बहुत कम हैं। इस नदी की बाढ़ से बहुत हानि तो अवश्य होती है किन्तु इससे एक बड़ा लाभ यह हे कि नदी बाढ़ के बाद अपनी घाटी में उपजाऊ मिट्टी छोड़ जाती है। इसमें धान और पटसन खूब पैदा होता है। इस प्रदेश की यही मुख्य उपजें हैं। यहाँ केला, अनानास, कटहल, सन्तरा आदि फल बहुत होते हैं।

पहाड़ी ढालों पर चाय के बाग है। चाय की पत्तियाँ औरतें और बच्चें तोड़ते हैं। वे अपनी पीठों पर बँधी टोकरियों में इन्हें इकट्ठा करते हैं। इन पत्तियों से वह चाय बनती है जिसे हम अब पीते हैं।

असम घने जंगलों का प्रदेश है। कुछ भागों में घास भी इतनी घनी

और ऊँची होती है कि इसमें हाथी तक छिप सकते हैं। इन जंगलों और घास के वनों में अनेक प्रकार के पशु पाए जाते हैं। चीता, गैंडा, हाथी, विसन, भालू और लाल लंगूर यहाँ के मुख्य जंगली जानवर है। जंगलों में अनेक प्रकार के साँप और नदियों में मगर भी देखने को मिलते हैं। कुछ वनों के पेड़ों की लकड़ी इतनी कड़ी होती है कि उसे कुल्हाड़ी से काटना कठिन होता है। इन लकड़ियों के लट्ठे लोहे के गार्डरों की तरह मकान की छतों में तथा रेल की पटरी के नीचे स्लीपर के रूप में प्रयोग होते हैं। इस लकड़ी को जंगलों से ढोने में हाथी बहुत काम आता है। कई जगहों बाँसों के वन भी है। कुछ वन ऐसे भी है जिनके पेड़ों की लकड़ी बहुत मुलायम होती है। इस लकड़ी से दियासलाई की डिबियाँ तथा तिलियाँ बनाई जाती है। इससे तथा यहाँ के घासों से और बाँसों से कागज और दफ्ती भी बनते हैं। किन्हीं किन्हीं वनों में बेंत भी खूब होता है। इसकी छाल से बने तार कुर्सियाँ बुनने के काम आते हैं।

असम प्रदेश में शहतूत के बाग लगाने का बड़ा रिवाज रहा है। शहतूत की पत्तियों पर रेशम के कीड़े पाले जाते हैं। उनसे रेशम भी प्राप्त किया जाता है और सुन्दर रेशमी कपड़े बनते हैं। इस प्रदेश की भूमि में कई स्थानों पर पेट्रोलियम बहुतायत से मिलता है। यह अधिक गहराई में पम्पों द्वारा ऊपर निकाला जाता है और साफ करके पेट्रोल और मिट्टी का तेल आदि बनाया जाता है।

देहातों में जहाँ भूमि बहुत नम होती है, वहाँ कीड़ों मकोड़ों से बचने के लिए मकान भूमि से कुछ ऊँचाई पर बनाए जाते हैं। ये अधिकतर लकड़ी के बने होते हैं। ऊपर ढालदार काँस की छाजन होती है। इनकी दीवारें भी बाँस और घास-फूँस की बनी होती है। यहाँ के पुरुष लोग अधिकतर धोती और कुरता पहनते हैं। स्त्रियाँ ऊँचा घाघरा और सीनाबन्द कमीज पहनती है। कहीं-कहीं स्त्रियाँ बच्चों को पीठ पर बाँधे हुए काम काज में लगी रहती हैं।

असम के लोग उत्सवों के बहुत शौकिन होते हैं। स्थान-स्थान पर दुर्गा-पूजा और सरस्वती-पूजा के उत्सव बड़ी धूम-धाम से मनाए जाते हैं। यहाँ के लोग जादू-टोना, झाड़-फूंक, मन्त्र-तन्त्र में बड़ा विश्वास करते हैं।

ये सभी 'शाक्त-सम्प्रदाय' के होते हैं और गुरु भी उसी सम्पद्राय का ही रखते हैं। 'बिहू' यहाँ का मुख्य त्योहार है। इस त्योहार में युवक-युवतियाँ रात भर नाचते हैं। इनके नृत्यों को 'बिहू-नृत्य' और गीतों को 'बिहू-गीत' कहते हैं।

यहाँ की भाषा असमी है। सिलचर, दिसपुर, तेजपुर, जोरहाट, लखीमपुर और डिबरूगढ़ यहाँ के नगर है। गौहाटी प्रमुख नगर है। अभी तक शिलांग नगर इस प्रदेश की राजधानी थी यह एक नगर मेघालय प्रदेश में चले जाने से नई राजधानी गौहाटी नगर के पास दिसपुर में बनाई गई है।

गौहाटी नगर में ही कामाख्या देवी का प्रसिद्ध मन्दिर है। जिस पहाड़ पर यह मन्दिर स्थित है उसका भी नाम 'कामाक्षा-पहाड़' है, और पहाड़ 'कामाक्षा-स्टेशन' के पीछे है। वैसे गौहाटी से इस स्थान की दूरी ४-५ किलोमीटर है। पहाड़ी स्थान होने से सड़क कहीं चढ़ाई लिए हुए है तो कहीं ढालू। गौहाटी से यहाँ के लिए टैक्सी, रिक्शा आदि आसानी से मिल जाते हैं। मिठाई की दूकान, प्रसाद-फूल-माला आदि पूजा के सामान की दूकान और होटल आदि भी है। दर्शन कराने वाले पण्डे भी मिल जाते हैं।

कहते हैं, कि कामाक्षा देवी का सही स्थान जंगलों के और अधिक अन्तर्भाग में स्थित है जहाँ कि पहुँच पाना सर्वसाधारण के लिए अत्यन्त ही कठिन है और वह स्थान भी कोई कोई ही जानता है। वहाँ कुछ सिद्ध महात्मा ही पहुँचकर दर्शन पाता है। यहाँ तान्त्रिकों की संख्या भी अत्यन्त है जो कि अगम्य अन्तर्भागीय पहाड़ी-वनीय घाटियों में ध्यान मग्न हो देवी की उपासना करते हैं।

वैसे इस कामाख्या से पर्वत पर पहले चढ़ना पड़ता है, पुनः गुफा-नुमा नीचे की ओर की सीढ़ियों से जाने के लिए एक अच्छा खासा सुन्दर सा रास्ता है, फिर थोड़ी दूर तक समतल है, फिर नीचे को उतरना पड़ता है और तब देवी का दर्शन मिलता है। देवी के दशनार्थ कोई मूर्ति नहीं है, केवल एक काला सा पत्थर रखा हुआ है जो सदैव लाल कपड़े से ढका हुआ रहता है। ठीक इसी पत्थर की नीचे से कुछ थोड़ा-थोड़ा सा पानी सदैव ही बहता रहता है जिसे एक छोटा सा सोता कहा जाता सकता है। यह जल कहाँ से आता है

और कहाँ चला जाता है, इसका पता नहीं चलता। चूँकि वह पत्थर देवी के गुप्तांग स्वरूप है अतः सदैव ढका ही रखा जाता है। यहाँ से ऊपर की ओर बढ़ने पर 'उमानन्द भैरव' का दर्शन करक लौट आना होता है। इसी रास्ते में 'भुवनेश्वरजी' का भी मन्दिर है। फूल, फल, मीठा, लाई, गट्ठा, इलायची दाना यही सब वस्तुएँ भक्त लोग देवी को अर्पण भी करते हैं। मन्दिर में कबूतर बहुत देखने को मिलते हैं क्योंकि भक्त लोग देवी के प्रसन्नार्थ इनको छोड़ देते हैं। वैसे बकरे और कबूतर की बलि दी जाती है।,

यात्रा-विधान

एतेषु सर्वपीठेषु गच्छेद्यात्राविधानतः।
सन्तर्पयेच्च पित्रादीञ्छाद्धादीनि विधाय च॥ १॥
कुर्याच्च महतीं पूजां भगवत्या विधानतः।
क्षमापयेज्जगद्धात्रीं जगदम्बां मुहुर्मुहः॥ २॥

(देवी भागवत पुराण)

व्यासजी कहते हैं—'हे जन्मेजय! इन सभी पीठों में विधिवत् यात्रा करके श्राद्ध-तर्पण, दान-पुण्य करना चाहिए और भगवती की विधिवत् पूजा करनी चाहिए। वहाँ जाकर भगवती से बार-बार क्षमा-याचना करनी चाहिए, ऐसा करने से अक्षय पुण्य की प्राप्ति होती है।'

इसी के आगे व्यासजी पुनः राजा जन्मेजय को इन स्थानों की महत्ता बतलाते हुए कहते हैं—कि हे राजन्! ये मुक्तिक्षेत्र देवी के प्रत्यक्ष निग्रह (शरीर) हैं। इन्हें 'सिद्धपीठ' कहते हैं। अतः बुद्धिमान् मनुष्य इनका सेवन अवश्य करें।

यात्रा विचार

मुहूर्त विचार—गुरु आदित्य योग में, सिंहस्थ गुरु में तथा शुक्रास्त में देव दर्शन, यात्रा, प्रतिष्ठा, व्रतारंभ, विवाह, गृह और प्रसादादि का निर्माण, वापी-कूप-तड़ाग आदि की खुदाई, यन्त्रारम्भ, यज्ञीय वृक्ष लगाना, बाग-बगीचा लगाना, देवव्रत, वृषोत्सर्ग, यज्ञारम्भ, कर्ण छेदन, वृद्धि श्राद्ध, स्त्री को

लाना तथा देव-दर्शन आदि शुभ कार्य नहीं करना चाहिए।

परन्तु व्रत के प्रथमारम्भ, संवतत्सर के बाद की यात्रा, व्यालव्रत, नित्यव्रत, शिवरात्रिव्रत, अन्त्येष्टि क्रिया आदि सब कार्यों में ग्रहादि के अशुभ होने पर भी विचार नहीं करना चाहिए तथा कार्य को सम्पन्न करना चाहिए। मलमास में (अधिक मास अथवा क्षय मास) में भी तीर्थ यात्रा वर्ज्य है।

समय परिवर्तन शील है। पहले यात्रा बड़ा पुनीत कर्त्तव्य माना जाता था। आजकल लोग शौकिया घूमने के लिए, मनोरंजन के लिए तथा सैरसपाटे के लिए यात्रा करते हैं। पहले यात्रा का उद्देश्य होता था जैसे—तीर्थ यात्रा, जीविका के लिए परदेश जाना आदि। अतः यात्रा करने के पहले कुछ नियम का विधान है। सर्वप्रथम शुभ मुहूर्त निश्चित करना पड़ता है। इसके लिए किसी अच्छे ज्योतिषी से यात्रा मुहूर्त निकलवा लेना चाहिए, पुनः अपने गुरु से आज्ञा लेकर यात्रा-पूर्व का विधान करना चाहिए। अब यात्रा-मुहूर्त का कुछ विचारणीय विषय यहाँ दिया जा रहा है।

श्री शिवजी ने कहा—'हे देवि! अपने घर में नित्य कर्म को कर प्रसन्न मन से गुरु के घर में जा, उनकी आज्ञा ले, पितरों की पूजा अर्थात् नान्दीमुख श्राद्ध सम्पन्न करके गौरी गणेश आदि देव का पूजन-हवन करके यथाविधि यात्रा आरम्भ करना चाहिए। शुक्र को बाएँ या पीछे कर, गुरु-शुक्र के उदित रहने पर तथा समस्त शुभ ग्रहों के अनुकूल होने पर, गुरु, माता-पिता, विशेषकर ब्राह्मणों की अनुमति लेकर तथा यथाशक्ति अधिक से अधिक, कम से कम ब्राह्मणों को भोजन कराने के बाद उनसे आशीर्वाद ले यात्रा करें।'

सर्वघात चक्र—बुद्धिमान पुरुष को चाहिए कि सफल तीर्थ-यात्रा के लिए अपने जन्मराशि से सर्वघात चक्र देखकर घात तिथि, वारादि को वर्जित कर यात्रा प्रारम्भ करें।

यात्रा में सूर्य विचार—धनु, मेष और सिंह के सूर्यों में यात्रा उत्तम, मकर, कुम्भ, मिथुन, कन्या, वृक्ष, तुला के सूर्यों के मध्यम, कर्क, मीन और वृश्चिक के सूर्यो में दीर्घ यात्रा जाननी चाहिए अर्थात् यात्रा में बहुत दिन लगे।

यात्रा पहली और पाँचवीं, सातवीं तारा निषिद्ध है। इसी प्रकार पंचक

सर्वघात चक्र

राशि	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
सौरमास	कार्तिक	मार्ग.	आषाढ़	पौष	ज्येष्ठ	भाद्रपद	माघ	आश्विन	श्रावण	वैशाख	चैत्र	फाल्गुन
तिथि	१,६,११	५,१०,१५	२,७,१२	२,७,१२	३,८,१३	५,१०,१५	४,९,१४	१,६,११	३,८,१३	४,९,१४	३,८,१३	५,१०,१५
वार	रवि	शनि	सोम	बुध	शनि	शनि	गुरु	शुक्र	शुक्र	मंगल	गुरु	शुक्र
नक्षत्र	मघा	हस्त	स्वाती	अनु.	मूल	श्रवण	शत.	रेवती	भरणी	रोहिणी	आर्द्रा	आश्ले.
चरण	कृतिका१	चित्रा २	शत. ३	मघा ३	धनि १	आर्द्रा ३	मूल २	रोहिणी ४	पू. भा.	मघा ४	मूल ४	पू.भा. ३
योग	विष्कुंभ	सुकर्मा	परिघ	व्याधा	धृति	शूल	सुकर्मा	व्यती.	बज्र	धृति	गण्ड	बज्र
करण	बव	शकुनि	चतुर्थ	नाग	बव	कौलव	तैतिल	गर	तैतिल	शकुनि	किस्तु	चतुर्थ
लग्न	मेष	मिथुन	कन्या	मकर	मेष	सिंह	मीन	मिथुन	सिंह	वृश्चिक	मेष	कर्क
प्रहर	पहला	चौथा	तीसरा	पहला	पहला	पहला	चौथा	पहला	पहला	चौथा	तीसरा	चौथा
चन्द्र पु.	पहला	पाचवाँ	नवाँ	दूसरा	छठवाँ	दसवाँ	तीसरा	सातवाँ	चौथा	आठवाँ	११ वाँ	१२ वाँ
चन्द्र स्त्री	पहला	आठवाँ	सातवाँ	नवाँ	छठवाँ	तीसरा	चौथा	दूसरा	दसवाँ	११ वाँ	पाचवाँ	१२वाँ

में दक्षिण यात्रा का भी निषेध है।

यात्रा तथा नक्षत्र विचार—छठ, द्वादशी, अष्टमी और शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा, पूर्णमासी, अमावस्या, रिक्ता तिथि अर्थात् चतुर्थी, नवमी और चतुर्दशी—ये तिथियाँ यात्रा में वर्जित हैं। अश्विनी, पुनर्वसु, अनुराधा, मृगाशिरा, पुष्य, रेवती, हस्त, श्रवण और घनिष्ठा ये नक्षत्र यात्रा में शुभ हैं।

दिशाशूल विचार—पूर्व दिशा में शनि-सोम को, दक्षिण दिशा में वृहस्पति को, पश्चिम दिशा में रवि-शुक्र को, उत्तर दिशा में बुध-मंगल को दिशाशूल होता है अर्थात् इन दिनों में पूर्वादि दिशाओं की यात्रा वर्जित है।

इसी प्रकार वृहस्पति और सोमवार को आग्नेय में, रविवार और शुक्रवार को नैर्ऋत्य में, बुध को ईशान में और मंगलवार को वायु कोण में दिक्शूल होता है।

योगिनी विचार—प्रतिपदा और नवमी को पूर्व में, तृतीया और एकादशी को अग्निकोण में, पंचमी और त्रयोदशी को दक्षिण में, चतुर्थी और द्वादशी को नैर्ऋतिकोण में, षष्ठी और चतुर्दशी को पश्चिम में, सप्तमी और पूर्णमासी को वायव्य में, द्वितीया और दशमी को उत्तर में और अष्टमी तथा अमावस्या ईशान कोण में योगिनी का वास जानना चाहिए।

योगिनी यात्रा करने के समय पीछे की ओर या बाएँ पड़े तो शुभ है, सामने और दाएँ अशुभ होती है। बाएँ की योगिनी सुख की देने वाली है, पीछे अभीष्ट दात्री है। दाहिने धन नष्ट करती है और सामने अनेक प्रकार के कष्ट देती हैं।

चन्द्र विचार—मेष, सिंह, धनु के चन्द्र का वास पूर्व में, वृष, कन्या, मकर के चन्द्र का वास दक्षिण में, मिथुन, तुला, कुम्भ के चन्द्र का वास पश्चिम में और कर्क, वृश्चिक तथा मीन के चन्द्र का वास उत्तर-दिशा में रहता है। यात्रा के समय चन्द्रमा दाहिने या सम्मुख पड़े तो शुभ और बाएं या पीछे पड़े तो अशुभ जानना चाहिए।

सामने के चन्द्र सब विघ्नों को हरते हैं। दाहिने चन्द्र धन देते हैं। बाएँ के चन्द्र हानि करते हैं और पीछे होने से मृत्यु तुल्य कष्ट देते हैं।

तिथि का विशेष विचार—प्रतिपदा तथा नवमी तिथि को पूर्व दिशा

में, चतुर्दशी तथा षष्ठी को पश्चिम दिशा में, त्रयोदशी तथा पंचमी को दक्षिण में, द्वितीया तथा दशमी को नैर्ऋत कोण की पूर्णिमा तथा सप्तमी को वायव्य कोण को अमावस्या तथा अष्टमी को ईशान कोण में नहीं जाना चाहिए।

कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा शुभ, शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा अशुभ, द्वितीया श्रेष्ठ, तृतीया आरोग्यप्रद, चतुर्थी क्लेश देने वाली, पंचमी लक्ष्मीप्रद, षष्ठी कलहप्रिया, सप्तमी भोजन पानप्रद, अष्टमी व्याधिप्रद, नवमी मृत्युप्रद, दशमी लाभप्रद, एकादशी स्वर्गप्रद, द्वादशी प्राण सन्देह, त्रयोदशी सर्वसिद्धिप्रदा है, चतुर्दशी अवश्य त्याज्य है। पूर्णिमा और अमावस्या, क्षय तिथि, मासान्त में कहीं बाहर यात्रा को भूलकर भी न जाना चाहिए। ग्रहण के अन्त के दिन तीन दिन त्याग कर जाना चाहिए।

प्रतिपदा को विष्कुम्भ, प्रीति तथा आयुष्मान्, द्वितीया का सौभाग्य शोभन तथा गण्डक योग, तृतीया में सुकर्मा और वैधृति, चतुर्थी को गण्ड, वृद्धि, ध्रुव और व्याघात योग; पंचमी में हर्षण योग; षष्ठी में वज्र, सिद्धि तथा व्यतीपात योग; सप्तमी को वरीयान् और परिध योग; अष्टमी को शिव सिद्धि और साध्य योग; नवमी को शुभ और शुक्ल योग; दशमी में ब्रह्म योग; एकादशी में ऐन्द्र योग तथा द्वादशी में वैधृति योग यात्रा के लिए वर्जित है।

नक्षत्र का विशेष विचार—त्रयोदशी तिथि में उत्तरा-फाल्गुनी, उत्तराषाढ़ और उत्तराभाद्रपद, चतुर्दशी में विशाखा, पूर्णमासी में मघा, आर्द्रा और भरणी; प्रतिपदा में कृतिका और द्वितीया में ज्येष्ठा हो तो—ये सभी नक्षत्र यात्रा के लिए प्रस्थान में अशुभ कहे गए हैं।

अन्तिम पाँच नक्षत्र अर्थात् घनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद और रेवती 'पचंक संज्ञक' हैं। इन नक्षत्रों में तृणकाष्ठादि का एकत्र करना व दक्षिण यात्रा वर्जित है।

रविवार को मघा नक्षत्र हो; चन्द्रवार को विशाखा नक्षत्र हो; मंगल को आर्द्रा नक्षत्र हो; बुध को मूल; गुरु को कृतिका; शुक्र को रोहिणी और शनि को हस्त नक्षत्र हो तो यमघट योग बन जाता है। इनमें भी यात्रा वर्जित है।

क्षयमास में यात्रा नहीं किया जाता। यात्रा के समय करण का विचार नहीं किया जाता है।

तारा विचार—अपने जन्म नक्षत्र से यात्रा के दिन नक्षत्र तक गिने, संख्या यदि ९ से अधिक हो तो ९ से भाग दें, जो शेष बचे उसे तारा कहना चाहिए। पूरा-पूरा कट जाने पर ९ को ही शेष मानना चाहिए। ताराओं की संख्या इस प्रकार है—१. जन्म, २. सम्पत्ति, ३. विपत्ति, ४. क्षेम, ५. प्रत्यदि, ६. साधक, ७. वध, ८. मैत्र और ९. अतिमैत्र। इनमें पहली, तीसरी, पाँचवी और सातवीं तारा क्लेशदायी होती है, शेष सब शुभ हैं। तारा का विचार कृष्ण पक्ष में विशेष रूप से करना चाहिए।

अन्य बातों का विचार—जन्म मास, जन्म दिन, जन्म नक्षत्र में और अष्टमी तथा नवमी तिथि में यात्रा आदि सदैव वर्जित है। आपत्ति काल में पश्चिम की ओर यात्रा करने के लिए ऊषाकाल श्रेष्ठ है तथा पूर्व की ओर यात्रा करने के लिए गोधूलि का समय उत्तम है। मध्याह्न काल में दक्षिण, अपराह्न काल में उत्तर, रात्रि काल में ईशान कोण, दोनों सन्ध्या में नैऋत कोण, मध्यदिन में अग्निकोण, प्रात:काल में वायु कोण की तथा वारुणादि योग में यथाकाल यात्रा करना चाहिए।

उत्तरमुख होकर पूर्व दिशा में, पूर्वमुख होकर पश्चिम दिशा, में पश्चिम मुख होकर दक्षिण दिशा में तथा दक्षिणमुख होकर उत्तर दिशा में यात्रा करने से कार्य सिद्ध होता है अर्थात् पूर्व दिशा को जाना हो तो पहले कुछ दूर उत्तर की ओर चले, फिर पूर्व को आए। यदि पश्चिम दिशा को जाना हो तो पहले कुछ दूर तक पूर्व की ओर चले फिर पश्चिम को यात्रा करें। जब दक्षिण दिशा को जाना हो तो पहले पश्चिम को चले फिर दक्षिण को जाए। इसी प्रकार यदि उत्तर को जाना हो तो पहले दक्षिण दिशा की ओर कुछ दूर तक चले फिर उत्तर को जाए, तो कार्य की सिद्धि होती है।

समय, वार तिथि, योग, शनि, राहु, रवि आदि के दोषों को चन्द्र दूर करता है। पुन: योगिनी अच्छी न हो, चन्द्रमा भी अच्छा न हो, तारा अच्छा न हो, गुरु बल भी अच्छा न हो, भद्रा राहु भी अच्छे न हों, योग भी अच्छा न हो और लग्न भी अच्छा न हो परन्तु पुष्य नक्षत्र उस दिन हो तो उपरोक्त दोषों को दूर करता है।

शकुन विचार—यात्रा में शकुन-विचार का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है।

शुभ शकुन मार्ग में दिखाई पड़े तो हर प्रकार के यात्रा-कुयोग शान्त हो जाते हैं और यदि अशुभ-शकुन मिला तो अच्छे से अच्छे मुहूर्त में की गई यात्रा अशुभ परिणाम में बदल जाती है। छींक प्रायः सभी दिशाओं की नेष्ट होती है।

'मदिरा के योग या छींक सूँघनी कर लीन्हीं।
पीन, सरदी, घास नाक में फल कर हीनी॥'

अर्थात् तम्बाकू, खरदी आदि की आई हुई छींक निष्फल होती है।

छींक पीठ की कुशल उचारे।
बाईं कारण सकल संवारे॥ १॥
सम्मुख छींक छुड़ाई साखै।
छींक दाहिनी द्रव्य विनाशै॥ २॥
ऊँची छींक कहै जयकारी।
नीची छींक होय भयकारी॥ ३॥
अपनी छींक महादुख दाई।
ऐसे छींक विचारे भाई॥ ४॥

कन्या, विधवा, मालिन, धोबिन, रजस्वला स्त्री, वेश्या, चमारिन की छींक विशेष अशुभ प्रद होती है। भोजन के अन्त में छींक हो तो दूसरे दिन प्रिय भोजन मिले। बालक, वृद्ध, रोगी की छींक निष्फल होती है। एक ही नाक से दो छींक शुभ होती है—'एक नाक दो छींक, काम बने सब ठीक।' आसन, शयन, शौच, दान, भोजन, औषधि-सेवन, विद्यारम्भ और बीज बोने के समय, युद्ध या विवाह में जाते समय छींक हो तो शुभ फलदायक होती है।

यात्रा में प्रथमवार अपशकुन हो तो ११ श्वास तक ठहर कर चलें, द्वितीय बार १६ श्वास तक ठहरे और तीसरी बार के अपशकुन में कदापि न जाए।

यात्रा समय में जिस नाक से श्वास चल रही हो तो उसी ओर का पैर पहले रखकर यात्रा-प्रस्थान करने को भी शुभ शकुन माना गया है।

कौवा, चूहा, सियार, कबूतर का शब्द वाम पार्श्व से सुनाई दे तो शकुन

शुभ है। उल्लू, पल्ली और गदहा वाम पार्श्व में आ पड़ें तो शकुन शुभ है। कोयल, तोता, भारद्वाज पक्षी दाहिने आ पड़े तो शुभ शकुन होता है। कोई चौपाया यदि काले रंग का न हो और बाएँ आ पड़े तो शुभ है। यात्रा काल में गिरगिट दिखाई पड़ जाए तो अशुभ है। कोई भी भव्य या घृणोत्पादक वस्तु दिखाई पड़े तो अशुभ है और कोई भी दार्शनीय वस्तु जिसे देखने से चित्त प्रसन्न हो जाए तो शुभ है।

सब शकुनों में देखा जाए तो मनोबल का शकुन ही सर्वश्रेष्ठ है। यात्रा काल में किसी से कलह हो जाए, क्रोध आ जाए या मुख से दुर्वचन निकल जाए तो यात्रा स्थगित कर देना चाहिए। यदि शुभ संवाद या आशीर्वाद सुनाई पड़े मन उत्साह और उमंग से पूर्ण हो तो अत्युतम शकुन है। अतः सबका निष्कर्ष यही है कि यात्रा मुहूर्त में उत्साह का होना भी परम शुभ शकुन है। पुनः—

नकुल, सुदरशन, दरसनी, क्षेमकरी, चकचाष।
दसदिसि देखत सगुन-शुभ, पूजहिं मन अभिलाष॥
सुधा, साधु, सुरतरु, सुमन, सुफल, सुहावनि बात।
'तुलसी' सीतापति-भगति, सगुन सुमङ्गल तात॥

नेवला, मछली, दर्पणा, क्षेमकरी चिड़िया, चकवा और नीलकंठ इन्हें दसों दिशाओं में किसी ओर भी देखना शुभ शकुन है। ये मन की अभिलाषा पूर्ण करते हैं। गोस्वामी तुलसीदासजी कहते हैं कि अमृत, साधु, कल्पवृक्ष सुन्दर पुष्प, सुन्दर फल, सुहावनी बात, श्रीसीतापति राम की भक्ति ये सात सुन्दर शकुन हैं।

और भी—

चलन समय नेउरा मिल जाय।
बाम भाग चारा चखु (नीलकंठ) खाय॥
काग दाहिने खेत सुहाय।
सफल मनोरथ समझउ भाय॥
लोमा (लोमड़ी) फिरि-फिरि दरस दिखावै।
बायें से दहिने मृग आवै॥

मृग बाएँ ते दाहिने जो आवे तत्काल।
अन्न, धन, लक्ष्मी बहु मिलै, चलतै प्रातःकाल॥
भड्डुर ऋषि यह सगुन बतावै।
सगरे काज सिद्ध होइ जावै॥
नारि सुहागिन जल घट लावै।
दधि मछली जो सनमुख आवै।
सन्मुख धेनु पियावै बाछा।
यही सगुन है सबते आछा॥

यात्रा में समस्त मंगलों की जड़—

भरत शत्रुसूदन लखन, सहित सुमिरि रघुनाथ।
करहु यात्रा चहै जब, मिलहि सुमंगल नाथ॥

स्मरण योग्य चौपाई—

यात्रा के समय निम्न चौपाई को जपते हुए प्रस्थान करने से यात्रा पूर्ण सफल होती है—

प्रविसि नगर कीजै सब काजा।
हृदय राखि कोसल पुर राजा॥

अशुभ शकुन—यात्रा के समय पार्श्व भाग में गिद्ध, बाज अथवा चील गमन करे तो यात्रा नहीं करनी चाहिए। यदि कौवा वृक्ष पर बैठा हुआ निष्ठुर भाषण करें, छिपकली का शब्द सुनाई दे, रोने अथवा कलह का शब्द सुनाई पड़े तो भी यात्रा नहीं करनी चाहिए।

यात्रान्त गृह प्रवेश मुहूर्त—यात्रा से लौट आने पर गृह प्रवेश में द्वादशी, अष्टमी, छठ और रिक्ता ४/९/१४ इन तिथियों को वर्जित करें। शुभ दिन में पुनः यात्रारम्भ की भाँति आदि देव गणेशजी का पूजन, हवन, प्रार्थना कर घर में प्रवेश करें। अनुराधा, चित्रा, मृगशिरा तीनों उत्तरा, रेवती और रोहिणी—ये नक्षत्र शुभ हैं। प्रवेश से यात्रा व यात्रा से प्रवेश नवें दिन व नवें नक्षत्र तथा नवें तिथि में वर्जित है। प्रवेश के दिन १०१ अथवा यथाशक्ति ब्राह्मणों को भोजन कराएँ और अपने बन्धु-बान्धवों को भी खिलाकर उस दिन उत्सव मनाएँ।

देवी-तीर्थ, व्रत, उत्सवादि

पूर्वकाल में पर्वतराज हिमालय ने बहुत बड़ा तप किया था; पुनः तारकासुर के उत्पात से देवताओं ने देवी की स्तुति की थी। उसी प्रसंग में देवी ने प्रसन्न होकर कहा था कि मैं पर्वतराज हिमालय के यहाँ उनकी पुत्री होकर जन्म लूँगी। देवी के ऐसे वांछित वर को सुनकर बड़ी प्रसन्नता से हिमालय ने श्रीदेवी से कहा कि हे देवेश्वरी! आपके अत्यन्त प्रिय लगने वाले पवित्र एवं दर्शनीय प्रसिद्ध स्थान इस भूमण्डल पर कितने हैं? साथ ही आपको सन्तुष्ट करने वाले जो व्रत तथा उत्सव हों, उन्हें भी मुझे बताने की कृपा करें, जिससे मेरा मानव-जीवन सफल हो जाए। हिमालय की विनम्र वाणी सुनकर श्री भगवती ने कहा—हे गिरिराज! मैं विशेष क्या हूँ? संसार में दृष्टिगोचन होने वाले प्रायः सभी स्थान मेरे ही हैं। यद्यपि सभी समय मेरे व्रत स्वरूप हैं, तथा सर्वत्र सर्वदा मेरे उत्सव मनाए जा सकते हैं, क्योंकि मैं सर्वव्यापिनी, सर्वस्वरूपिणी एवं नित्या हूँ, तथापि हे वत्स! मैं भक्त वत्सलतावश कुछ अपने प्रसिद्ध स्थानों (देवी-तीर्थ) एवं व्रतों का परिचय कराए देती हूँ, तुम सावधान मन से सुनो—

देवी तीर्थ—सर्व प्रथम दक्षिण भारत में 'कोलापुर' नामक एक प्रसिद्ध नगर है, जहाँ लक्ष्मी का निवास रहता है। दूसरा स्थान है 'मातुःपुर' जहाँ भगवती 'रेणुका' देवी रहती हैं। 'तुलजापुर' नामक मेरा तृतीय स्थान है। इसी प्रकार एक और स्थान है जिसका नाम है 'सप्तशृंग', 'हिंगुला', 'ज्वालामुखी', 'भ्रामरी', 'रक्तदन्तिका' तथा 'दुर्गा' आदि देवियों के स्थान उन्हीं के नाम से विख्यात है। विन्ध्यपर्वत पर 'विन्ध्याचली' (विन्ध्यवासिनी) भगवती का सर्वश्रेष्ठ प्रसिद्ध स्थान है। अन्नपूर्णा स्थान, कांचीपुर, भीमादेवी और विमला देवी के स्थान सर्वोत्तम कहे जाते हैं—जो इन्हीं के नाम से विख्यात है। कर्णाटक देश में 'श्रीचन्द्रला' देवी का प्रसिद्ध स्थान है, उसी के आस-पास 'कौशिका' देवी का स्थान है। नील पर्वत के शिखर पर 'नीलाम्बा' देवी का स्थान है और श्रीनगर के पास जम्मू में 'जाम्बूनदेश्वरी' देवी का प्रसिद्ध स्थान है। इसी प्रंकार नेपाल देश में 'गुह्यकाली' का स्थान बड़ा प्रसिद्ध है। साथ ही चिदम्बरम् नगर में भगवती 'मीनाक्षी' देवी का सुप्रसिद्ध

स्थान है, जो 'हालास्य' नाम से भी कहा जाता है। वेदाक्ष्य में 'सुन्दरी' देवी का स्थान बहुत प्रसिद्ध है। 'एकाम्बरम्' नामक स्थान में 'पराशक्ति' भगवती का मन्दिर है, जो पुरुषोत्तम क्षेत्र के निकट 'भुवनेश्वर' नाम से प्रसिद्ध है। भगवती 'मदालसा' एवं 'योगीश्वरी' देवी का उत्तम स्थान इन्हीं के नामों से विख्यात है। चीन देश में 'नीलसरस्वती' का स्थान है, जो अत्यन्त प्रसिद्ध है। वैद्यनाथ धाम में 'बगला' देवी का सर्वोत्तम स्थान सभी जानते हैं। साथ ही हे नगेश! 'श्री भुवनेश्वरी' देवी का सुप्रसिद्ध स्थान जो मणिद्वीप नामक महाप्रदेश में है—मेरे ज्ञानी भक्त ही उन्हें जानते हैं। जब शिवजी सती का शरीर लेकर घूम रहे थे, तब उनका योनि भाग जहाँ गिरा वह स्थान कामाख्या (कामाक्षा) देवी के नाम से प्रसिद्ध हुआ। वही भगवती 'त्रिपुरसुन्दरी' का पवित्र स्थान है। हे हिमालय! संसार में महामाया से सुशोभित जितने क्षेत्र हैं, उन सबों में यह स्थान 'शिरोमणि' कहा गया है। भूतल में इससे बढ़कर देवी का प्रसिद्ध स्थान दूसरा कोई नहीं है। वह ऐसा जागृत स्थान है जहाँ आज भी प्रतिमास भगवती रजस्वला हुआ करती है। उस समय वहाँ के रहने वाले सभी प्रधान देवता उस पर्वत पर चले जाते हैं और वही पर्वत श्रेणियों के रूप में निवास करते हैं। विद्वानों का कहना है कि उस अवसर पर वहाँ की सम्पूर्ण भूमि देवी मय हो जाती है। इसीलिए 'कामाख्या योनिमण्डल' से बढ़कर कोई दूसरा श्रेष्ठ स्थान नहीं है। हे गिरीन्द्र! समस्त ऐश्वर्यों से युक्त 'पुष्कर' क्षेत्र में भगवती श्री गायत्री देवी का उत्तम स्थान कहा गया है। अमरकण्टक क्षेत्र में 'चण्डिका' तथा प्रभास क्षेत्र में 'पुष्करेक्षिणी' देवी का स्थान है। नैमिषारण्य में 'लिंगधारिणी' पुस्कराक्ष में 'पुरहूता' तथा आषाढ़ी क्षेत्र में 'रति' नाम की देवी का उत्तम धाम शोभित है। चण्डमुण्डी नामक महास्थान में चण्डमुण्ड को दण्ड देने वाली भगवती 'परमेश्वरी' विराजती है। भारभूति स्थान में 'भूति' देवी तथा नकुल स्थान में 'नकुलेश्वरी' देवी का परम धाम है। हरिश्चन्द्र नामक धाम में 'चन्द्रिका' और श्री शैल पर्वत पर 'शांकरी' देवी का स्थान कहा गया है। जप्येश्वर में 'त्रिशूल', अम्रातकेश्वर में 'सूक्ष्मा' नामक देवी का सुन्दर स्थान है। इसी प्रकार महाकाल धाम में भगवती 'शाकम्भरी' तथा मध्यमेश्वर धाम में 'शर्वाणी' एवं केदार क्षेत्र में 'मार्गदायिनी'

नाम्नी देवी विराजती है। 'भैरव' नामक स्थान में 'भैरवी' तथा गया धाम में 'मंगला' नाम की प्रसिद्ध देवी हैं।

इसी प्रकार कुरुक्षेत्र में 'स्थाणु प्रिया' और नकुल में 'स्वायम्भुवी' नाम की देवी विराजती हैं। कनखल क्षेत्र में 'उग्रा' तथा विमलेश्वर स्थान में 'विश्वेशी', अट्ठास क्षेत्र में 'महानन्दा' और महेन्द्र पर्वत पर 'महान्तका' नाम की देवी का स्थान है। भीमा पर्वत पर भगवती 'भीमेश्वरी' का, वस्त्रापथ नामक स्थान में द्वितीय 'शांकरी' का, अर्द्धकोटि में 'रुद्राणी' का, अविमुक्त क्षेत्र (काशी) में 'विमलाक्षी' का, महालय में 'महाभागा' का, गोकर्ण धाम में 'भद्रकर्णी' का, भद्रकर्णक भूमि में 'भ्रदा' देवी का, सुवर्णाक्ष धाम में 'उत्पलाक्षी' का, स्थाणु स्थान में 'स्थाण्यवीशा' का, कमलालय में 'कमला' का, छागलण्डक स्थान में 'प्रचण्डा' का, कुरण्डल में 'त्रिसन्ध्या' देवी का, माकोट में श्री 'मुकुटेश्वरी' देवी का, मण्डलेख में 'शाण्डली' का, कालञ्जर पर्वत पर 'काली' का, शंकुकर्ण पर्वत पर भगवती 'ध्वनि' का तथा स्थूलेश्वर पर्वत पर 'स्थूला' देवी का सुन्दर धाम कहा गया है। साथ ही हे हिमालय! भगवती 'हृल्लेखा' देवी नाम की पराशक्ति समस्त ज्ञानी जनों के हृदयरूपी कमल पर विराजती रहती हैं। उपर्युक्त सभी स्थान मुझे परम प्रिय हैं। परन्तु हे नगेश! इसमें भी एक रहस्य है वह यह कि तथोक्त सभी क्षेत्र काशी में ही विराजमान हैं। अतएव देवी में श्रद्धा रखने वाले पुरुषों को चाहिए कि वे काशी (वाराणसी) में ही सर्वदा निवास करने का सतत् प्रयत्न करें और यहीं रहकर सभी स्थानों का दर्शन करते हुए देवी के बीज मन्त्र का जप एवं उनके श्री चरण कमलों का ध्यान करते रहें। हे हिमालय! मैं विशेष क्या कहूँ? इस पुण्यमय कर्म के प्रभाव से पुरुष संसार चक्र (आवागमन) से मुक्त हो जाता है। अत: जो पुरुष नित्य प्रात:काल उठकर भगवती के इन नामों का उच्चारण करता है। उसके समस्त पाप तत्काल ही भस्म हो जाते हैं। इसके पाठ मात्र से मनुष्य निश्चय ही 'द्विजत्व' को प्राप्त होता है। विशेषकर द्विजाति मात्र को चाहिए कि श्राद्ध के अवसर पर सर्वप्रथम इन नामों का अवश्यमेव पाठ करें तथा कराएँ। ऐसा करने से उनके समस्त पितर मुक्त होकर परमपद को पा जाते हैं।

देवी व्रत—अब समाहित चित्त होकर व्रतों की चर्चा सुनिए । ये सभी

व्रत क्या स्त्री, क्या पुरुष, सबको प्रयत्न पूर्वक करने चाहिए। उनमें सर्वप्रथम 'अनन्त-तृतीय' नाम का व्रत है। इसमें तीन नाम हैं—१. अनन्ततृतीया, २. रसकल्याणिनर और ३. आर्द्रानन्दकरी व्रत। शुक्रवार तथा चर्तुदशी को भी देवी का व्रत किया जाता है। इसी प्रकार भौमवार व्रत तथा 'प्रदोषव्रत' भी देवी का व्रत है। उस समय निशीथ काल (आधीरात) में शिवजी अपनी प्रिया (शिवा) को आसन पर बैठाकर उनके सम्मुख देवताओं सहित नृत्य करते हैं। उस दिन उपवास करके प्रदोषकाल (सायंकाल) में देवी की पूजा करनी चाहिए। यह व्रत देवी को सन्तुष्ट करने वाला है, जो प्रति पक्ष में मनाया जाता है। साथ ही हे गिरीश! सोमवार का व्रत भी मुझे अत्यन्त प्रिय है। इस व्रत में दिन भर उपवास रहकर प्रदोष में देवी का पूजन करके रात में ही भोजन करना चाहिए। दोनों नवरात्र मुझे परम प्रिय हैं। हे गिरिराज हिमालय! इस प्रकार के अनेक नित्य एवं नैमित्तिक व्रत है। अतः जो पुरुष रोगद्वेष से रहित होकर मेरी प्रसन्नता के लिए इन व्रतों का अनुष्ठान करता है, उसे मेरा सायुज्य-पद प्राप्त होता है अर्थात् वह अवश्यमेव मुक्त हो जाता है। उसे पुरुष को मैं अपना परम प्रिय भक्त मानती हूँ।

देवी-उत्सव—उत्सव के विषय में चर्चा करती हुई श्री आद्या देवी कहती है—हे राजन्! उपरोक्त व्रतों पर मेरा दोलोत्सव तथा शयनोत्सव एवं जागराणोत्सव आदि भी मानना चाहिए। साथ ही रथोत्सव भी मनाना आवश्यक है। श्रावण मास में एक पवित्रोत्सव होता है, उससे में अत्यन्त प्रसन्न होती हूँ। अतएव मेरे भक्तों को चाहिए कि इन व्रतों-उत्सवों को विधिवत् मनाएँ, इससे उनके सभी मनोरथ पूर्ण होते हैं। हाँ, यह भी स्मरण रखें कि उत्सव के अवसरों पर मेरे भक्तों को प्रसन्नतापूर्वक भोजन कराएँ साथ ही सौभाग्यवती स्त्रियों को भोजन वस्त्र से सन्तुष्ट करना चाहिए। कुमारी कन्याओं तथा ब्रह्मचारियों को मेरा ही रूप समझकर उन्हें भी आदरपूर्वक भोजन कराएँ। हे हिमालय! धन की कृपणता न करके द्विजकुमारी एवं कुमारों की पुष्पादि से पूजा करें। जो इस प्रकार से प्रेमपूर्वक सावधानी से उत्साह के साथ सदैव मेरा पूजनोत्सव करता है वही धान्य है तथा कृतकृत्य है, वह निःसन्देह ही मेरा प्रेम-पात्र है।

मन में सदा यह भाव रहना चाहिए—

'सर्वरूपमयी देवी सर्व देवीमयं जगत्।
अतोऽहं विश्वरूपां तां नमामि परमेश्वरीम्॥'

देवी सर्वरूपमयी हैं तथा सम्पूर्ण जगत् देवीमय है। अतः मैं उन विश्वरूपा परमेश्वरी (कामाक्षा) को नमस्कार करता हूँ।

तीर्थ स्थान में कर्तव्याकर्तव्य

सवारी द्वारा तीर्थ यात्रा करने से चौथाई फल प्राप्त होता है, छतरी, पादुका आदि की सहायता से यात्रा करने पर तीर्थयात्रा का आधा फल प्राप्त होता है। तीर्थस्थान में व्यायाम तथा मांस भक्षण करने से तीर्थयात्रा का फल विनष्ट हो जाता है।

किसी अन्य कार्य से कहीं की यात्रा की जाए और वहाँ तीर्थ की प्राप्ति हो जाए तो भी उस तीर्थ का फल प्राप्त होता है। ऐसा फल ज्ञानपूर्वक होने से ही प्राप्त होता है। यदि अज्ञान में दर्शन हों तो उस प्राप्त तीर्थ का कुछ भी फल नहीं होता है।

तीर्थ स्थल में आचमन, पाद-प्रक्षालन और शौचादि नहीं करना चाहिए। उस प्राप्त तीर्थ में किसी दूसरे तीर्थ की प्रशंसा भी नहीं करना चाहिए। प्रशंसा उसी तीर्थ की करे जहाँ गए हुए हैं। एक तीर्थ में जाकर दूसरे तीर्थ में प्रीति रखना वर्जित है। तीर्थ के किनारे तथा तीर्थ के दक्षिण में निवास नहीं करना चाहिए। सदैव उसी तीर्थ में ही निवास करें। तीर्थ के दक्षिण में स्नान भी नहीं करना चाहिए।

तीर्थ में साधु, ब्राह्मणों का उपहास या निन्दा कभी न करें। उनकी परीक्षा भी नहीं करनी चाहिए। किसी धर्म की बुराई तथा छिद्रान्वेषण न करें। जिस तीर्थ में जो जो देवता तथा ब्राह्मण निवास करते हैं, वे सभी वन्दनीय तथा पूज्य हैं। तीर्थस्थ ब्राह्मणों के कथनानुसार कर्म करने में ही पवित्रता है। अपने से किया हुआ कर्म तीर्थयात्रा के उद्‌देश्य को निष्फल कर देता है।

तीर्थ में जाकर उसके दूरवर्ती तट में वास नहीं करना चाहिए। तीर्थ स्थान में, ग्रहण में, पितृवासर में, यज्ञ में पात्रापात्र का विचार करके ही दान

देना चाहिए। बिना विचार किए जो दान किया जाता है, वह निष्फल हो जाता है। अतः दान करते समय यह विचार कर लेना आवश्यक है कि जिस ब्राह्मण को दान किया जा रहा है वह दान करने योग्य पात्र है भी अथवा नहीं। दान में तीन बातों का विशेष ध्यान रखा जाता है—१. स्थान, २. काल और ३. पात्र। अतः तीर्थ स्थान में विशेष काल का भी प्रयोजन है, उसका भी ध्यान रखा जाना चाहिए।

तीर्थ स्थान में किया हुआ पाप और पुण्य चौगुने परिमाण में बढ़ता है। अतः तीर्थ में प्रिय वचन, नम्रता, शीलता, धैर्य, दान शीलता, अहिंसा आदि का आभूषण सदैव धारण किए रहना चाहिए। मद्यपान, द्यूत, व्यभिचार, चोरी हिंसादि से कोसों दूर रहना चाहिए।

तीर्थ यात्री को तीर्थ में दूसरे के चीजों का उपभोग नहीं करना चाहिए और न ही किसी के दिए हुए दान को ग्रहण करना चाहिए। तीर्थ में स्नान करते समय दान नहीं लेना चाहिए और तीर्थयात्री को तो दान लेना सर्वथा वर्जित है।

तीर्थ क्षेत्र में तो आशीर्वाद लेना उचित है, देना नहीं। तीर्थ में नित्य नियमानुसार पूजा-पाठ जप दानादि में ही समय बिताना चाहिए। किसी दूसरे के किए हुए श्रम पर उसको उचित पारिश्रमिक देना चाहिए। कथा-प्रवचन आदि में जाने पर कथावाचकों को कुछ अवश्य देना चाहिए।

प्रदक्षिणा उसी तीर्थ के विधि अनुसार करना चाहिए। तीर्थ में नास्तिक विचारधारा का सर्वथा त्याग करना चाहिए और नास्तिकों के साहचर्य से अपने को दूर रखना चाहिए।

दीक्षा विधान

दीक्षा का महत्त्व—'अदीक्षितो न स्थातव्यम्' अर्थात् अदीक्षित का कहीं भी स्थान नहीं है, न तो इस लोक में और न परलोक में। इनकी कोई गति नहीं होती। पुनः—

अदीक्षितस्य मरणं रौररवाय प्रकल्पते।
न पूजाद्याधिकारोऽस्ति विना दीक्षां वरानने॥

अदीक्षित का मरण के पश्चात् रौर व नरक भोगना पड़ता है और बिना दीक्षा के मनुष्य पूजा का अधिकारी नहीं होता है।

दीक्षा किसे कहते हैं—नारदजी ने श्री नारायण से कहा कि 'हे प्रभो! मैं दीक्षा का वह उत्तम लक्षण एवं विधान सुनना चाहता हूँ, जिसके बिना मनुष्य मात्र देवी मन्त्र किंवा कोई भी मन्त्र जपने का अधिकारी नहीं होता। अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा स्त्री जाति में किसी को भी दीक्षा ग्रहण किए बिना देवी-देवताओं की पूजा एवं मन्त्र जप का अधिकारी नहीं माना जाता। इसलिए साधारणतया यह समस्त प्रसंग बतलाने की कृपा कीजिए।' यह सुनकर भगवान् श्री नारायण ने कहा—'हे नारद! महाभाग्यशाली पुण्यात्मा पुरुषों के दीक्षा लेने का वह विधान कहता हूँ जिससे वे देवता, अग्नि तथा गुरु आदि की पूजा के अधिकारी हो सकते हैं—उसे ध्यान देकर सुनो। वेद एवं तन्त्र शास्त्र के पारदर्शी विद्वानों का कथन है कि जो दिव्य ज्ञान प्रदान करे तथा समस्त पापों को नष्ट करने में समर्थ हो, उसे 'दीक्षा' कहते है—

दिव्यं ज्ञानं हि या दद्यात्कुर्यात्पापक्षयं तु या।
सैव दीक्षेति सम्प्रोक्ता वेद-तन्त्र-विशारदैः॥

'दीक्षा' लेना परम आवश्यक कार्य है; क्योंकि इससे अनेक लाभ होते हैं। साथ ही यह भी जान लेना चाहिए कि दीक्षा कर्म में 'गुरु' एवं 'शिष्य' दोनों ही बाह्याभ्यन्तर-शुद्धि अत्यन्त अपेक्षित है। अपात्र को दीक्षा नहीं देनी चाहिए। इसी प्रकार गुरु भी बहुत छान-बीन कर बनाना चाहिए कहावत है—

पानी पीजै छान के। गुरु कीजै जान के॥

दीक्षा देने तथा लेने के अधिकारी—अपुत्र, मृतपुत्र, कुण्ड, बामन (बौना) कुनरवी, बड़े दाँत वाला, अधिकांग तथा स्त्री के वशीभूत रहने वाले को तथा व्यभिचारी स्त्री को आचार्य द्वारा दीक्षा प्रदान करना उचित नहीं है।

गुरु सदाचारी, संतोषी, शीलवान, देवी भक्त तथा ज्ञानी होना चाहिए।

सुन्दर, सुशील, कुलीन, ज्ञानाचारी, गुणी तथा समयाचार को जानने वाले व्यक्ति को ही दीक्षा प्रदान करना चाहिए।

पिता तथा पितामह द्वारा मन्त्र ग्रहण करना उचित नहीं है। स्वप्न लब्ध

तथा स्त्री द्वारा प्रदत्त मन्त्र संस्कार द्वारा शुद्ध होता है।

मन्त्र संस्कार—स्वप्न में प्राप्त मन्त्र का संस्कार करने के लिए कलश स्थापित करें और उसी में गुरु की भावना कर प्राण प्रतिष्ठित करें। फिर मन्त्र को बरगद के पत्ते पर केसर या रोली की रोशनाई से और कुश के जड़ की कलम से लिखकर ग्रहण करें, तभी सफल होता है अन्यथा विफल हो जाता है।

दीक्षा-मुहूर्त—अगहन, फाल्गुन, श्रावण, कार्तिक और माघ—ये मास; आर्द्रा, चित्रा, तीनों उत्तरा, रेवती, मृगशिरा, रोहिणी, अनुराधा और घनिष्ठा—ये नक्षत्र; शुक्ल पक्ष की द्वितीया, तृतीया, पंचमी, सप्तमी, दशमी, द्वादशी और कृष्ण पक्ष की द्वितीया, तृतीया, पंचमी ये तिथियाँ वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, तुला, धनु तथा मीन ये लग्न दीक्षा ग्रहण करने में प्रशस्त हैं। केन्द्र, त्रिकोण में शुभ ग्रह हों। पाप ग्रह वर्जित हैं।

तेरह तिथियों का पक्ष और क्षयमास वर्जित है। पर्व के दिन सक्रान्ति के दिन, सूर्य चन्द्र के ग्रहण में, महातीर्थ में, नवरात्रि के महापूजा में भी दीक्षित होना शुभ है।

शिष्य के कर्त्तव्य—शिष्य को चाहिए कि वह गुरु आज्ञा का पालन करता ही रहे। वह गुरु में दोष न देखें। वह गुरु की आज्ञा लेकर ही मन्त्र-यन्त्र, पुराणादि का अध्ययन एवं तीर्थ यात्रा आदि के सभी कार्य करता रहे। गुरु सेवा को ही अपना परम धर्म समझे।

दीक्षा-विधि

अब गुरु-मन्त्र लेने या देने की विधि बताते हैं।

प्राथमिक कार्य—नारायण भगवान् नारद जी से बोले कि हे नारद! अब सर्वप्रथम गुरु को चाहिए कि प्रात:कालीन नित्यकर्म से निवृत्त होकर विधि-विधान के साथ स्नान एवं सन्ध्या आदि सभी कृत्य सुचारु रूपेण सम्पादित करें। तत्पश्चात् हाथ में कमण्डलु (जल पात्र) लेकर मौनी वन, तालाब या नदी के तट से घर जाए।

यज्ञ मण्डप प्रवेश—पुन: यज्ञ मण्डप में पहुँचकर श्रेष्ठ आसन

(कुशासन या कम्बलासन) पर बैठ जाए। तब आचमन और प्राणायाम करके गन्ध-पुष्पाक्षत मिश्रित जल को 'ॐ फट्' इस मन्त्रास्त्र का सात बार जप करके अभिमन्त्रित करें। तत्पश्चात् बुद्धिमान पुरुष को चाहिए कि 'ॐ फट्' इस मन्त्र का उच्चारण करते हुए उसी अभिमन्त्रित जल से सभी द्वारों का तथा पूजा की सामग्री का प्रोक्षण करें। उस समय द्वार के ऊपरी भाग में एक ओर गणेश जी की, दूसरी ओर सरस्वतीजी की तथा मध्य में भगवती श्री लक्ष्मीजी की पूजा करनी चाहिए। इस प्रकार नाम-मन्त्रों का उच्चारण पूर्वक विधिवत् उनका पूजन करें। द्वार के दक्षिण भाग में गंगा और गणेश की तथा वाम भाग में क्षेत्रपाल और सूर्यसुता यमुना का पूजन करें। इसके बाद देहली (चौकठा) पर 'ॐ फट्' का उच्चारण करके अस्त्र देवता की पूजा करें। सब ओर ऐसी भावना करें कि ये सब देवीमयी ही हैं। साथ ही यह भी सोचे कि इस मन्त्रास्त्र के जप द्वारा दैवी विघ्नों का उच्छेद हो रहा है, अतः तीन बार पदाघात से अन्तरिक्ष तथा भूतल के सभी विघ्नों को दूर करें। इसके बाद बाई शाखा का स्पर्श करते हुए पहले दाहिना पैर रखकर मण्डप में प्रवेश करें।

वास्तु देवता पूजन—वहाँ भीतर जाकर जल का कलश यथास्थान रख दें। तत्पश्चात् सामान्य विधि से वास्तु-देवता को अर्घ्य दें। नैऋत्य दिशा में गन्ध, पुष्प तथा अक्षत आदि वस्तुओं से वास्तु देवता के स्वामी पद्मयोनि ब्रह्माजी की पूजा करें। उसके बाद पंचगव्य तथा अर्घ्योदक के अवशिष्ट जल से तोरणस्तम्भ एवं मण्डप का प्रोक्षण करें। उस समय शिष्य और गुरु दोनों ही अपने मन में ऐसी भावना करें यह सब पदार्थ देवीमय ही हैं। सर्वत्र मूलमन्त्र 'ॐ फट्' का ही उच्चारण करे उसे ही 'शर-मन्त्र' भी कहते हैं। उसका उच्चारण करके मण्डप भूमि को पदाघात से प्रताड़ित करें। साथ ही 'ॐ हुँ' इस मन्त्र को पढ़कर उस पर जल छिड़के। विघ्न शान्त्यर्थ कृत्य—तत्पश्चात् धूप-दीप दान दें तथा विघ्न शान्ति के लिए जल, चन्दन, दूर्वा, अक्षत भस्म आदि वस्तुओं का विकिरण करें। तत्पश्चात् कुश की मार्जनी से उस स्थान का परिमार्जन करें। उन द्रव्यों को ईशान दिशा में किसी एक जगह रख दें। इसके बाद पुण्याहवाचन करके गरीबों, अनाथों को सन्तुष्ट करने का प्रयत्न करें।

अंगन्यास विधि—अब कोमल आसन पर अपने गुरुदेव को उत्तराभिमुख बैठाकर स्वयं भी किसी दूसरे शुद्ध आसन पर पूर्वाभिमुख बैठे। स्मरण रहे कि उस समय गुरुदेव को नम्रतापूर्वक प्रणाम करके उनकी आज्ञा लेकर बैठ जाए, फिर दातव्य मन्त्रों के देवताका विधिवत् ध्यान करें। 'भूतिशुद्धि' आदि क्रिया करके देय मन्त्र के ऋषि का न्यास करना चाहिए। वह न्यास इस प्रकार हैं—मस्तक में देय मन्त्र के मुनि का, मुख में छन्द का, हृदय कमल में देवता का, गुह्य में बीज का तथा दोनों पैरों में शक्ति का न्यास करके तीन बार ताली बजाए। पुनः तीन बार चुटकी बजाकर दिग्बन्धन करें। उसके बाद प्राणायाम करके मूलमन्त्र का स्मरण करते हुए अपने शरीर में इस प्रकार मातृ का न्यास करें—अर्थात् मन्त्रज्ञ पुरुष को चाहिए कि वह 'ॐ अं नमः' का उच्चारण करके अपने सिर में मातृका न्यास करें, इसी प्रकार समस्त अंगों में न्यास करना चाहिए। मूलमन्त्र द्वारा अंगुष्ठ आदि अंगुलियों तथा हृदयादि अंगों में क्रमशः षडगंन्यास करें। नमः, स्वाह, वषट्, हुम्, वौषट् तथा फट् इन पदों के साथ ॐ लगा देने से ये मन्त्र के रूप में परिणत हो जाते हैं। इन्हीं छह मन्त्रों से षडगंन्यास करें। तत्पश्चात् देय मन्त्र के वर्णों का तत्तत् कल्पोक्त स्थानों में न्यास करें। उस समय साधक अपने शरीर में ऐसी भावना करें कि यह एक पवित्र आसन है। इसके दक्षिण भाग में 'धर्म', वाम में 'ज्ञान' वाम उरु में 'वैराग्यं' दक्षिण उरु में 'ऐश्वर्य' और मुख में 'अधर्म' का निवास है, इस प्रकार चिन्तन करें। फिर वाम पार्श्व में, नाभिस्थान तथा दक्षिण पार्श्व में तथोक्त धर्म, ज्ञान, वैराग्य एवं ऐश्वर्य आदि नामों के साथ 'नमः' लगाकर 'नज' समास पूर्वक धर्म आदि का चतुर्थ्यन्त प्रयोग करें। अर्थात् 'ॐ अधर्माय नमः', 'अज्ञनाय नमः', 'अवैराग्याय नमः', 'अनैश्वर्याय नमः' ऐसा उच्चारण करके न्यास करें। अपने शरीर में जो आसन की कल्पना की है, उसके विषय में ऐसी भावना करें कि यह एक सुन्दर पलंग है। इसके चारों पाये अधर्म कहे गए हैं।

इसके बाद पुनः यह भावना करें कि इसके मध्य में हृदय है—जो अत्यन्त कोमल है। इस पर भगवान् 'अनन्तदेव' विराजमान हैं। साथ ही प्रपंचात्मक निर्मल कमल का भी अनुचिन्तन करें। उस पर सूर्य, चन्द्रमा और

अग्नि का मन्त्रोच्चारण पूर्वक कलायुक्त स्थान का न्यास करें। उन कलाओं के साथ उनका स्मरण करें तथा सत्व, रज और तम का न्यास करना चाहिए।

अब उस पीठ की चारों दिशाओं में पूर्व क्रम से आत्मा, अन्तरात्मा, परमात्मा तथा ज्ञानात्मा इन चारों का न्यास करके कल्पना करनी चाहिए। तत्पश्चात् साधकजन अमुक के स्थान पर अपना नाम लेते हुए 'ॐ अमुकासनाय नमः' इस प्रकार मन्त्र पढ़कर शरीर रूपी आसन की पूजा करें। साथ ही उस आसन पर भगवती जगदम्बा का ध्यान करें। अब देय मन्त्र के देवता की मानसिक उपचारों द्वारा विधिवत् पूजा करें और देवी की मुद्राएँ भी प्रदर्शित करें जिनसे भगवती परम प्रसन्न हो।

देवी पूजा विधि—अब बाई ओर सामने 'षट्कोण' चक्र निर्माण करके उसके ऊपर वर्तुलाकर वृत्त–चक्र बनाए तथा सबके ऊपर भाग में चतुष्कोण वर्गाकार चक्र बनाकर षट्कोण के बीच में एक त्रिकोण का निर्माण चन्दन द्वारा करके शंखमुद्रा प्रदर्शित करें। तब छहों कोणों में षडंगों की पुष्प आदि से पूजा करनी चाहिए। नारायण भगवान् नारदजी से बतलाते हुए कहते हैं—हे मुने! अग्नि आदि कोणों में षडंगों की अर्चना करें। तत्पश्चात् शंख रखने के पात्र को लेकर 'ॐ फट्' इस अस्त्र–मन्त्र से प्रोक्षण करके उस मण्डल में स्थापित करें और 'ॐ मं वह्निमण्डलाय नमः' पढ़कर 'दशकलात्मने अमुक देव्या अर्घ्यपात्रस्थापनाय नमः' का उच्चारण करके विज्ञजन शंख के आधार पर स्थापन करें। आधार स्थापनार्थ यही मन्त्र है। आधार देश में पूर्व से प्रारम्भ करके दक्षिण क्रम से अग्निमण्डल में निवास करने वाली दस कलाओं की पूजा करनी चाहिए। तत्पश्चात् मूलमन्त्र द्वारा प्रोक्षित देय मन्त्र को स्मरण करते हुए, उस आधार पर रख दें और 'ॐ सूर्यमण्डलाय नमः' कहकर 'द्वादशान्ते कलात्मने अमुक देव्यर्घ्यपात्राय नमः' का उच्चारण करें। फिर 'शं शंखाय नमः' इस पद को पढ़कर इसी से शंख का प्रोक्षण करें, तत्पश्चात् शंख में बारह सूर्यों की पूजा करें। 'तपिनी' आदि बारह कलाएँ सूर्य की हैं, इनकी क्रमशः पूजा करनी चाहिए। पुनः मूलमन्त्र तथा विलोम मातृका उच्चारण करें, तत्पश्चात् जल में शंख को भर दें और उसमें चन्द्रमा की कलाओं का न्यास करें। उस समय 'ॐ सोममण्डलाय षोडशकलात्मने

अमुकार्घ्यामृताय हृदयाय नमः ' यह मन्त्र पढ़कर अंकुश मुद्रा से जल की पूजा करें। वहीं तीर्थों का आह्वान करके आठ बार मन्त्र जप करें। फिर जल में षडगंन्यास करके 'हृदयाय-नमः' कहकर जल का पूजन करें तत्पश्चात् आठ बार मूल मन्त्र का जप करके 'तत्स्यमुद्रा' से जल को ढक दें। तब दक्षिण भाग में शंख की प्रोक्षणी रखें। फिर शंख से कुछ जल लेकर सब ओर प्रोक्षण करें। पूजा की सामग्री तथा अपने शरीर का भी उसी जल से प्रोक्षण करें। ऐसा कर यह भावना करें कि हमारा शरीर परम शुद्ध हो गया है। भगवान् बोले कि हे नारद! इतना कर्म करने के बाद अपने आगे वेदी पर 'सर्वतोभ्रद-मण्डल' बनाकर उसकी कर्णिका के बीच में अगहनी धान के चावल से भर दें। वहाँ विधिवत् कुशकुच अर्थात् २७ कुश स्थापित करके 'ॐ आधारशक्तये नमः', 'ॐ मूलप्रकृत्यै नमः', 'ॐ कूर्माय नमः', 'ॐ शेषाय नमः', 'ॐ क्षमायै नमः', 'ॐ सुधासिन्धवे नमः', 'ॐ दुर्गादेवी योग पीठाय नमः'— इन मन्त्रों का उच्चारण करके पीठपूजा करें तदन्तर अछिद्र कलश लेकर 'ॐ फट्' इस अस्त्र-मन्त्र से उसे प्रक्षालित करें, पुनः त्रिगुणित (तीन धागे वाले) लाल सूत्र (नारे) से उस कलश को आवेष्ठित करें। पुनः नवरत्न एवं कुर्चकुश (पैंती) तथा गंधादि द्रव्यों से उसे पूजित कर उस पीठ पर स्थापित करें। उसे समय 'तार' मन्त्र (प्रवण ॐ या ह्रीं) द्वारा पीठ पर उसे स्थापित करना चाहिए, तारा मन्त्र से नहीं।

भगवान् ने कहा—हे मुनिश्वर! इसके बाद कलश और पीठ में ऐक्य भाव की भावना करें, फिर प्रतिलोम विधि से वर्णमातृका मन्त्र का उच्चारण पूर्ववत् करते हुए तीर्थ जल अथवा गंगाजल से उस कलश को भर दें। साथ सही देवता-बुद्धि से मूलमन्त्र का जप करके उस कलश के मुख को कटहल आम और पीपल के कोमल पल्लव से ढक दें, तदुपरि साक्षत पात्र पर फल या नारियल रखकर दो वस्त्रों से कलश को आच्छादित कर दें। तत्पश्चात् प्राणप्रतिष्ठा का मन्त्र पढ़कर प्राणप्रतिष्ठा करें और आवाहनादि मुद्राओं द्वारा परमाराध्यदेवी को प्रसन्न करें। कल्पोक्त विधि से उन परमेश्वरी देवी का ध्यान करके स्वागत कुशल प्रश्न पूछने की भावना से मन्त्रोच्चारण करें। तब पाद्य, अर्घ्य, मधुपर्क, अभ्यंग आदि देवी को तत्तन्मन्त्रानुसार अर्पण करें।

फिर यहाँ दो लाल रेशमी वस्त्र (पीताम्बर) अर्पण करें कि हम नाना प्रकार के मणिमय भूषण देवी को चढ़ा रहे हैं। इसके बाद मन्त्र सम्पुटित वर्णों द्वारा देवी के समग्र अंगों में मातृका न्यास करके चन्दनादि सुगन्धित द्रव्यों से विधिवत् पूजा करें। अर्थात् हे मुने! काला अगुरु तथा कर्पूरयुक्त गन्ध, कस्तूरीयुक्त केसर, चन्दन एवं कुंद आदि के पुष्प देवी को अर्पण कर विद्वान् पुरुष को चाहिए कि भगवती को अत्यन्त प्रिय अगुरु, गुग्गुल, उशीर (खस) चन्दन शर्करा तथा मधुमिश्रित धूप प्रदान करें। साथ ही घृतदीप प्रदर्शित करके विविध प्रकार का मिष्ठान (नैवेद्य) भी अर्पण करें। स्मण रहे कि प्रत्येक द्रव्य में प्रोक्षणी का थोड़ा बहुत जल अवश्य छोड़े। उसमें दूसरा कोई जल कदापि न छोड़े। तत्पश्चात् अंगपूजा एवं आवरण-पूजा भी कल्पोक्त विधि से करनी चाहिए। इस प्रकार देवी की सांगोपांग पूजा करके दक्षिण दिशा में वेदी बनाकर कुशकण्डिका के साथ अग्नि स्थापन करें, कुण्ड में नहीं। तब वहाँ मूर्तिस्थ देवता का आह्वान करके क्रमशः पूजन करें। उस समय प्रणवपूर्वक व्याहृति सहित मूलमन्त्र द्वारा हवन करना चाहिए। हे मुनिश्वर! घृत सहित खीर की पचास आहुति देकर व्याहृति मन्त्रों से हवन करें तथा गन्ध मिश्रित उपचारों से पूजा करके देवी को तथोक्त पीठ पर पधराए। तब अग्निदेव का विसर्जन करके बचे हुए खीर से दिक्पालों को बलि दें। इसके बाद प्रधान देवता के पार्षदों का गन्ध पुष्पादि से पंचोपचार पूजन करें और उन्हें ताम्बूल, छत्र एवं चवंर अर्पण करें। तब देवी के मूल मन्त्र का एक सहस्र जप करें। इसके बाद ईशान कोण को साफ करके दो कुहाँ करवा स्थापित करें। वहीं पर भगवती श्री दुर्गादेवी की पूजा करें। तत्पश्चात् 'रक्ष-रक्ष' कहते हुए उस करवे की टोंटी से जल गिराकर दाहिनी ओर के मण्डपस्थान का सिंचन करें तथा 'ॐ फट्' इस मन्त्र का जप करें। फिर देवता (दुर्गा) का पूजन करके करवे को पुनः अपने स्थान पर रख दें। इस प्रकार पूजाविधि समाप्त करके गुरुदेव शिष्यों को प्रसाद दें और उनके साथ सावधानी से मौन होकर भोजन करें। उस रात को उसे मण्डप में यत्नपूर्वक शयन करें।

वेदी या कुण्ड का संस्कार विधि—भगवान् ने कहा—हे नारद!

इसके बाद वेदी या कुण्ड का जिस प्रकार संस्कार किया गया जाता है वह प्रसंग मैं संक्षेप में बताता हूँ। सर्वप्रथम मूलमन्त्र का उच्चारण करके कुण्ड अथवा वेदी का निरीक्षण करें, तत्पश्चात् 'ॐ फट्' मन्त्र का उच्चारण करके समिधा आदि का प्रोक्षण एवं ताड़न करें। फिर 'ॐ हुम्' इस कवच मन्त्र से अभ्युक्षण करके वेदी पर तीन-तीन रेखाएं खींचे, जो पूर्व-पश्चिम अथवा उत्तर-दक्षिण वाली हो। प्रणव मन्त्र से अभ्युक्षण करके देवी के सिंहासन की पूजा करें। उसे समय 'ॐ आधारशक्तये नमः' से आरम्भ करके 'ॐ अमुकदेवी योगपीठाय नमः' तक के मन्त्रों द्वारा पीठ की पूजा करनी चाहिए। अर्थात् उस पीठ पर परम दयालु भगवान् शिव और पार्वती का आह्वान करके गन्धादि पंचोपचार से श्रद्धापूर्वक उनकी पूजा करें। तत्पश्चात् इस प्रकार देवी का ध्यान करें—'भगवती पार्वती ऋतुस्नान से निवृत्त होकर भगवान् शंकर के पास विराजमान हैं, इनके मन में मिलन-आकांक्षा जाग्रत हो गई है, ये दोनों देवता अब हास-विलास करना चाहते हैं।'

अग्नि स्थापन तथा संस्कारादि—उपरोक्त की कल्पना करके एक पात्र में अग्नि लाकर उनके सम्मुख रखें। उसमें से क्रव्यादांश का परित्याग करके पूर्वोक्त वीक्षणादि क्रियाओं से अग्नि का संस्कार करें। तत्पश्चात् अग्नि बीज 'रं' का उच्चारण करके उस अग्नि में चेतना की योजना करें। फिर सातबार प्रणव का उच्चारण करके उसे अभिमन्त्रित करें। अब यहाँ गुरु को चाहिए कि वे अग्नि को 'धेनुमुद्रा' प्रदर्शित करें और 'ॐ हुँ' मन्त्र से अवगुण्ठन करें। फिर अपने घुटनों को टेककर प्रणव मन्त्र का उच्चारण करते हुए चन्दनादि से सुपूजित अग्नि को प्रदक्षिणा के क्रम से कुण्ड के ऊपर घुमाए और 'यह अग्नि शिवजी का वीर्य स्वरूप है'—इस भाव से कुण्ड रूपा देवी की योनि में छोड़ दें उस समय भगवान् 'शिव' तथा भगवती 'शिवा' को आचमन कराए। तत्पश्चात 'ॐ चित्पिंगल! हन-हन, दह-दह, पच-पच सर्वज्ञ! आज्ञापय स्वाहा' इस मन्त्र को पढ़कर अग्नि प्रज्वलित करें, क्योंकि 'जातवेदा' नाम से प्रसिद्ध प्रज्वलित इस अग्निदेव को मैं प्रणाम करता हूँ— जो 'हुताशन' संज्ञक हैं और जो सुवर्ण सदृश पीतवर्ण, निर्मल एवं परम प्रदीप्त है तथा चतुर्मुख हैं—

'अग्निं प्रज्वलितं वन्दे जातवेदं हुताशनम्।
सुवर्ण वर्णममलं समिद्धं विश्वतोमुखम्॥'

इस मन्त्र से आदरपूर्वक अग्निदेव की स्तुति करें।

षडंगन्यास—इसके बाद आचार्य को वह्निमन्त्र से षडंगन्यास करना चाहिए। अर्थात् 'ॐ सहस्रार्चिषे—हृदयाय नमः, ॐ स्वस्ति पूर्णाय शिरसे स्वाहा, ॐ उत्तिष्ठ पुरुषाय शिखायै वषट्, ॐ धूमव्यापिने कवचाय हुम्, ॐ सप्तजिह्वाज नेत्रत्रयाय वौषट्, 'ॐ धनुर्धराय अस्त्राय फट्'—इस प्रकार पूर्वस्थान में षडंगन्यास करें। ये नाम अंगन्यास के समय जातियुक्त अर्थात् 'नमः, स्वाहा, वषट्, हुम्, वौषट् तथा फट्' इन पदों से युक्त छह अंगों में न्यस्त होते हैं।

अग्निदेव का ध्यान—अब अग्निदेव का इस प्रकार ध्यान करना चाहिए—'ये अग्निदेव कनकवर्ण है, तीन नेत्रों से सुशोभित हैं और कमल के आसन पर विराजमान हैं।' इसके बाद मंत्रज्ञ साधक को चाहिए कि इष्ट, भक्ति, स्वस्तिक, अभय—इन चारों मुद्राओं को धारण करने वाले, परम मंगल स्वरूप अग्निदेव तथा कुण्ड मेखलाओं का जल से अभिसिंचन कर दें।

परिस्तरण की विधि—इतना करने के बाद कुशाओं से परिस्तरण करें, अर्थात् कुशकण्डिका विधि से स्थापित अग्निकुण्ड के परिधि (वृत्त) त्रिकोण एवं षट्कोण आदि मन्त्रों से विभूषित अष्टदल कमल और भूपुर सहित अग्निस्थापन पूर्वक उस देवता का यहाँ विधिवत् पूजन करें। हे मुने! यह सब कार्य वह्निमन्त्र द्वारा ही सम्पन्न करना चाहिए। विस्तृत विधि इस प्रकार है—'ॐ वैश्वानरो जातवेदः इहावह लोहिताक्षः सर्वकर्माणि साधय स्वाहा।' इस मन्त्र द्वारा बीच तथा षट्कोणों में अवस्थित 'हिरण्या, गगना, रक्ता, कृष्णा, सुप्रभा, बहुरूपा एवं अतिरिक्ता'—अग्नि की इन सात जिह्वों की पूजा करें। तत्पश्चात् अष्टदल कमल के केसरों में अंगों की तथा दलों (पंखुड़ियों) में शक्ति एवं स्वस्तिक धारण करने वाली मूर्तियों की पूजा करें। वे आठ प्रकार की अग्नि मूर्तियाँ 'जातवेदा सप्तजिह्व, हव्यवाहन, अश्वोदरज, वैश्वानर, कौमारतेजा, विश्वमुख तथा देवमुख'—इन नामों से प्रसिद्ध हैं। इनके आदि में 'ॐ अग्नये' और अन्त में 'नमः स्वाहा' इस पद का उच्चारण

करके पूजा करने का विधान है। अर्थात् 'ॐ अग्नये जातवेदसे नमः स्वाहा, ॐ अग्ने सप्तजिह्वाय नमः स्वाहा' इत्यादि आठों दलों में मूर्तियों की पूजा करें। तत्पश्चात् चारों दिशाओं में वज्र आदि आयुध धारण करने वाले लोक पालों की पूजा करें।

हवन विधि—भगवान् नारायण ने कहा—हे मुनिवर! स्रुक्र-स्रुवा तथा घृत का संस्कार करके विधिवत् अग्नि में हवन करें। इस समय घृत को दक्षिण भाग से उठाकर 'ॐ अग्नये स्वाहा।' इस मन्त्र से अग्नि के दक्षिण नेत्र में और वाम ओर से उठाकर 'ॐ सोमाय स्वाहा' से वामनेत्र में तथा ॐ अग्नीषोमाभ्यां इस मन्त्र से अग्नि के मध्य नेत्र में घृताहुति दें। फिर दक्षिण भाग से घृत लेकर 'ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा' इस मन्त्र द्वारा अग्निदेव के मुख में हवन करें। तत्पश्चात् साधक 'ॐ भूः स्वाहा, ॐ भुवः स्वाहा, ॐ स्वः स्वाहा' कहकर त्रिव्याहृति होम करें। स्मरण रहे कि इस प्रकार तीन बार घृताहुति देनी चाहिए। हे मुने! पुनः प्रणव मन्त्र से गर्भाधान आदि आठ संस्कारों के निमित्त घृत की आहुतियाँ दें। वे आठ संस्कार क्रमशः इस प्रकार है—१. गर्भाधान, २. पुंसवन, ३. सीमान्तोन्नयन, ४. जातकर्म, ५. नामकरण, ६. निष्क्रमण, ७. अन्नप्राशन तथा ८. चूड़ा-व्रतबन्ध। इसी प्रकार चार वैदिक संस्करों के लिए भी चार बार प्रणव का उच्चारण करके घृताहुति देनी चाहिए। वे इस प्रकार हैं—१. महामान्य, २. औपनिषद्, ३. गोदान तथा ४. उद्वाहक व्रत। इसके बाद शिव-पार्वती की पूजा विधिवत् करके उनका विसर्जन कर दें।

शिष्य के पार्थिव शरीरस्थ मार्गों का परिशोधन

अब साधक पुरुष अग्नि के निमित्त पाँच समिधाओं को हवन करके आवरण देवताओं के लिए भी एक-एक आहुति प्रदान करें। पुनः स्रुक् में घृत रखकर उसे ढक दें और आसन पर बैठे ही बैठे स्रुवा में लेकर उसी घृत से चार बार और हवन करें, यह आहुति अग्निमन्त्र के साथ 'वौषट्' लगाकर उसी का उच्चारण करके करें। इसके बाद महा गणेश मन्त्र से इस आहुतियाँ देनी चाहिए। तब फिर देय मन्त्र के देवता के आसन की पूजा वही (अग्नि में

ही) करें। साथ ही उन देय मन्त्र सम्बन्धित देवता का ध्यान करके उनके मुख में मूल-मन्त्र का उच्चारण करते हुए पचीस आहुतियाँ दें। उस समय साधक को चाहिए कि वह अपने मन में ये भावना करें—'मुझमें, अग्नि में तथा देय-मन्त्र सम्बन्धित देवताओं में एकता स्थापित हो जाए।' ऐसी कल्पना करके ये आहुतियाँ अवश्य देनी चाहिए। साथ ही फिर छह अंग देवताओं को भी पृथक्-पृथक् छह आहुतियाँ दें। भगवान् नारायण ने कहा—हे नारद! यहाँ अग्नि तथा देय मन्त्र सम्बन्धी देवता की नाड़ियों का एकीकरण करने के लिए ग्यारह आहुतियाँ दें। अर्थात् एक देवता के उद्देश्य से एक आहुति दें। इस प्रकार आवृत्तिपूर्वक क्रमशः एक-एक घृताहुति देनी चाहिए। अन्त में कल्पोक्त होमद्रव्यों अथवा तिल से देवता के मूलमन्त्र का उच्चारण करते हुए १,००८ आहुतियाँ दें। उस समय हे मुने! अपने मन में यह भावना करें कि 'देवी अब मुझ पर प्रसन्न हो गई। साथ ही पुनरावृत्ति से अग्नि एवं देय मन्त्र के देवता भी प्रसन्न हो गए।'

इसके बाद विधिवत् स्नान करके सन्ध्यादि नित्य-कृत्य सम्पादित किए हुए तथा दो वस्त्र धारण करके स्वर्ण का कोई आभूषण (हार या अँगूठी) धारण किए हुए एवं हाथ में कमण्डलु लिए हुए अपने शिष्य को कृपालु गुरुदेव उस कुण्ड के समीप बुला लें। उस समय शिष्य को चाहिए कि विनीत भाव से अपने आचार्य (गुरुदेव) को तथा तत्रस्थ श्रेष्ठ पुरुषों को एवं इष्टदेव-कुलदेव आदि को भी प्रणाम करके वहाँ आसन पर बैठ जाए। तब गुरुदेव दयादृष्टि से उस नए शिष्य को देखें। उस समय वे ऐसी भावना करें कि 'शिष्य की चेतना (शक्ति) मेरे शरीर में आ गई है।' ऐसा सोचकर वे सुधी सद्गुरु दिव्य दृष्टि द्वारा शिष्य को देखें तथा हवन करके शिष्य के पार्थिव शरीरस्थ मार्गों का परिशोधन करें, जिससे शिष्य देवताओं का कृपा-पात्र बन सके तथा दीक्षा लेने का पूर्ण अधिकारी हो सके। भगवान् नारायण ने पुनः कहा—हे मुनिवर नारद! शिष्य के शरीर में क्रमशः छह अध्वाओं का चिन्तन करना चाहिए—पैरों में कलाध्वा का, लिंग में (स्त्री हो तो योनि मे) तत्त्वाध्व का, नाभि में भुवनाध्वा का, हृदय में वर्णाध्वा का, ललाट में पदाध्वा का तथा मस्तक में मन्त्राध्वा का परिचिन्तन करें। तब कुश-कुचे से

शिष्य का स्पर्श करते हुए 'ॐ अमुम् अध्वानं शोधयामि स्वाहा।' इस मन्त्र से घृत मिश्रित तिलों का होम करें। प्रत्येक अध्वा के लिए आठ-आठ आहुतियाँ देनी चाहिएँ। ऐसा करके मन में कल्पना करें कि 'शिष्य के छहों अध्वा अब ब्रह्म में लीन हो गए हैं।' इस प्रकार ब्रह्म में लीन उन अध्वाओं (मार्गों) को पुनः सृष्टि मार्ग से उत्पन्न करने की कल्पना करें। अपने शरीर में स्थित चैतन्य रूप (आत्मा) को शिष्य में नियोजित करना गुरु के लिए परम आवश्यक है।

पूर्णाहुति तथा शिष्य की भूत शुद्धि

इसके बाद अन्त में पूर्णाहुति देकर हवानार्थ आवाहित देवताओं को कलश पर स्थापित करें, पुनः अग्नि के अंगों के उद्देश्य से त्रिव्याहृतियों का उच्चारण करके आहुतियाँ दें। स्मरण रहे—एक-एक देवता के लिए एक-एक आहुति देकर आत्मा में अग्नि का विसर्जन कर दें। तदन्तर 'ॐ वौषट्' इस मन्त्र को पढ़कर गुरु शिष्य के दोनों नेत्रों को ढक दें और उसे कुण्ड के पास से उठकर कलश के पास उपस्थित होने की आज्ञा दें पुनः शिष्य के हाथ से प्रधान देवी के लिए पुष्पाञ्जति समर्पित कराए।

इसके बाद नेत्रों का आवरण हटाकर शिष्य को कुशासन पर बैठा दें और पूर्वोक्त पद्धति से शिष्य के शरीर की भूत शुद्धि करें।

गुरु-मन्त्र

इसके बाद शिष्य के शरीर में मन्त्रोक्त न्यास करके उसे दूसरे मण्डप में शान्त भाव से बैठ जाने की आज्ञा दें। फिर कलश में रखे हुए पल्लवों को शिष्य के मस्तक पर रखकर मातृका जप करें। पुनः कलशस्थ दिव्य जल से शिष्य (यजमान) को नहाने की आज्ञा दें। स्नान के बाद शिष्य के कल्याणार्थ 'वर्धनी' संज्ञक कलश-जल से अभिषेक करें। साथ ही दो नए वस्त्र धारण करके भस्म त्रिपुण्ड (तिलक) धारी वह मन्त्राधिकारी शिष्य गुरुदेव के समीप आकर बैठ जाए। तब परम् कृपालु गुरु अपने मन में ऐसी भावना करें कि 'भगवती शिवा मेरे हृदय से निकलकर अब इस शिष्य के हृदय में विराज रही

है। अत: उन दोनों में ऐक्य की सद्‌भावना से गन्धादि पंचोपचार द्वारा उन (आत्माओं) की अर्चना करें। इसके बाद गुरुदेव शिष्य के सिर पर अपना दाहिना हाथ रखते हुए, उसके दक्षिण कर्ण में महादेवी के महामन्त्र का तीन बार उपदेश करें। उस समय शिष्य भी उस मन्त्र का १०८ बार (एक माला) सावधानी से जप करें तथा शिष्य अपने गुरुदेव को देवता स्वरूप मानता हुआ पृथ्वी पर साष्टांग दण्डवत् करें। साथ ही अपने को अर्पण कर दें और इसी प्रकार की सद्‌भावना अपने मन में जीवन पर्यन्त वह गुरु के प्रति सर्वदा रखें।

अन्त्य के कृत्य

इस प्रकार मन्त्र-दीक्षा करके ऋत्विजों को यथाशक्ति दक्षिणा दें और ब्राह्मणों तथा बन्धुओं को भोजन कराए, साथ ही उस अवसर पर सौभाग्यवती विप्र स्त्रियों, कन्याओं एवं ब्रह्मचारियों (वटु-विद्यार्थियों) को भी सम्यक् प्रकार से भोजन कराए। धन की कृपणता न करके दीनों, अनाथों एवं दरिद्रों की भी सेवा करें। शिष्य अपने को कृतार्थ समझकर 'गुरु-मन्त्र' की नित्य उपासना करें।
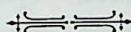
कामाख्या देवी के दर्शन

कामाख्या देवो के मन्दिर में प्रवेश करते ही सामने बारह प्रस्तर स्तम्भों के मध्य देवी की चलन्ता मूर्ति परिलक्षित होती है। इसी का दूसरा नाम हर गौरी मूर्ति या भोगमूर्ति है।

प्रणाम मन्त्र

कामाख्ये कामसम्पन्ने कामेश्वरि हरप्रिये।
कामनां देहि मे नित्यं कामेश्वरि नमोऽस्तु ते॥

अनुज्ञा मन्त्र

कामदे कामरूपस्थे सुभगे सुरसेविते।
करोमि दर्शनं देव्याः सर्वकामार्थसिद्धये॥

यह चलन्ता, हरगौरी अथवा भोगमूर्ति अष्टधातुमयी है। यह प्रस्तर निर्मित पचस्तर विशिष्ट सिंहासनासीन है, मूर्ति इस प्रकार की है कि उत्तर में वृषभवाहन, पंचवक्त्र एवं दशभुज विशिष्ट कामेश्वर महादेव अवस्थित हैं। दक्षिण भाग में षडानना, द्वादशबाहु विशिष्टा अष्टादश लोचना सिंहवाहिनी कमलासना देवी मूर्ति है। यह मूर्ति महामाया कामेश्वरी नाम से प्रख्यात है।

विष्णुब्रह्मशिवैर्देवैर्धृयते या जगन्मयी।
सितप्रेतो महादेवो ब्रह्मा लोहितपंकजम्॥
हरिर्हरिस्तु विज्ञेयो वाहनानि महौजसः।
स्वमूर्त्तौ वाहनत्वन्तु तेषां यस्मान्न युज्यते॥

—कालिका पुराण

वही जगन्मयी कामेश्वरी ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव कर्त्तक घृत हैं, महादेव

ही यहाँ सितप्रेत अर्थात् शवरूप हैं, ब्रह्मा ही लोहित पंकज हैं एवं विष्णु सिंह रूप से अवस्थित हैं, इन देवताओं को अपनी-अपनी मूर्ति में वाहन, बनना युक्ति युक्त नहीं है—इसलिए ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर अन्य रूप धारण कर देवी के वाहन बने हुए हैं।'

जो साधक वाहन सहित देवी की इस मूर्ति का ध्यान एवं पूजा करते हैं, उनके द्वारा ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर ये तीनों देवता भी पूजित होते हैं।

वार्षिक उत्सवों तथा विशेष पर्वपार्वण के दिनों में यह चलन्ता मूर्ति भ्रमण कराई जाती है। तीर्थ-यात्री पहले कामेश्वरी देवी एवं कामेश्वर शिव का दर्शन करते हैं। इसके बाद देवी के महामुद्रा का दर्शन करते हैं। देवी की योनिमुद्रा पीठ दश सोपान (सीढ़ी) नीचे अन्धकार पूर्ण गुफा में अवस्थित होने के कारण वहाँ सदा दीपक का प्रकाश रहता है।

कामाख्या देवी का प्रणाम मन्त्र

कामाख्ये वरदे देवि नीलपर्वतवासिनि।
त्वं देवि जगतां मातर्योनिमुद्रे नमोऽस्तु ते॥

स्पर्श मन्त्र

मनोभवगुहा मध्ये रक्तपाषाण रूपिणी।
तस्याः स्पर्शनमात्रेण पुनर्जन्म न विद्यते॥

चरणामृत-पान मन्त्र

शुकादीनाञ्च यज् ज्ञानं यमादि परिशोधितम्।
तदेव द्रवरूपेण कामाख्या योनिमण्डले॥

देवी महामाया से जो जैसी याचना करते है और देवी की प्रसन्नतार्थ जप, होम, पूजा-पाठादि करते हैं, देवी उनके मन की अभीष्ट कामनाओं को उसी रूप में पूर्ण करती हैं। जो भक्तिभाव से देवी की योनिमण्डल का दर्शन, स्पर्शन तथा मुद्रा का जलपान करते हैं वे देवऋण, पितृऋण एवं ऋषिऋण से मुक्त होते हैं। यथा—

ऋणानि त्रीण्यपाकर्तुं यस्य चित्तं प्रसीदति।
स गच्छेत् परया भक्त्या कामाख्या योनि सन्निधि।

—योगिनी तन्त्र

पितृऋण, ऋषिऋण एवं देवऋण चुकाने के लिए जिसका मन प्रसन्न हो वह परम भक्तिभाव के साथ कामाख्या योनिमण्डल के निकट जाए।

गवां कोटि प्रदानात्तु यत्फलं जायते नृणाम्।
तत्फलं समवाप्नोति कामाख्या पूजयेन्नरः॥

—कालिका पुराण

कोटि गोदान करने से मनुष्य को जो फल मिलता है वही फल कामाख्या देवी की पूजा करने से प्राप्त होता है।

चार वर्ग क्षेत्र विशिष्ट शिलापीठ के ऊपर, जहाँ से निरन्तर पाताल से जल निकलता रहता है, वही कामाख्या का योनिमण्डल है। इस योनिमण्डल का परिमाण एक हाथ लम्बा एवं बारह अंगुल चौड़ा है और सत्तासी धनु परिमित स्थान में रूक्ष रक्त है एवं सपुलत अष्टहस्त तथा पचास हजार पुलकान्वित शिवलिंग युक्त है। यथा—

सप्तशीति धनुर्मानं रूक्षरक्त शिला च या।
अष्टहस्तं सपुलकं लिंग लक्षार्द्धसंयुतम्॥
चतुर्हस्त समं क्षेत्रः पश्चिमे योनिमण्डलम्।
बाहुमात्रमिदञ्चैव प्रस्तारे द्वादशांगुलम्॥
आपातालं जलं तत्र योनिमध्ये प्रतिस्थितम्॥

—योगिनी तन्त्र

तृमा अंग होने के कारण इसका आधा भाग सोने के टोप से ढका रहता है और टोप को भी वस्त्र एवं पुष्प माल्यादि से आवृत तथा सुशोभित रखा जाता है। दर्शन, स्पर्शन एवं जप-पूजादि के लिए केवल एक अंश उन्मुक्त रखा जाता है। मातृअंग निपतित होकर यहाँ अवस्थित होने के कारण इस महातीर्थ को शक्तिपीठ स्थान कहा जाता है और यह सभी तीर्थों में प्रधान है। आद्याशक्ति प्रसन्न होने पर जीव को मुक्ति प्रदान करती है। अतः शक्ति साधक देवी को प्रसन्न करने के लिए कामाख्या को सर्वप्रधान

शक्तिपीठ तथा तान्त्रिक क्रिया पद्धति का केन्द्र समझकर, यहाँ आकर महामुद्रा का नित्य दर्शन एवं उपासना करना जीवन का महान् कर्त्तव्य मानते हैं। इस पुण्य भारत भूमि के अनेक प्रातःस्मरणीय महापुरुषों ने इस पीठस्थान में आगमन कर तपस्या द्वारा सिद्धि लाभ किया है, इस बात का यथेष्ट प्रमाण है। आज भी उन सिद्धि साधकों के वंशधरों में से लोग यहाँ आते रहते हैं।

लक्ष्मी सरस्वती

महामाया की दस महाविद्या अर्थात् दस विभूतियों के अन्तर्गत षोडशी, कामाख्या देवी का ही अन्य नाम है, एवं वे ही देवीपीठ में अवस्थित हैं। इसी देवीपीठ से संलग्न पूर्वप्रान्तर में मातंगी (सरस्वती) एवं कमला (लक्ष्मी) देवी का पीठस्थान है। यहाँ यथाशक्ति पूजा कर प्रणाम करें।

प्रणाम मन्त्र

सदाचार प्रिये देवि, शुक्ल पुष्पाम्बर प्रिये।
गोमयादि शुचि प्रीते महालक्ष्मि नमोऽस्तु ते॥
सरस्वत्यै नमो नित्यं भद्रकाल्यै नमो नमः।
वेदवेदान्तवेदांग विद्यास्थानेभ्य एव च॥

स्पर्शन मन्त्र

मध्ये च कुब्जिके देवि प्रान्ते प्रान्ते च भैरवी।
एकैक स्पर्शनात् देव्याः कोटि जन्माघनाशनम्॥

इसके बाद महामाया का दर्शन, स्पर्शन, पूजनादि करें। अनन्तर चलन्ता मन्दिर के चारों ओर दीवालों से संलग्न देव-देवियों की मूर्ति का दर्शन करें। मंगलचण्डी, कल्कि अवतार, युधिष्ठिर, श्री रामचन्द्र, बटुक भैरव, नारायण गोपाल, कूचविहार के राजा नर नारायण की प्राचीन मूर्ति, अन्नपूर्णा, द्रोणाचार्य, कूचविहार के महाराजा के भाई वीर चिलाराय की मूर्ति, नील-कण्ठ महादेव, नन्दी, भृंगी, कपिल मुनि, मनसा देवी, जरत्कारू मुनि, कूचविहार के दोनों महाराजों का मन्दिर निर्माणादि विषय कीर्तिज्ञापक शिलालिपि आदि तथा पंचरत्न मन्दिर की चामुण्डा देवी का दर्शन करें।

चामुण्डा का प्रणाम मन्त्र

महिषाघ्नि महामाये चामुण्डे मुण्डमालिनि।
आयुरारोग्यमैश्वर्यं देहि मे परमेश्वरि।

इसके अतिरिक्त नाटमन्दिर के भीतर, आहोम राजा राजेश्वरसिंह और गौरीनाथसिंह की शिला और ताम्रलिपियाँ हैं। यात्रियों के तीर्थकृत्य, कर्मकाण्ड विशेषकर कुमारी पूजा, दान, भोज्य उत्सर्ग आदि कर्मानुष्ठान इसी पंचरत्न मन्दिर के भीतर तीर्थ के पुजारी ब्राह्मणगण सम्पादन करवाते हैं।

कुमारी पूजा

महातीर्थ कामाख्या में महामाया कुमारी रूप में विराजमान है। यात्रीगण देवी भाव से कुमारी पूजा कर कृतकृत्य होते हैं। जिस तरह प्रयाग में मुण्डन एवं काशी में दण्डी भोजन करवाने की विधि है, उसी तरह कामाख्या में कुमारी पूजा आवश्यक कर्त्तव्य है। यहाँ कुमारी पूजा करने से सर्व देव-देवियों की पूजा करने का फल प्राप्त होता है। भक्तिभाव एवं कर्त्तव्य बुद्धाय कुमार पूजा करने से अवश्य पुत्र, धन, पृथ्वी, विद्या आदि का लाभ होता है एवं मन की सभी इच्छाओं की पूर्ति होती है।

सर्वविद्यास्वरूपा हि कुमारी नात्र संशयः।
एकाहि पूजिता बाला सर्वं हि पूजितं भवेत्॥

—योगिनीतन्त्र

कुमारी सर्वविद्या स्वरूपा है, इसमें सन्देह नहीं। एक कुमारी पूजा करने से सम्पूर्ण देव-देवियों की पूजा का फल होता है।

ध्यानम्

ॐ बालरूपाञ्च त्रैलोक्य सुन्दरीं वरवर्णिनाम्।
नानालंकार नाम्राङ्गी भद्रविद्या प्रकाशिनीम्।
चारुहास्यां महानन्द हृदयां चिन्तयेत् शुभाम्॥

आवाहनम्

ॐ मन्त्राक्षरमयीं देवीं मातृणां रूपधारिणीम्।
नवदुर्गात्मिकां साक्षात् कन्यामावाहयाम्यहम्॥

प्रणाम मन्त्र

ॐ जगद्वन्दे जगत्पूज्ये सर्वशक्ति स्वरूपिणि।
पूजां गृहाण कौमारी जगन्मातर्नमोऽस्तु ते॥

देवी मन्दिर का प्रदक्षिणा मन्त्र

यानि यानीह पापानि जन्मान्तरकृतानि च।
तानि तानि विनश्यन्ति प्रदक्षिण पदे पदे॥

कम्बलेश्वर

कामाख्या देवी के मन्दिर के चारों ओर पर्वत के ऊपर भिन्न-भिन्न स्थानों में दशमहाविद्या के मन्दिर में देवी के नव-योनिपीठ के अन्तर्गत अन्य सातपीठ-स्थान विद्यमान हैं। पंचानत के पाँचों मुख की ओर पाँच शिव-मन्दिर अवस्थित हैं। कम्बलेश्वर नाम का विष्णु-मन्दिर देवी मन्दिर के सन्निकट अवस्थित है। यहाँ भगवान् विष्णु कम्बलाख्य नाम से प्रसिद्ध हैं। इसके बाहर भी कामेश्वर और सिद्धेश्वर के मन्दिर के बीच में केदार क्षेत्र और उक्त दो मन्दिरों के दक्षिण प्रान्त में कुछ दूरी पर वन के बीच वनवासिनी, जयदुर्गा तथा ललिता-कान्ता के नाम से तीन शिलापीठ विद्यमान हैं।

कम्बलेश्वर प्रणाम मन्त्र

नमो नमस्ते देवेश श्याम श्रीवत्सभूषित।
लक्ष्मीकान्त नमस्तेऽस्तु नमस्ते पुरुषोत्तम॥
देवदानव गन्धर्वपादपद्मार्चित प्रभो।
नमो बरदालिंगाय कम्बलाय नमो नमः॥

अनुज्ञा मन्त्र

नमस्ते कम्बलेशाय महाभैरवरूपिणे।
अनुज्ञां देहि मे नाथ कामाख्या दर्शनं प्रति॥

देवी-पूजा-पटल

राजा सुरथ ने प्रश्न पूछा—हे मुनिश्वर! अब भगवती जगदम्बा की आराधना-विधि भली भाँति बताने की कृपा कीजिए। साथ ही पूजाविधि,

होम विधि तथा मन्त्र-साधना भी समझाइए।

तब सुमेधा मुनि ने उत्तर दिया—हे राजन्! सुनिए अब मैं भगवती की पूजा का उत्तम प्रकार बताता हूँ, जिसके प्रभाव से मनुष्यों की अभिलाषाएँ पूर्ण हो जाती हैं, वे परमसुखी, ज्ञानी और मोक्ष के अधिकारी बन जाते हैं।

देवी पूजा—हे राजन् ! जिस तरह विष्णु सर्वश्रेष्ठ तथा लक्ष्मी सर्वोत्तम हैं, उसी प्रकार काम रूप में देवी की पूजा सर्वोत्तम कही गई है। कामरूप देवी का ही क्षेत्र है जहाँ देवी का साक्षात् वास है। इस जैसा क्षेत्र अन्यत्र कहीं नहीं है। देवी अन्यत्र विरला हैं परन्तु कामरूप में घर-घर में विराजमान हैं। देवी पूजा जैसा कार्य इस क्षेत्र में जितना सिद्धदायक है उतना अन्यत्र कहीं नहीं। यहाँ पूजाकर के मनुष्य वांछित फल प्राप्त करके दीर्घजीवी हो सकता है।

अनुष्ठान विधि—साधक को चाहिए कि वह पहले शौच स्नान करके पवित्र हो, स्वच्छ वस्त्र धारण कर लें तत्पश्चात् गोबर से लिपे शुद्ध स्थान में आसन पर बैठ, सावधानी से आचमन प्राणायाम करें। साथ ही पूजा सामग्री को जल से पवित्र कर लें। तब प्राणायाम के बाद यथाविधि भूतिशुद्धि एवं प्राण-प्रतिष्ठा करके देवी की मूर्ति को विधिवत् स्थापित करें। मूर्ति के आगे एक शिला रख लाल कपड़े से ढक दें। उस लाल कपड़े पर लिंगस्था देवी (कामाक्षा देवी) का यन्त्र स्थापित कर पूजा जपादि करें। कामरूप में सदैव प्रेम पूर्वक देवी का पूजा जपादि ही करें।

उपरोक्त सब कार्य मास तिथि वार का उच्चारण करके संकल्प पूर्वक मन्त्र के साथ करना चाहिए। चित्र या मूर्ति के सामने किसी सुन्दर ताम्र-पात्र पर श्वेत तथा रक्त चन्दन से षटकोण यन्त्र लिखें। उसके बाहर अष्टकोण यन्त्र लिखकर उस यन्त्र के प्रत्येक दल में नवाक्षर मन्त्र के एक-एक अक्षर लिखकर नवों अक्षर उस यन्त्र की कर्णिका में लिखें। तदनन्तर वेदोक्त या तंत्रोक्त विधि से प्राण-प्रतिष्ठा करके पूजा करें।

हे राजन्! उपर्युक्त यन्त्र के अभाव में सोने चाँदी आदि धातु की बनी हुई केवल प्रतिमा का ही पूजन तन्त्रोक्त-विधि से करें। अथवा एकाग्रचित्त होकर वेदोक्त मन्त्रों का उच्चारण करके देवी का ध्यान पूजन विधिवत् करें।

नवाक्षर मन्त्र का जप बराबर करता रहे। साथ ही देवी के ध्यान से कभी विरत न हो।

इस प्रकार अनुष्ठान के बाद दशांश हवन तथा दशांश तर्पण भी करना चाहिए। साथ ही जपानुसार तर्पण को दशांश संख्या में ब्राह्मण भोजन भी करना चाहिए। जब तक अनुष्ठान रहे तब तक प्रतिदिन 'दुर्गा सप्तशती' के तीनों चरित्रों (कीलक, कवच, अर्गला सहित त्रयोदश अध्यायों) का पाठ होना चाहिए। तत्पश्चात् देवी का विसर्जन करना चाहिए। इस प्रकार नवरात्र व्रत का विधान विधिवत् समाप्त करें। हे राजन्! अश्विन मास तथा चैत्रमास के शुक्ल पक्ष में नवरात्र व्रत होता है। शुक्ल प्रतिपदा से नवमी तक व्रतानुष्ठान एवं व्रतोपवास करके कल्याण चाहने वालों को विधिवत् होम करना चाहिए। सुन्दर खीर एवं शाकल्य में घृत, मधु एवं चीनी मिलाकर जप के मन्त्र (नवार्ण अथवा जो मन्त्र जपे उन मन्त्रों) से हवन करें। अथवा बकरे के मांस, विल्वपत्र तथा लाल कनैर एवं जपाकुसुम (अड़हुल) के फूल में तिल शक्कर मिलाकर हवन करने का विधान है। अष्टमी, नवमी और चतुर्दशी तिथि को विशेष रूपेण देवी का पूजन एवं ब्राह्म्ण भोजन का विधान है।

अनुष्ठान फल—हे राजन्! ऐसा करने से निर्धन व्यक्ति धनवान हो जाता है। रोगी के रोग दूर हो जाते हैं और सन्तानहीन पुरुष को मातृ-पितृ एवं शुभ लक्षणयुक्त पुत्र उत्पन्न होते हैं। यहाँ तक कि राज्यच्युत राजा स्वराज्य प्राप्त कर लेता है। साथ ही शत्रु द्वारा सताया गया पुरुष अपने शत्रुओं को समाप्त कर देता है। इस प्रकार महामाया जगदम्बा की कृपा से मनष्य सफल मनोरथ हो जाता है। जो विद्यार्थी इन्द्रियों को वश में करके ब्रह्मचर्य पूर्वक भगवती की आराधना करता है, उसे सर्वोत्तम विद्या प्राप्त हो जाती है। इसमें तनिक भी संशय नहीं। इसलिए ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्रादि कोई भी मनुष्य यदि श्रद्धा भक्तिपूर्वक भगवती की उपासना करें तो अवश्यमेव सुख का भागी होता है। जो स्त्री अथवा पुरुष भक्ति पूर्वक नवरात्र का व्रत करता है, उसका मनोरथ कभी विफल नहीं होता। आश्विन मास के शुक्ल पक्ष में जो यह उत्तम नवरात्र व्रत करता है, वह सब प्रकार का मनोवांछित फल प्राप्त करता है।

देवी पूजा का क्रम—अतः विधिवत् मण्डप बनाकर पूजा स्थान का निर्माण करना चाहिए। सर्वप्रथम वैदिक मन्त्रों द्वारा वेदी पर कलश स्थापन करें। तत्पश्चात् सुन्दर यन्त्र बनाकर कलश के ऊपर रखे और उस कलश के चारों ओर उत्तम जौ बो देना चाहिए। फिर उस मण्डल (वेदी) के ऊपर चाँदनी लगा देना चाहिए, जिससे पूरा स्थान सुशोभित हो जाए। उस पूजा मण्डप को यथाशक्ति तोरण पताका एवं पुष्प माला आदि से सजा देना चाहिए। धूप-दीप द्वारा देवी के स्थान को सुगन्धित एवं सुसज्जित कर देना चाहिए। तत्पश्चात् प्रातः मध्याह्न तथा सायंकालीन पूजा विधिवत् करके आरती उतारनी चाहिए। इस कार्य में कृपणता न करनी चाहिए। इस प्रकार देवी की पूजा करके धूप-दीप, नैवेद्य आदि (षोडशोपचार) से पूजा करें। पुष्प-पत्र, फल एवं मिष्ठान का प्रसाद विवरण करना चाहिए। साथ ही देवी पुराण, सप्तशती, दुर्गापाठ, वेदपाठ एवं पुराण पाठ के साथ-साथ संगीत एवं कीर्तन का भी प्रबन्ध करना चाहिए। वैभव के अनुसार नृत्य आदि का प्रबन्ध करके देवी का उत्सव मंगल करना चाहिए। अन्त में हवन पूजन के बाद कन्या पूजन भी विधिवत् होना चाहिए तथा उन कन्याओं को भोजन भी कराना चाहिए। कन्या पूजन में वस्त्र, भूषण, चन्दन, माला तथा अनेक प्रकार के भोज्य पदार्थों एवं सुगन्धित द्रव्यों का व्यवहार अवश्य करना चाहिए। इससे भगवती बहुत प्रसन्न होती है। उपर्युक्त विधि से पूजन करने के बाद अष्टमी या नवमी को विधिवत् मन्त्रोच्चारण पूर्वक होम करें। तब दशमी के दिन (विजया दशमी) अपराजिता देवी का पूजन करके शास्त्रादि का पूजन भी करें और ब्राह्मण-भोजन कराकर स्वयं भी व्रत का पालन करें। उस समय यथाशक्ति ब्राह्मणों को दान-दक्षिणा देकर विदा करें।

इस प्रकार जो पुरुष तथा सधवा या विधवा नारी भी भक्तिपूर्वक नवरात्र व्रत करती हैं, वह इस लोक में नाना प्रकार के मनोवांछित सुखों का उपभोग करती हैं और अन्त में देह त्याग कर दिव्य देवो लोक में चली जाती है।

देवी पूजन न करने का परिणाम—जो मनुष्य जड़ता वश देवी के पूजन नहीं करते उनके इस जन्म के और उस जन्म के पुण्य नष्ट हो जाते हैं,

वे इस लोक में अनेक प्रकार के रोग से जकड़े रहते हैं, सर्वत्र अनादर के पात्र बने रहते हैं और शत्रुओं से पराजित होकर नाना प्रकार के कष्ट सहते हैं।

कुमारी पूजन—भक्त को देवीजी की अतिशय प्रसन्नता के लिए कुमारी कन्याओं को भोजन अवश्य खिलाना चाहिए। ये कुमारियाँ संख्या ९ में होनी चाहिए। इनमें २ वर्ष से कम तथा १० वर्ष से अधिक की कन्याएँ नहीं होनी चाहिए। इन ९ कुमारी देवियों के नाम मन्त्र क्रमशः ये हैं—१.कुमार्यै नमः, २. त्रिमुर्त्यै नः, ३. कल्याण्यै नमः, ४. रोहिण्यै नमः, ५. कालिकायै नमः, ६. चण्डिकोयै नमः, ७. शाम्भव्यै नमः, ८. दुर्गायै नमः तथा ९. सुभद्रायै नमः। इन कुमारियों में हीनांगी, अधिकांगी, कुरूपा नहीं होनी चाहिए। इनका इन्हीं मन्त्रों से पूजन कर भोजन कराए। जब कुमारी देवी भोजन कर लें तो उनसे अपने सिर पर अक्षत छुड़वाए और उन्हें दक्षिणा दें। इस तरह करने पर महामाया भगवती अत्यनत प्रसन्न होकर अपनी सिद्धि देती है और साधक के मनोरथों को पूर्ण कर देती है।

विशेष पूजनाध्याय—जो मनुष्य श्रीदेवी को श्रद्धा भक्तिपूर्वक पंचामृत से स्नान कराता है, वह देवी के सायुज्य को प्राप्त होता है। जो लाल गन्ने के रस से भरे हुए सैंकड़ों घड़े (कलशों) द्वारा भगवती को स्नान कराता है, वह आवागमन से रहित हो जाता है। जो पुरुष आम के रस से या ईख के रस से देवी का अभिषेक करता है अथवा अंगूर या मुनक्का के रस से स्नान कराता है, वह देवीलोक को जाता है। जो पुरुष कपूर, अगरु, केसर, कस्तूरी तथा कमल के जल से देवी को स्नान कराते हैं, उनके सैकड़ों जन्म के अर्जित पाप पुंज भस्मीभूत हो जाते हैं। जो कलश में भरे दूध से देवी को स्नान कराते हैं, वे कल्प पर्यन्त क्षीर सागर में निरन्तर निवास करते हैं। इसी प्रकार जो दही से स्नान कराते हैं वे दधिसागर या दधिकुण्ड के अधिपति होते हैं। मधु-घृत तथा शर्करा (विषम भाव से मिश्रित) के रस से स्नान कराने वाले पुरुषों को उन उन वस्तुओं के स्वामी होने का सौभाग्य प्राप्त होता है, अर्थात् वे मधुकुल्यादि नदियों के स्वामी होते हैं। जो लोग भक्तिपूर्वक सहस्रों घड़ों से देवी को स्नान कराते हैं,वे इस लोक में जीवनपर्यन्त सुखी रहते हैं और अन्त में परलोक में भी सुखी होते हैं।

जो भक्त देवी को श्रद्धा भक्ति पूर्वक रेशमी वस्त्र चढ़ाते हैं वे वायुलोक में जाते हैं। जो रत्न निर्मित भूषण प्रदान करते हैं, वे धनाढ्य घर में जन्म पाकर खजाने के स्वामी बनते हैं। जो काश्मीर का या मलयागिरि का चन्दन तथा कस्तूरी की बिन्दी देवी के भाल पर चढ़ाते हैं और चरणों में महावर लगाते हैं, वे देवताओं के स्वामी बनकर इन्द्रासन पर विराजमान होते हैं।

अब पुष्प-फल चढ़ाने का विधान बताते हैं। देवी को अनेक प्रकार के फल-फूलादि चढ़ाने चाहिए। उन यथा प्राप्त वस्तुओं को देने वाले देवी की कृपा से कैलास को प्राप्त होते हैं। इसी प्रकार परा देवता को जो लोग विल्वपत्र चढ़ाते हैं। उन्हें कहीं कभी किसी प्रकार का क्लेश नहीं होता। त्रिदल विल्वपत्र पर रक्त चन्दन से सुन्दर एवं स्पष्ट अक्षरों में मायाबीज 'ह्रीं' तीन बार (तीन फांक पर) लिखें और बड़ी सावधानी से महामाया मूल प्रकृति के मूल मन्त्र (ॐ ह्रीं भुवनेश्वर्यै नमः) से महादेवी जगदम्बा के श्री चरणों पर श्रद्धा भक्ति के साथ उस कोमल पवित्र पत्र को चढ़ाए। इस प्रकार प्रेम पूर्वक नियम से जो भगवती की उपासना करता है, वह 'मनु' (राजराजेश्वर) होता है। साथ ही जो इसी प्रकार लिखकर एक करोड़ कोमल एवं निर्मल विल्वपत्र देवी को समर्पण करता है, वह ब्रह्माण्ड का अधिपति (ब्रह्मा) बन जाता है। जो व्यक्ति अष्टगन्ध-मिश्रित चन्दनयुक्त कुन्द के नवीन कोटि पुष्पों द्वारा देवी की अर्चना करता है, वह निश्चय ही प्रजापति के पद का अधिकारी हो जाता है। ऐसे ही अष्टगन्ध-चर्चित कोटि-कोटि मल्लिका एवं मालती से भगवती की जो पूजा करता है, वह चतुर्मुख ब्रह्मा होता है। दस करोड़ से पूजा करने वाला मनुष्य देव-दुर्लभ विष्णु-पद को प्राप्त कर लेता है। क्योंकि पूर्वकाल के मन्वनतर में विष्णु भगवान् ने भी इस पद की प्राप्ति के लिए यह व्रत किया था। इस प्रकार सौ करोड़ पुष्पों को चढ़ाने से सूत्रात्मा (सूक्ष्मब्रह्म) की प्राप्ति होती है। क्योंकि विधिवत् भक्तिपूर्वक किए गए इस व्रत के प्रभाव से ही भगवान् विष्णु भी पूर्व समय में 'हिरण्यगर्भ' कहलाए। जो कनेर के फूल, कमल तथा चम्पा के फूल से देवी की पूजा करते हैं वे पुण्यात्मा मनुष्य शक्ति की भक्ति में सर्वदा निरत होने के कारण विविध प्रकार के भोग-विलास का आनन्द लेते हैं। यों तो जपाकुसुम (अड़हुल),

बन्धूक (दुपहरिया का फूल) तथा दाडिम (अनार) का पुष्प भगवती को विशेष प्रिय हैं। अत: इन्हें देवी को चढ़ाने का विधान है। इनके अतिरिक्त और भी अनेक दिव्य पुष्प विधिवत् समर्पण करके देवी को प्रसन्न करना चाहिए। ऐसे देवी भक्तों के पुष्प-फल का अनन्त विस्तार साक्षात् भगवान् भी करने में समर्थ नहीं हो सकते। इसलिए तत्तत् ऋतु के अनुसार उत्पन्न होने वाले सहस्रों नाम वाले, रूप वाले, सुगन्ध वाले, रस वाले, गुण वाले तथा स्वाद वाले पुष्प-फलों को चढ़ाकर सर्वदा श्री महादेवी की पूजा करनी चाहिए। इस प्रकार भक्ति पूर्वक जो भगवती की उपासना करता है, उसके सभी महापातक, उपपातक आदि भस्म हो जाते हैं और शरीरान्त (मरण) होने पर श्री भगवती के देव दुर्लभ चरण-कमलों को प्राप्त कर लेता है, इसमें तनिक भी सन्देह की बात नहीं है।

काला अगुरु, कपूर, चन्दन, सिल्हक (लोहबान), घृत एवं गुग्गुल से धूप देने पर भगवती बहुत प्रसन्न होती हैं, क्योंकि उससे देवी का स्थान भी सुवासित हो जाता है। इससे सन्तुष्ट होकर देव-देवेश्वरी श्रीदेवी जी साधक को तीनों लोकों का वैभव दे देती हैं। अत: कपूर खण्डों से युक्त दीपक देवी को सर्वदा समर्पण करें। इस प्रकार सैकड़ों तथा सहस्रों दीप-दान से नि:सन्देह सूर्यलोक की प्राप्ति होती है।

इसके बाद देवी के सामने विविध प्रकार के नैवेद्य अर्पण करें। उनमें लेह्य, चोष्य, पेय, भोज्य तथा षड्रस सभी पदार्थ हों। अनेक प्रकार के स्वादिष्ट रसीले दिव्यफल हों। ये सभी पदार्थ यथा सम्भव सुवर्ण-पात्रों में रखकर समर्पित करने चाहिए। क्योंकि महादेवी के तृप्त हो जाने पर तीनों लोक तृप्त हो जाते हैं। अखिल संसार के समस्त चराचर प्राणी उन्हीं के रूप तो हैं। अन्त में प्रचुरमात्रा से देवी को पवित्र गंगाजल अर्पित करें। कपूर तथा नारियल युक्त कलश जल (शीतल जल) भी देवी को भेंट करें।

तत्पश्चात् मुखशुद्धि के लिए ताम्बूल, लवंग, इलायची आदि अर्पण करना चाहिए। वह ताम्बूल सुगन्धित द्रव्यों से मिश्रित रहे यह स्मरण रखने की बात है। इन्हें भक्तिपूर्वक अर्पण करने से भगवती जगदम्बा शीघ्र प्रसन्न होती है। फिर मृदंग, वीणा, मञ्जीर, डमरू तथा दुन्दुभी (नगारे) आदि

वाद्यों की ध्वनि से अत्यन्त मनोहर संगीत, कीर्तन, प्रार्थना, स्तुति, वेद-पुराणों के पाठ से उन्हें सन्तुष्ट करना चाहिए। इसके बाद श्रद्धा भक्ति और प्रेमपूर्वक श्रीभगवती को छत्र और चंवर अर्पण करें तथा राजोचित पूजा-सामग्री से देवी की उपासना करें। साथ ही देवी को विविध प्रकार की दान-दक्षिणा देकर नमस्कार पूर्वक उनसे बार-बार क्षमा प्रार्थना करनी चाहिए यही नियम है।

तन्त्रोक्त विधि से ही पूजा करना चाहिए। जो कोई तन्त्रोक्त मन्त्रों द्वारा भगवती का पूजन करते हैं, वे सब इस संसार में सब प्रकार के ऐश्वर्यों से युक्त होते हैं, अर्थात् धन-धान्य, पुत्र-पौत्र एवं सुयश पाकर संसार में सम्मानित होते हैं। वे सम्राट् होते हैं और सभी राजाओं में श्रेष्ठ माने जाते हैं।

निषेध—अक्षत से भगवान् विष्णु की, तुलसी से गणेश की, दूर्वा से देवी की और केतकी के फूल से शिवजी की पूजा नहीं करना चाहिए, ऐसा विधान है।

तिथि नैवैद्य—प्रतिपदा तिथि को भगवती जगदम्बा कामाख्या की पूजा गो घृत से करनी चाहिए अर्थात् षोडशोपचार से देवी की पूजा करके नैवेद्य के रूप में गोघृत अर्पण करके किसी देवी भक्त ब्राह्मण को दे देना चाहिए। ऐसा करने से मनुष्य कभी रोगी नहीं होता। इसी प्रकार द्वितीया तिथि को चीनी का भोग लगाकर ब्राह्मण को दे दें, इससे दीर्घायु मिलती है। तृतीया के दिन भगवती की पूजा में दूध का भोग लगाकर किसी विद्वान् द्विज को दे देना चाहिए, इससे सब प्रकार का कष्ट निवृत्त हो जाता है। चतुर्थी तिथि को मालपूवा का नैवेद्य करके ब्राह्मण को दे दें इन दान के फलस्वरूप दाता के किसी कार्य में विघ्न नहीं आ सकता है। पंचमी तिथि के दिन देवी की पूजा में केले का भोग लगाकर ब्राह्मण को दे दें, ऐसा करने से दाता (साधक) की बुद्धि का विकास होता है। षष्ठी तिथि को देवी-पूजन में मधु का महत्त्व कहा गया है, क्योंकि मधुदान से सौन्दर्य प्राप्त होता है। सप्तमी के दिन भगवती की आराधना में गुड़ का भोग लगाकर किसी द्विज को देना चाहिए, इसके फलस्वरूप साधक पुरुष शोकमुक्त हो जाता है। अष्टमी तिथि को नारियल का भोग लगाकर किसी विप्र या तपस्वी को दे देना चाहिए, इससे

किसी प्रकार सन्ताप (चिन्ता) दाता के पास नहीं आने पाती। नवमी तिथि के दिन देवी को धान का लावा अर्पण करके ब्राह्मण को दें इस दान के प्रभाव से दाता दोनों लोकों में सदा सुखी रहता है। दशमी के दिन भगवती को काले तिल का लड्डू नैवेद्य में चढ़ाना चाहिए, पूजन के बाद वह लड्डू ब्राह्मण को दे दें, ऐसा करने से यमलोक का भय दूर हो जाता है। एकादशी के दिन भगवती का जो दही का भोग लगाकर ब्राह्मण को देता है, उस पर जगज्जननी भगवती अत्यन्त प्रसन्न होती हैं। द्वादशी के दिन चिउड़े का भोग लगाकर ब्राह्मण के लिए जो देता है, वह सन्तानवान् एवं धन्य हो जाता है। जो पुरुष देवी को चतुर्दशी के दिन सत्तू का भोग लगाकर दीन को देता है, उस पर भगवान् शंकर प्रसन्न होते हैं। पूर्णिमा के दिन भगवती को खीर का भोग लगाकर जो श्रेष्ठ ब्राह्मण को अर्पण करता है, वह मानो अपने समस्त पितरों को तार देता है।

इसी प्रकार देवी को प्रसन्न करने के लिए हवन करने की भी बात है। जिस तिथि में जो वस्तु नैवेद्य चढ़ाने के लिए कहा गया है। उसी वस्तु से उन-उन तिथियों में हवन करने का भी विधान है; क्योंकि इस प्रकार का हवन सभी अरिष्टों का नाशक है।

दिवस नैवेद्य—अब वार पूजा बताते हैं—रविवार को खीर का नैवेद्य अर्पण करना चाहिए। सोमवार को दूध, मंगलवाल को केला, बुधवार को मक्खन, गुरुवार को खाँड़, शुक्रवार को चीनी तथा शनिवार को गोघृत का भोग लगाना चाहिए।

नक्षत्र नैवेद्य—अब सत्ताइसों नक्षत्रों के नैवेद्य क्रमशः जानिए—घृत, तिल, चीनी, दही, दूध, मलाई, लस्सी, लड्डू, तारफेनी, शक्कर पाश, कसार, पापड़, घीवर, बरी-पकौड़ी, खजूर-रस, गुड़ घृत मिश्रित चने का मोदक, मधु (शहद), सूरन (जिमीकन्द), गुड़-चिउड़ा, दाख, खजूर, चारक, पूआ, मक्खन, मग्दूल (मूंग के बेसन का लड्डू) तथा अनार (बेदाना) ये २७ वस्तुएँ हैं जो क्रमशः प्रति नक्षत्र में भगवती को नैवेद्य के रूप में विहित हैं।

योग नैवेद्य—अब विष्कुंभादि योगों में अर्पण करने योग्य नैवेद्यों को बताया जाता है, जिन्हें देवी का भोग लगाने से वे परम प्रसन्न होती हैं। वे

पदार्थ ये हैं—गुड़, मधु, दही, मट्ठा, घी, मक्खन, ककड़ी, कोंहड़ा, लड्डू, कटहल, केला, अनार, आम, तिल, सन्तरा, बेर, आँवला, दूध, चना, नारियल, नींबू, कसेरू, लीची, महुआ, जामुन, खजूर तथा सूरन—ये देवी को परम प्रिय नैवेद्य है।

करण नैवेद्य—कसार, मण्डक, फेनी, मोदक, पापड़, लड्डू, घृतपूर, तिल, दही, घृत एवं मधु से पदार्थ करणों के लिए निश्चित हैं। इन्हें आदरपूर्वक देवी को प्रत्येक करण में क्रम से अर्पण करने से भगवती प्रसन्न होकर साधक की मनोकामना पूर्ण कर देती है।

मास विधि—भगवती को प्रसन्न करने का यह अद्भुत श्रेष्ठ साधन है। पूरे वर्ष हर महीने इस विधि से पूजा करनी चाहिए। यह एक प्रकार का अनुष्ठान है जिसको प्रत्येक महीने केवल देवी पूजा करके ही पूर्ण किया जा सकता है।

चैत्र मास की शुक्ल पक्ष में तृतीया के दिन महुआ के वृक्ष में भगवती की स्थापना करके वृक्ष की पूजा करें। उस वृक्ष को पाँचों प्रकार के खाद्य नैवेद्य अर्पण करना चाहिए। इस प्रकार बारह महीने के शुक्ल पक्ष की तृतीया तिथि को पूजन का विधान है। इनमें वैशाख मास में गुड़ निर्मित पदार्थ भोग लगाना चाहिए। ज्येष्ठ में मधु, आषाढ़ में मक्खन से बना पदार्थ, श्रावण में दही, भादों में चीनी, आश्विन में खीर, कार्तिक में दूध, अगहन में फेनी, पौष में लस्सी, माघ में गोघृत तथा फाल्गुन मास में नारियल अर्पण करने का विधान है। इस प्रकार बारहों महीने में बारह प्रकार के नैवेद्यों से देवी का पूजन क्रमशः करना चाहिए। मंगला, वैष्णवी, माया, कालरात्रि, दुरत्यया, महामाया, मातंगी, काली, कमलवासिनी, शिवा, सहस्रचरणा तथा सर्व मंगलरूपिणी—इन द्वादश नामों का उच्चारण करके महुए के वृक्ष में भगवती कामाख्या की भावना से पूजन करें। इसके बाद मधूक वृक्ष में विराजने वाली देव देवेश्वरी महादेवी भगवती शिवा को व्रत समाप्ति पूर्वक समस्त कामनाओं की सिद्धि के लिए इस प्रकार उनकी स्तुति करे—

नमः पुष्करनेत्रायै जगद्धात्र्यै नमोऽस्तु ते।
माहेश्वर्यै महादेव्यै महामङ्गलमूर्त्तये॥

परमा पापहन्त्री च परमार्ग प्रदायिनी।
परमेश्वरी प्रजोत्पत्तिः परब्रह्मस्वरूपिणी॥
महादात्री मदोन्मत्ता मातगस्या महीश्वरः।
मनस्विनी मुनिध्येया मार्तण्डसहचारिणी॥
जय लोकेश्वरि प्राज्ञे! प्रलयाम्बुदसन्तिभे।
महामोह विनाशार्थ पूजिताऽसि सुराऽसुरैः॥
यमलोकाऽभावर्त्री यमपूज्यां यमाऽग्रजा।
यमनिग्रह रूपा च यमनीये नमोनमः॥
समस्वभावा सर्वेशी सर्वसङ्गविवर्जिता।
सङ्गनाशकरी काम्यरूपा कारुण्यविग्रहा॥
कङ्कलक्रूरा कामाक्षी मीनाक्षी मर्मभेदिनी।
माधुर्यरूपशीला च मधुरस्वरपूजिता॥
महामन्त्रवती मन्त्रगम्या मन्त्रप्रियङ्करी।
मनुष्यमान सगमामन्मथारी प्रियङ्करी॥
अश्वत्थवटनिम्बाऽम्रक पित्थ बदरीगते!।
पसाऽर्ककरीरादि क्षीरवृक्षस्वरूपिणि!॥
दुग्धवल्लीनिवासार्हे! दयनीये वलाधिके!।
दाक्षिण्य करुणारूपे जय सर्वज्ञ वल्लभे!॥

यह स्तोत्र देवी को परम प्रिय है। पूजनोपरान्त इस प्रकार की स्तुति से देवेश्वरी जगदम्बा की स्तुति करने वाले मनुष्यों को व्रत सम्बन्धी सम्पूर्ण पुण्य सुलभ हो जाते हैं। यह स्तोत्र देवी को प्रसन्न करने का सर्वोत्तम साधन है। अतः जो मनुष्य इसका निरन्तर पाठ करता है उसे आधि-व्याधि तथा शत्रु आदि का भय नहीं रहता। इस स्तोत्र के प्रभाव से धनार्धी धन तथा धर्मार्थी पुरुष धर्म पा लेता है। इस स्तोत्र में वशीकरण शक्ति है, अतः प्रतिदिन पढ़ने वाले के वश में सारा चराचर रहता है। किसी प्रकार के मनोरथ की इच्छा रखने वाले के मनोरथ पूर्ण हो जाते हैं और मुमुक्षु पुरुष मोक्ष पा लेते हैं। यहाँ तक कि चारों वर्ण के लोग अपने-अपने कर्त्तव्य में सफलता प्राप्त कर लेते हैं, अर्थात् ब्राह्मण वेद-सम्पन्न, क्षत्रिय विजयी,

वैश्य धनाढ्य एवं शूद्र अपनी सेवाओं से सुख सम्पन्न हो जाता है। अतः जो मनुष्य श्राद्धकाल में एकाग्र मन से इस स्तोत्र का पाठ करता है या सुनता है, उसके पितर लोग कल्पान्त तक तृप्त रहते हैं। देवताओं से पूजित एवं मुक्ति-प्रदात्री इस भगवती की आराधना को जो मनुष्य श्रद्धा-भक्ति के साथ नित्य करता है, वह अवश्य ही देवीलोक का अधिकारी होता है। देवी पूजा के प्रभाव से सभी कार्य सिद्ध होते हैं और अन्त में सभी पापों को हरने वाली विशुद्ध बुद्धि प्राप्त होती है। वह पुरुष जहाँ-जहाँ जाता है, वहाँ-वहाँ सर्वत्र ही उसे धन-धान्य एवं सुयश लाभ होता है। देवी के भक्तजन को स्वप्न में भी नरक का भय नहीं रहता, और उनकी कृपा से पुत्र-पौत्रादि की वृद्धि में पूर्ण सफलता मिलती है। श्री कामाख्या देवी की पूजा एवं स्तुति सब प्रकार के मंगलों को देने वाली है। साथ ही बारहों मास महुए के वृक्ष के पूजन भी सब कामनाओं को देने वाला है। इसलिए सबको विधिवत् देवी पूजन करना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने वाले लोगों को न कभी रोग होता है न कोई भूत-प्रेतादि की बाधा सताती है। साथ ही यह स्तोत्र ही मन्त्र भी है। प्रतिदिन इसका पाठ करने वाला यदि इस मन्त्र को पढ़कर रोगी को झाड़ दें तो केवल ५-५ बार प्रतिदिन झाड़ने से ५ दिन में भूत-प्रेत निश्चय ही रोगी को छोड़कर भाग खड़े होते हैं और रोगी रोग मुक्त हो जाता है।

आचार्य पूजन

आचार्य को तिलक करे—

ॐ गन्ध द्वारा दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्।
ईश्वरीं सर्वभुतानां तामिहोपह्वे श्रियम्॥

आचार्य को अक्षत लगाए—

ॐ अक्षत नाममदनतहये व पिवा अधूषत। अस्तोषत स्वभानवो विप्रान मतीयोजान्विन्द्रते हरी।

आचार्य को माला पहनाए—

ॐ यद्यशोप्सरसा मिन्द्रश्चकार विपुलं पृथु। तेन संग्रथिता सुमन

स आवध्नामि यशोमयि।

आचार्य को दक्षिणा दें—

ॐ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्। सदाधार पृथिवीन्द्यामुतेमां कस्मैं देवाय हविषा विधेम्।

आचार्य की प्रार्थना करें—

गुरुब्रह्मा गुरुर्विष्णुगुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरु साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः॥

पुनः आचार्य से प्रार्थना करें—कि हे प्रभो! यथा विहित पूजन करवाइए जिससे भगवती प्रसन्न हों और मेरा तथा मेरे परिवार का कल्याण करें।

आचार्य बोले कि मैं यथाविहित ही पूजन करवाऊँगा।

जब आचार्य यजमान को पुष्प अक्षत देकर स्वस्ति वाचन करें—

ॐ स्वास्तिन ऽ इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वास्तिनः पूषा विश्ववेदाः। स्वास्तिनस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः स्वस्तिनो वृहस्पतिर्द धातु। पृषदश्वामरुतः पृश्निमातरः शुभंयावानो विदथेषु जग्मयः। अग्निर्जिह्वामनवः सूरचक्षसो विश्वेनोदेवा अवसागमन्निह। भद्रं कर्णेभिः श्रृणुयाम देवा भद्रम्पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरंगैस्तुष्टुवा ७ सस्तनूभिर्व्यसेमहि देव हितं यदायुः। शतमिन्नुशरदोऽ अन्ति देवा यत्रा नश्चक्रा जरसन्तनूनाम्। पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मानो मद्ध्यारीरिषतायुर्गन्तोः। अदितिद्यौरदितिरन्तरिक्ष मदितिर्म्माता स पिता स पुत्रः। विश्वेदेवा ऽ अदितिः पञ्चजनाऽ अदितिर्ज्जातमदितिर्जनित्वम् दीर्घायुत्वाय वलाय वर्चसे सुप्रजा त्वाय सहसा अथो जीव शरदः शतम्। द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ७ शान्तिः पृथ्वी शान्तिः आपः शान्तिः ओषधयः शान्तिः वनस्पतयः शान्तिः विश्वेदेवाः शान्ति ब्रह्मशान्तिः सर्व ७ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामा शान्तिरेधि। विश्वानि देव सवितुर्दुरितानिपरऽसुवऽसद्भद्रं तन्न आसुव॥ सुशान्तिर्भवतु॥

पूजन करते समय तक देवी का ध्यान बराबर करते रहना चाहिए। वह इस प्रकार है—रक्तवर्ण वाले जल का एक समुद्र है, वह मानो एक जहाज है, जिस पर एक कमल खिला हुआ है, इस रक्तोत्पल पर कामाख्या देवी

विराजमान हैं जिनके तीन सिर हैं, जो अपने छः कर-कमलों में त्रिशूल, इक्ष धनुष, रत्नजटित पाश, अंकुश, पाँच बाण, रक्त पूर्ण कपाल (खप्पर) धारण कर रही हैं। तीन नेत्र इनकी शोभा बढ़ा रहे हैं, स्थूल स्तनों तथा सुन्दर नितम्बों से युक्त हैं, बाल सूर्य के समान लाल वर्ण हैं जिनके—ऐसी कामाख्या भगवती हमें सुख प्रदान करें।

वह देवी अपने भक्तों को इच्छित वरदान देने को उत्सुक दिखाई पड़ती है उनके पीछे शिवजी हैं। शिवजी के बगल में नन्दी वृषभ है जबकि देवी के बगल में सिंह हैं। वे नाना आभूषणों से सुसज्जित हैं। उनकी प्रभा चारों ओर फैल रही है, संसार की उत्पत्ति पालन और संहार के स्थान वही है।

इस प्रकार की मूर्ति या तस्वीर भी रखकर पूजा की जा सकती है। कामाक्षा यन्त्र की तो पूजा अवश्यमेव करना चाहिए। इसके अभाव में पार्वती की ही तस्वीर रख लेना चाहिए।

एक बात और ध्यान रहे कि देवी की आराधना चतुर्भुजी या दशभुजी रूप में भी कर सकते हैं। यह तो साधक की कामना और भक्ति पर निर्भर है।
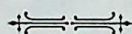
कामाख्या देवी सिद्धि विधान

कामाख्या में देवी जी पूजन वहाँ के पुजारी जैसे कराएँ वैसे करना चाहिए अथवा देवी-पूजन-विधि के अनुसार करना चाहिए। मन्दिर में सब देवों का पूजन कर लाल वस्त्र पर देवीजी का पूजन करें और घर में, गणेश-गौरि, कलश, नवग्रह षोडश मातृकादि का स्थापन पूजनादि के बाद कामाख्या देवी का स्थापन पूजन करें।

अथ आसन शुद्धि—साधक को चाहिए कि स्नान कर शुद्ध वस्त्र धारण करके आचार्य के आदेशानुसार पूर्वादिक मुँह करके आसन पर बैठे। तब आसन के नीचे पूर्वादिक भाग में त्रिकोण मण्डल बनाकर निम्नांकित मन्त्र द्वारा गन्ध पुष्पादि धूप दीप नैवेद्य दक्षिणादि से पूजन करें।

***मन्त्र*—ह्रीं आधार शक्तये नमः ॥ ॐ कूर्माय नमः ॥ ॐ अनन्ताय नमः ॥ ॐ पृथिव्यै नमः ॥**

पूजन के बाद उस त्रिकोण का स्पर्श इस मन्त्र द्वारा करें।

***मन्त्र*— ॐ पृथ्वि! त्वया धृतालोका देवि त्वं विष्णुना धृता। त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम्॥**

अब शुद्धासन पर डालकर पूजा के निमित्त आसन ग्रहण करें और रक्षा विधान करें।

आचमन विधि—पुण्य कार्य के आरम्भ में आचमन अवश्य करना चाहिए। आचमन के समय जल का नख से स्पर्श तथा ओष्ठ का शब्द नहीं होना चाहिए। प्रथम आचमन से आध्यात्मिक, दूसरे से अधिभौतिक और तीसरे से अधिदैविक शान्ति होती है। इसलिए तीन बार आचमन करें और चौथे मन्त्र से बोलते हुए दूसरे पात्र के जल से हाथ की शुद्धि करें।

***मन्त्र*— ॐ केशवाय नमः, ॐ नारायणाय नमः। ॐ माधवाय**

नमः ॥ तत्पश्चात् हाथ धोये—ॐ हृषीकेशाय नमः ॥

पुष्प शुद्धि—नीचे के मन्त्र से पूजा-पुष्प को देखें—

ॐ पुष्पे पुष्पे महापुष्पे सुपुष्पे पुष्प सम्भवे।
पुष्प चमा वकीर्णन च हुँ फट् स्वाहा॥

कर शुद्धि—साधक ऐं कहकर रक्त पुष्प हाथ में लेवे और ॐ कहकर दोनों हाथों से प्रेषण करें (उक्त पुष्प को हाथ में घुमाए)। इसके बाद उस पुष्प को ईशान कोण में रख दें।

शरीर तथा पूजन सामग्री शुद्धि—अब आचार्य अथवा साधक स्वयं अपने सिर पर जल छिड़के।

मन्त्र— **ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपिवा।**
यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं सावाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥

पुनः पूजन साम्रग्री पर जल छिड़के।

मन्त्र— **ॐ पुण्डरीकाक्षं पुनातु।**

यज्ञोपवीत धारण करना—तब इस मन्त्र से यज्ञोपवीत धारण करें।

मन्त्र— **ॐ यज्ञोपवीतं परमं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्।**
आयुष्यमग्रयं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः॥

तत्पश्चात् दो बार आचमन करें।

भस्म और टीका लगाना—'ॐ हुं फट्' से मस्तक, कण्ठ, हृदय और बाहु में त्रिपुण्ड धारण करें। पुनः 'ऐं' कहकर रोली ले बाएँ हाथ पर रखे और 'ह्रीं' का उच्चारण कर जल मिलाकर दाहिने हाथ की अनामिका उंगली से गीला करें और 'श्री' बोलकर मध्यमा उंगली से मस्तक के मध्य में एक लम्बा टीका लगाए। 'क्लीं' बोलते हुए हाथ धोए और पुनः हाथ जोड़ 'ॐ' का उच्चारण कर देवी का ध्यान करें।

न्यास विधि

अथ जीव न्यासः—ॐ सोहमिति पठित्वा हृदि हस्तं दत्वा ॐ, आं, ह्रीं, क्रों, यं, रं, लं, वं, शं, षं, सं, हो, हंस मम प्राणइह प्राणा ॐ आं. मम जीव इह स्थित, पुनः ॐ आं सर्वइन्द्रियाणि पुनः ॐ आं. ममवाङ्मनश्चश्चक्षु

श्रोत घ्राण प्राणः इहा गत्य सुखं चिर तिष्ठन्तु स्वाहा।

अथ कराङ्गन्यासः—ॐ अं, कं, खं गं घं ङं आं अगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ इं, चं, छं, जं, झं, ञं, इं, तर्जनीभ्यां नमः। ॐ उं, टं, ठं, डं, ढं, णं, ऊं मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ एं, तं, थं, दं, धं, नं, ऐं अनामिकाभ्यां नमः। ॐ ओं, पं, फं, बं, भं, मं, औं कनिष्ठाभ्यां वषट् ॐ अं, यं, रं, लं, वं, शं, षं, सं, हं, लं, क्षं, अः करतल पृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट्।

अंगन्यासः— ॐ अं, कं, खं, गं, घं, ङं, आं हृदये नमः।
ॐ इं, चं, छं, जं, झं, ञं, ई शिरसे स्वाहा।
ॐ उं, टं, ठं, डं, ढं, णं, ऊं शिखाये वषट्।
ॐ एं, तं, थं, दं, धं, नं ऐं कवचाय हुम्।
ॐ ओं, पं, फं, बं, भं, मं, औं नेत्राभ्यां वषट्।
ॐ अं, यं, रं, लं, वं, शं, षं, सं हं, क्षं अं।
करतल पृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट्।

अथ मातृका न्यासः—आधारे वं नमः। शं नमः। षं नमः। सं नमः लिङ्गे। बं नमः। भं नमः। मं नमः। यं नमः। रं नमः। लं नमः + नामे। डं नमः। ढं नमः। णं नमः। तं नमः। थं नमः। दं नमः। धं नमः। नं नमः। पं नमः फं नमः हृदये। कं नमः। खं नमः गं नमः। धं नमः। ङं नमः चं नमः। छं नमः। जं नमः। झं नमः। ञ नमः। टं नमः। ठं नमः कंठे। अं नमः। आं नमः। इं नमः। ईं नमः। उं नमः। ऊँ नमः। ऋं नमः। ॠ नमः। लृं नमः। ॣ नमः। एं नमः। ऐं नमः। ओं नमः। औं नमः ललाटे।

अंगन्यास करन्यासौ—ॐ कामाक्ष्ये अगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ कामाक्ष्ये तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ कामाक्ष्ये मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ सृष्टि कारिणी कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ॐ कामाक्ष्ये सृष्टि रक्षिणी करतल कर पृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट्। ॐ कामाक्ष्ये कामं हृदयाय नमः। ॐ कामाक्ष्ये शिरसि स्वाहा। ॐ कामाक्ष्ये शिखायै वषट्। ॐ सृष्टिकारिणी कवचाय हुम्। ॐ कामाक्ष्ये कामदायिनी नेत्राभ्यां वौषट्। ॐ कामाक्ष्ये सृष्टि कारिणी करतल कर पृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट्।

प्राणायाम विधि

यज्ञकर्त्ता पद्मासन से बैठकर भगवती को ध्यान करते हुए मौन होकर नेत्र को बन्दकर तीन बार प्राणायाम करें—

पूरक प्राणायाम—नासिका के दाहिने छिद्र को अंगुष्ठ से दबाकर बाएँ छिद्र से श्वांस खींचता हुआ नील कमल के सदृश्य श्याम वर्ण चतुर्भुजी भगवती का ध्यान अपनी नाभि में करें।

कुम्भक प्राणायाम—उस छिद्र को दबाए हुए नासिका के बाएँ छिद्र को कनिष्ठिका और अनामिका अंगुलियों से दबाकर के श्वांस को रोकर कमल के आसन पर बैठे हुए रक्त वर्ण चर्तुर्भुजी भगवती का ध्यान अपने हृदय में करें।

रेचक प्राणायाम—श्वेतवर्णा त्रिनेत्रा चतुर्भुजी भगवती का ध्यान अपने ललाट में करता हुआ नासिका के दाहिने छिद्र को खोलकर धीरे-धीरे श्वास छोड़े। (गृहस्थ तथा वानप्रस्थी पाँचों अंगुलियों से नासिका को दबाकर भी प्राणायाम कर सकते हैं।)

प्राणायाम मन्त्र

क्लीं पूरक प्राणायाम् में सोलह बार मन्त्र को जपे। कुम्भक प्राणायाम् में चौसठ बार तथा रोचक में बत्तीस बार उच्चारण करें।

अथ पीठन्यासः

हृदय—ॐ आधार शक्तये नमः। ॐ प्रकृत्यै नमः। ॐ कुर्म्माय नमः। ॐ अनन्ताय नमः। ॐ पृथिव्यै नमः। ॐ क्षीर समुद्रायै नमः। ॐ रति द्वीपाय नमः। ॐ मणि मण्डलाय नमः।

दक्षिण-स्कन्ध—ॐ धर्माय नमः।

वाम-स्कन्ध—ॐ ज्ञानाय नमः।

दक्षिण उर मूले—ॐ वैराज्ञायः नमः।

वाम उर मूले—ॐ ऐश्वर्याय नमः।

मुख—ॐ धर्माय नमः।

दक्षिण पार्श्व—ॐ आज्ञानाय नमः।

वाम पार्श्व—ॐ अवैरायनमः।

नाभि—ॐ अनैश्वर्याय नमः।

पुनः

हृदय—ॐ शेषाय नमः। ॐ पद्माय नमः। ॐ सूर्य मण्डलाय द्वादश कलात्मने नमः। ॐ सोम मण्डलाय षोडश कलात्मने नमः। ॐ भौम मण्डलाय द्वादश कालात्मने नमः। ॐ सत्वाय नमः। ॐ रं रजसे नमः। ॐ तं तमसे नमः। ॐ आं आत्मने नमः। ॐ पं पात्मने नमः। ॐ क्लीं ज्ञानात्मने नमः।

पीठ शक्ति न्यासः

हृतपदमस्य पूर्वादिकेशरेषु आं प्रमायै नमः। ईं आयायै नमः। ॐ गंगायै नमः। एं सूक्ष्मार्य नमः। ऐं विशुद्धयै नमः। ओं नन्दिन्यै नमः। औं प्रभायै नमः। अं विजयायै नमः। अः सर्वसिद्धिदात्र्यै नमः। मध्ये-ॐ बज्र नषदंष्ट्रयुधाय महासिंहाय ॐ हुँ फट् नमः।

व्यापक न्यासः

क्लीं यह' मन्त्र कहते हुए सिर से पैर तक तीन बार अंग स्पर्श करें।

अथ अर्घ स्थापन तथा शंख, घंटादि का पूजन।

ॐ अस्त्राय फट्—यह मन्त्र कहकर शंख प्रक्षालन करें।

तब वाम भाग में त्रिकाण मण्डल बनाकर शंख उस पर स्थापित करें।

ॐ नमः—यह मन्त्र कहकर गन्ध, पुष्प, अक्षत, शंख में छोड़ दें। फिर निम्न मन्त्र से शंख में जल छोड़े।

ॐ ज्ञं नमः। ॐ त्रं नमः। ॐ क्षं नमः। ॐ हं नमः। ॐ सं नमः। ॐ षं नमः। ॐ शं नमः। ॐ वं नमः। ॐ लं नमः। ॐ रं नमः। ॐ यं नमः। ॐ मं नमः। ॐ भं नमः। ॐ बं नमः। ॐ फं नमः। ॐ पं नमः। ॐ नं नमः। ॐ धं नमः। ॐ दं नः। ॐ थं नमः। ॐ तं नमः। ॐ णं नमः। ॐ ठं नमः। ॐ डं नमः। ॐ ठं नमः। ॐ टं नमः। ॐ ञं नमः। ॐ झं नमः।

ॐ जं नमः। ॐ छं नमः। ॐ चं नमः। ॐ ङं नमः। ॐ घं नमः। ॐ गं नमः। ॐ खं नमः। ॐ कं नमः। ॐ अः नमः। ॐ अं नमः। ॐ औं नमः। ॐ ओं नमः। ॐ ऐं नमः। ॐ एं नमः। ॐ लृ नमः। ॐ लृ नमः।ॐ ॠ नमः। ॐ ऋ नमः। ॐ ऊं नमः। ॐ उं नमः। ॐ ईं नमः। ॐ इं नमः। ॐ आं नमः। ॐ अं नमः। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं श्री कामाक्ष्यै नमः। ॐ पूर्णायै नमः।

भौम कलात्मने—ॐ वह्नि मण्डलाय नमः।

अंधदेश कलात्मने—ॐ सूर्य मण्डलाय नमः।

शंख षोडश कलात्मने—ॐ चन्द्रमण्डलाय नमः।

अब शंख की गन्ध, अक्षत, पुष्प, धूप और नैवेद्य दक्षिणादि से पंचोपचार पूजन करें। इसी प्रकार घंटा घड़ियाली का भी साथ में पूजन करें। तब हाथ में पुष्प लेकर दोनों की अलग-अलग प्रार्थना करें।

शंख की प्रार्थना—त्वं पुरा सागरोत्पन्नो विष्णुनाविधृताकरे। निर्मितः सर्व देवैश्च पञ्चजन्य नमस्तुते।

घड़ी, घंटा, घड़ियाली की प्रार्थना—

आगमार्थं तु देवानां गमनार्थं तु राक्षसाम्।
घंटानादं प्रकुर्वीत् पश्चाद् घण्टां प्रपजयेत्॥

शान्ति पाठ एवं मंगल श्लोक

साधक हाथ में पुष्प और चावल ले हाथ जोड़कर निम्न श्लोक पढ़े और सब देवों को नमस्कार करें।

सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णदः। लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः॥ १॥ धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः। द्वादशेतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि॥ २॥ विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा। संग्रामे सङ्कटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते॥ ३॥ शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्ण चतुर्भुजम्। प्रसन्न वदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये॥ ४॥ अभीप्सितार्थसिद्धयर्थं पूजितो यः सुराऽसुरैः। सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः॥ ५॥ सर्वमङ्गलमंगल्ये शिवे सर्वार्थसाधिकेः। शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते॥ ६॥ सर्वदा सर्वकार्येषं नास्ति

तेषाममंगलम्। येषां हृदिस्थो भगवान् मंगलायतनो हरिः॥ ७॥ तदेव लग्नं सुदिनं तदेव, ताराबलं चन्द्रबलं तदेव। विद्याबलं दैवबलं तदेव, लक्ष्मीपते! तेऽङ्घ्रियुगं स्मरामि॥ ८॥ लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः। येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो, जनार्दनः॥ ९॥ सर्वष्वारम्भकार्येषु त्रयस्त्रिभुवनेश्वराः। देवा दिशन्तु नं सिद्धिं ब्रह्मेशान जनार्दनाः॥ १०॥

श्री मन्महागणधिपतये नमः॥ लक्ष्मी नारायणाभ्यां नमः॥ उमा-महेश्वराभ्यां नमः॥ वाणी-हिरण्यगर्भाभ्यां नमः॥ शचीपुरन्दराभ्यां नमः॥ मातृपितृ चरणकमलेभ्यो नमः॥ इष्टदेवताभ्यो नमः॥ कुलदेवताभ्यो नमः। ग्रामदेवताभ्यो नमः॥ स्थान देवताभ्यो नमः॥ वास्तु देवताभ्यो नमः॥ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः॥ सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः॥ सर्वेभ्यो तीर्थेभ्यो नमः॥

पुष्प अक्षत को श्रद्धापूर्वक पृथ्वी पर रख पुनः पुष्प अक्षत लें निम्न मन्त्र से देवी की प्रार्थना करें—

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै शततं नमः।
नमः प्रकृत्यै भद्रार्य निहताः प्रणतास्म् ताम्॥

संकल्प—अब कुश, अक्षत, पुष्प, जल लेकर निम्न प्रकार से संकल्प करें। (अमुक के स्थान पर आगे का नाम उच्चारण करता जाए।)

हरिः ॐ तत्सत् श्री विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः अद्य ॐ नमः परमात्मने श्री पुराण पुरुषोत्तमाय ब्रह्मणोह्नि द्वितीयपरार्द्धे श्री श्वेत वाराहकल्पे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे आर्यावर्तेक देशान्तर्गते श्री मद्विष्णुप्रजापति क्षेत्रे वैवस्वत मन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलि प्रथम चरणे अमुक क्षेत्रे (यथा प्रयाग क्षेत्रे, विंध्य क्षेत्रे, काम्य क्षेत्रे इत्यादि) अमुक नाम सन्वत्सरे मासोत्तमे मासे अमुक मासे अमुक पक्षे अमुक तिथौ अमुक वासरे श्रुतिस्मृतिपुराणोक्त फलप्राप्तिकामः अमुकगोत्रोत्पन्नोऽहममुक शर्माहं (ब्राह्मण शर्मा कहे क्षत्रिय वर्मा और वैश्य गुप्त कहे) सकलदुरितोपशमनं सर्वापच्छान्ति पूर्वक अमुक (यदि कोई मनोरथ हो) मनोरथ सिद्ध्यर्थं यथासपादित सामिग्रया श्री कामाख्यादेवी पूजनं

करिष्ये॥ १॥

तदङ्गत्वेन कैलश स्थापनं वरुण पूजनं सूर्यादि नौग्रह देवता स्थापनं पूजनं च करिष्ये॥ २॥

तत्रादौ निर्विघ्नता सद्धियर्थं गणेशाम्बिकयोः पूजनं च करिष्ये॥ कहकर भूमि पर छोड़ दें।

पृथ्वी, गौरी, गणेश पूजन विधि

पूजनकर्त्ता हाथ में अक्षत, पुष्प लेकर हाथ जोड़े (पृथ्वी के लिए) और नीचे का मन्त्र पढ़कर पृथ्वी के ऊपर रख दें—ॐ स्योना पृथिवि नो भवान्नृक्षरा निवेशनी। यच्छा नः शर्म्म सप्रथाः।

पुनः गणेशजी के लिए अक्षत पुष्प लेकर हाथ जोड़े और नीचे का मन्त्र कहकर गणेशजी को चढ़ा दें—

ॐ गजाननं भूतगणादिसेवितं कपित्थजम्बूफलचारुभक्षणम्।
उमासुतं शोकविनाशकारकं नमामि विघ्नेश्वर पाद पंकजम्॥

इसी प्रकार निम्न मन्त्र से गौरि के लिए अक्षत पुष्प चढ़ाए—

ॐ जयन्ती मंगला काली भद्रकाली कपालिनी।
दुर्गा क्षमा शिवाधात्री स्वाहा स्वधा नमोस्तुते॥

अब पृथ्वी, गणेशजी और गौरीजी तीनों का क्रम से निम्न विधि से पूजन करते जाए। पृथ्वी का आह्वान प्रतिष्ठा नहीं करना चाहिए। अतः गौरी-गणेश का आह्वान, प्रतिष्ठा चावल लेकर करें।

आह्वान— **आगच्छ भगवान् देव स्थाने चात्र स्थिरो भव।**
यावत् पूजां करिष्यामि तावत्वं सन्निधौ भव॥

प्रतिष्ठा— **अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च।**
अस्यै देवत्यमर्चायै मामहेति च कञ्चन॥

आसन— **रम्यं सुन्दरं दिव्यं सर्वं सौख्यकरं शुभम्।**
आसनं च मयादत्तं गृहाण परमेश्वर॥ आसनं समर्पयामि॥

पाद्य— उष्णोदकं निर्मलं च सर्व सौगन्ध संयुतम्।
पाद प्रक्षालनार्थाय दत्तं ते प्रतिगृह्यताम्॥ पाद्यं समर्पयामि॥

अर्घ्य— गृहाण देवेश! गन्धपुष्पाक्षत सह।
करुणाकर मे देव गृहाणार्घ्य नमोस्तुते॥ अर्घ्य समर्पयामि॥

आचमन—सर्वतोर्थ समायुक्तं सुगन्धि निर्मलं जलम्।
आचम्यताम् मयादत्तं गृहाण परमेश्वर॥ आचमं स.॥

स्नान— गंगा सरस्वती रेवा पयोष्णी नर्मदा जलैः।
स्नापितोऽसि त्वया देव तथा शान्तिं कुरुष्व मे॥

वस्त्र—सर्व भूषादिके सौम्ये लोकलज्जा निवारणे। मयोपपादिते तुभ्यं वाससी प्रतिगीह्यताम्॥ वस्त्र समर्पयामि॥ यज्ञोपवीत—(केवल गणेशजी को)—नवाभिर्तन्तुभिर्युक्त त्रिगुणं देवतामयं। उपवीर्तेमपादत्तं गृहाण परमेश्वर॥ यज्ञोपवीतं समर्पयामि॥

चन्दन— श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धढ्य सुमनोहरं।
विलेपनं सुरश्रेष्ठ चन्दनं प्रतिगृह्यताम्॥ गन्धं सं.॥

कुम्कुम (रोली)—कुम्कुमं कामनादिव्यं कामिनीकाम् संभवम्।
कुम्कुमेवार्चितोदेव गृहाण परमेश्वर॥ कुम्कुमं सं.॥

अक्षत— अक्षतांश्चसुरश्रेष्ठ कुम्कुभोक्ताः सुशोभिताः।
मया निवेदिता भक्त्या गृहाण परमेश्वर॥ अक्षतान् सं.॥

पुष्प— माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो।
मया नीतानि पुष्पाणि गृहाण परमेश्वर॥ पुष्पाणि सं.॥

दूर्वा (दूब)—त्वंदूर्वेऽमृत जन्मासि वन्दितासि सुरैरपि।
सौभाग्य सन्ततिर्देहि सर्व कार्यकारी भव॥ दूर्वा सं.॥

सिन्दूरं— सिन्दूरं शोभनं रक्तं सौभाग्यं सुखवर्द्धनम्।
शुभदं कामदं चैव सिन्दूरं प्रतिगृह्यताम्॥ सिन्दूरं सं.॥

धूपं— वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः॥
आघ्रेयः सर्वदेवतां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम्। धूपमाघ्रापयामि॥

दीप— साज्यं च वर्ति संयुक्त वह्निना योजितं मया।
दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्य तिमिरापहम्॥ दीपं दर्शयामि।

नैवेद्यं— शर्कराघृत संयुक्त मधुर स्वादुचोत्तमम्।
उपहारं समायुक्तं नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम्॥ नैवेद्यं निवेदयामि॥
आचमन—गंगाजलं समानीतं सुवर्णकलशेस्थितम्॥
आचम्यतां—सुरश्रेष्ठशुद्धमाचमनीयम्॥ आचमनीयं सं.॥
ऋतुफल—नारिकेलफलं जम्बूफलं नारंगमुत्तमम्।
कूष्माण्डं पुरतो भक्त्या कल्पितं प्रतिगृह्यताम्॥ ऋतुफलं सं.॥
ताम्बूल पूगीफलं—पूंगीफलं महादिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम्।
एलाचूर्णादिसंयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम्। ताम्बूलं पूंगीफलं सं.।
दक्षिण— हिरण्यगर्भ गर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः।
अनन्त पुण्य फलदमतः शान्तिं प्रयच्छ मे। दक्षिणां सं.॥

विशेष—पंचोपचार पूजन में यही मन्त्र प्रयोग किया जाता है। स्नान से लेकर दक्षिणा तक की विधि तीनों अर्थात् (पृथ्वी गौरी गणेश) के लिए करें। आगे भी अन्य देवों के पूजन के लिए यही मन्त्र और नियम काम में लाए। किसी सामग्री के अभाव में चावल का प्रयोग कर नियम पूरा करें। इसके बाद प्रार्थना अलग-अलग करनी चाहिए। हाथ में पुष्प-अक्षत लेकर नीचे के मन्त्र से प्रार्थना कर चढाएँ।

पृथ्वी की प्रार्थना—

सशैल सागरां पृथ्वीं यथा वहसिमूर्द्धनि।
तथा मां वह कल्याणं सम्पत्सन्ततिभिः सह॥

गणेशजी की प्रार्थना—

ॐ रक्ष-रक्ष गणाध्यक्ष रक्ष त्रैलोक्य रक्षक।
भक्तानां अभयंकर्त्ता त्राता भव भवार्णवात्॥
द्वै मातुर कृपासिन्धो षणमातुराग्रज प्रभो।
वरद् त्वं वरं देहि वांञ्छितं वाञ्छतार्थद॥

गौरीजी की प्रार्थना—

शरणागतदीनार्त परित्राण परायणे।
सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तुते॥

कलश स्थापन

पूजनकर्त्ता पृथ्वी का स्पर्श करें।

मन्त्र— ॐ भूरसि भूमिरस्यदितिरसि विश्वधाया विश्वस्य भुवनस्य धर्त्री। पृथ्वीं यच्छ पृथिवीन्दृ ꣳ पृथिवीं माहि ꣳ सी।

फिर कलश का गोबर से स्पर्श करें।

मन्त्र— ॐ मानस्तोके तनये मान आयुषि मानो गोषुमानो अश्वेषुरीरिषः मानो वीरान्नुद्रभामिनौ वधीर्हविष्मन्तः सदमित्व हवामहे।

फिर कलश के नीचे रखे धान्य को छुए।

मन्त्र— ॐ धान्यमसि धिनुहि देवान् प्राणाय त्वोदोनायत्वा दीर्घामनुप्प्रसितिधायुषे धान्देवोवः सविता हिरण्य पाणि। अतिगृव्णा त्वच्छिद्रेय पाणिना चक्षुषे त्वा महीनाम्पयोसि।

यथा स्थान कलश का स्पर्श करें।

ॐ आजिंघ्र कलशम्मह्या त्वा विशन्त्विन्दवः। पुनरूर्जा निवर्तस्वसानः सहस्रन् धुक्ष्वोरुधारा पयस्वत्नी पुनर्मा विशतादयिः।

कलश में जल भरे।

ॐ वरुणस्योत्तम्भनमसि वरुणस्य स्कम्भक्षर्ज्जनीस्थो षरुणस्यऽऋतु सदन्यसि वरुणस्य ऋतु सदनमसि वरणस्यऽ ऋतसदनमासीषं।

कलश में कलावा बाँधे।

ॐ युवासुवासाः परिवीतआगात् सउश्रेयान् भवति जायमानः।
तंधीरासः कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो मनसा देवयन्तः।

कलश में रोली छोड़े—

ॐ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टाम् करीषिणीम्।
ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहो पह्वेश्रियम्॥

कलश में पुष्प छोड़े—

ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वेनक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् इष्णन्निषाण मुम्ममइषाण, सर्वलोकम्मइषाण।

सर्वोषधी—ॐ या औषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगम्पुरां।
मनैनु बभ्रणामह ७ सतब्धामानि सप्त च॥

दूर्वा— ॐ काण्डात्काण्डात्पुरोहन्ति परुषः परुषस्परि।
एवानो दूर्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च॥

हल्दी— ॐ या औषधी पूर्वो जाता देविभ्यस्त्रि युगं पुरा।
अनने बहुनाऽवसित धमानि॥

सप्तमृत्तिका—-ॐ स्योना पृथिवी नो भवानृक्षराः निवेष।
यच्छा नः शर्म्म सप्रथाः।

पूंगीफल—ॐ याः फलिनीर्य्या अफलः अनुष्या पुष्पिणी।
वृहस्पतिप्प्रसूतास्तानोमुञ्चन्त्य ७ सः॥

पान— ॐ प्राणाय स्वाहाऽपानाय स्वाहा व्यानाय स्वाहा।

पञ्चरत्न— ॐ परिवाजपतिः कविरग्निर्हव्यान्य क्रमीत् दधद्रत्नदिाशुषे॥

द्रव्य— ॐ हिरण्यगर्भ समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
सदधार पृथिवीन्द्यामुते मां कस्मै देवाय हविषा विधेम्॥

पञ्चपल्लव रखे—ॐ अश्वत्थे वो निषदनं पर्णे वो वसतिष्कृता।
गोभाज इत्किलासथ यत्सनपथ पूरुषम्॥

कलश पर (यव) पूर्णपात्र रखे—

ॐ पूर्णादर्वि परापत सुपूर्णा पुनरापत।
वस्नेव विकीर्णावहा इषमूर्ज ७ शतक्रतो॥

कलश के चारों ओर दिव्य वस्त्र लपेट दें और कलावे से बाँध दें।

ॐ युवासुवासा परिवीत आगात् सउश्रेयान्भवति खायमानः। तं धीरा सः कवय उन्नयन्ति स्वाध्योमनसादेवयन्तः॥

श्री फल लाल वस्त्र में लपेटकर पूर्ण पात्र के ऊपर रखें—

ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम्। इष्ष्पन्निषाण मुम्ममइषाण सर्वलोकम्मइषाण।

(देशाचार अनुसार कहीं कहीं कलश पर श्री फल न रख के दीप ही रखते हैं। वहाँ दीप जलाकर इस मन्त्र द्वारा कलश पर स्थापित करें—ॐ अग्निर्ज्योति ज्योतिरग्निः स्वाहा, सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा

अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्च स्वाहा, सूर्योवर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा, ज्योतिः सूर्यः सूर्योज्योतिः स्वाहा।)

दीप—(रां) यह कहकर प्रज्वलित करें। फिर संकल्प कर कलश के दक्षिण तरफ अक्षत के ऊपर स्थापित करें।

संकल्प

सकल मनोरथापत्ये कीट पतंग पतनवादिभिः निर्वाण दोष रहितौ अग्निदेवताकौदिप्यमानघृत प्रदीपौ श्री भगवत्यै जै कामाक्ष्यैसम्प्रदेद॥

दीप अर्पण

ॐ अग्निर्ज्योति रविर्ज्योति चन्द्रज्योतिस्थैव च।
ज्योतिषा मुक्तयो कामाक्ष्ये दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम्।

अब अक्षत लेकर निम्न मन्त्र से दीप की प्रार्थना कर उसी पर छोड़ दें—

भो दीप देवस्वरूपस्त्वं कर्म साक्षी सविघ्नकृत।
यावत्कर्म समाप्तिः स्यात् तावत्वं सुस्थिरो भव॥

कलश स्थापन के पश्चात् वरुण देवता का इस पर आह्वान करें। पुनः हाथ में अक्षत लेकर—

ॐ पातालवासिनं देवं वरुणं श्रेष्ठ देवताम्।
आवाहयामि देवेश तिष्ठ त्व पूजयाम्यहम्॥

अस्मिन्कलशे वरुणं आवाहेयामि। अब इसके बाद गौरी-गणेश पूजन के विधि अनुसार और मन्त्र से प्रतिष्ठा, आसन पाद्यादि समर्पित कर हाथ में जल लेकर कहे—**अत्र गन्धाक्षत पुष्प धूप दीप, नैवेद्यतांबूल पूंगीफलं दक्षिणा वरुणाय न मम। अनया पूजया वरुण देवता सांगाय सपरिवाराय प्रीयतां न मम।**

फिर कलश को स्पर्श करें और कामना करते हुए पढ़े—

सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदा नदाः।
आयान्तु यजमानस्य (मम परिवारस्य) दुरितक्षयकारकाः॥ १॥

कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समश्रितः।
मूले तस्य स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः॥ २॥
कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा।
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः॥ ३॥
अङ्गैश्च सहिता सर्वे कलशं तु समाश्रिता।
अत्र गायत्री सावित्री शान्ति पुष्टिकरी तथा॥ ४॥

पुनः कलश की प्रार्थना करें—

देव दानवसंवादे मध्यमाने महोदधौ।
उत्पन्नोसि तदा कुम्भः विधृतो विष्णुना स्वयम्॥
त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वेत्वयि स्थिताः।
त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः॥
शिव स्वयं त्वमेवासि विष्णुत्वं च पजापतिः।
आदित्या वसवो रुदाः विश्वेदेवः सपैत्रिकाः॥
त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः कामफलप्रदाः।
त्वत्प्रसादादिदं यज्ञं कर्तुमीहे जलोद्भवः॥
सान्निध्यं कुरु मे देव प्रसन्नो भव सर्वदा।
यावत्कर्म समाप्तिः स्यात्तावत्वं सन्निधोभाव॥

नवग्रह स्थापन

नीचे लिखे मन्त्रों से नवग्रहों का पृथक-पृथक आह्वान कर पूर्व लिखित विधि अनुसार प्रतिष्ठा, अर्घ्य, पाद्य, स्नान, नैवेद्यादि समर्पित कर पूजन करें।

सूर्य— जपा कुसुम संकाशं काश्पेयं महाद्युतिम्।
तमोऽरि सर्व पापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम्॥
चन्द्र—दधि शंख तुषाराभं क्षीरोदार्णव संभवत्।
नमामि शशिनं सोम शम्भोर्मुकुटभूषणम्॥
मंगल—धरणी गर्भसंभूतं विद्युत्कान्तिसमप्रभम्।
कुमारं शक्ति हस्तं च मंगलं प्रणमाम्यहम्॥
बुध— प्रियंगु कलिका श्यामं रूपेणप्रतिमं बुधम्।

सौम्यं सौम्यगुणोपेतं तं बुधं प्रणमाम्यहम्॥

गुरु— देवानां च ऋषीणां च गुरुं कांचनसन्निभम्।
बुद्धिभूतं त्रिलोकेशं तन्नमामि वृहस्पतिम्॥

शुक्र— हिम कुन्दमृणालाभं दैत्यानां परमं गुरुम्।
सर्वशास्त्र प्रवक्तारं भार्गवं प्रणमाम्यहम्।

शनि— नीलांजनसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजं।
छायामार्तण्डसंभूतं तन्नमामिशनैश्चरम्॥

राहु— अर्द्धकायं महावीरं चन्द्रादित्यविमर्दनम्।
सिंहिकागर्भ संभूतं तं राहुं प्रणमाम्यहम्॥

केतु— पलाश पुष्प संकाशं तारकाग्रह मस्तकम्।
रौद्रं रौद्रत्मकं घोरं तं केतु प्रणमाम्यहम्॥

नवग्रह मण्डल चक्र

आह्वान के पश्चात् विधिपूर्वक नौग्रहों का पूजन करें। तदन्तर हाथ जोड़ कर प्रार्थना करें—

ब्रह्मा मुरारिः त्रिपुरान्तकारी भानु शशी भूमि सुतो बुधश्च।
गुरुश्च शुक्रो शनि राहु केतवः सर्वे ग्रहाः शान्ति करा भवन्तु॥

षोडश मातृका पूजन

१. गणेश गौरी, २. पद्मा, ३. शची, ४. मेधा, ५. सावित्री, ६. विजया, ७. जया, ८. देव सेना, ९. स्वधा, १०. स्वाहा, ११. मातरः, १२. लोकमातरः, १३. धृतिः, १४. पुष्टिः, १५. तुष्टिः, १६. आत्मनः कुलदेवताः।

इन मातृकाओं का पूर्ववत् पूजन करें।

षोडशमातृका चक्र

पूर्व

उत्तर (बाएँ) — दक्षिण (दाएँ)

लाल १६ आत्मन कुल देवता	सफेद चावल १२ लोक माताः	लाल ८ देव सेना	सफेद चावल ४ मेधा
सफेद चावल १५ तुष्टिः	लाल ११ माताः	सफेद चावल ७ जया	लाल ३ शची
लाल १४ पुष्टिः	सफेद चावल १० स्वाहा	लाल ६ विजया	सफेद चावल २ पद्मा
सफेद चावल १३ धृतिः	लाल ९ स्वधा	सफेद चावल ५ सावित्री	लाल १ गणेश, गौरी

पश्चिम

सप्त घृतमातृका पूजन

अग्निकोण में दीवार पर घी की धार से सात बिन्दुओं को बनाकर गुड़ से एक में मिला देना चाहिए और नाम ले लेकर उनका आह्वान-पूजन करना चाहिए। सप्तघृत मातृकाओं के नाम क्रमशः इस प्रकार हैं—

१. ॐ कीर्त्यै नमः, २. ॐ लक्ष्म्यै नमः, ३. ॐ धृत्यै नमः, ४. ॐ मेधायै नमः, ५. ॐ स्वाहायै नमः, ६. ॐ प्रज्ञायै नमः, ७. ॐ सरस्वत्यै नमः ।
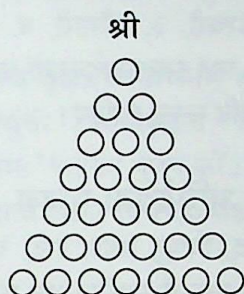
सप्तघृत मातृका चक्र

चौंसठ योगिनी पूजन

एक श्वेत वस्त्र पर रोली से चौंसठ खाने बनाकर एक-एक खाने में एक-एक योगिनियों को स्थित करें। इनके नाम क्रम से यह हैं—

१. गजानना, २. सिंहमुखी, ३. गृहस्था, ४. काकतुंडिका, ५. उग्रग्रीवा, ६. हयग्रीवा, ७. वाराही, ८. शरमानना, ९. उलूकी, १०. शिवाख्या, ११. मयूरा, १२. विकटानना, १३. अष्टवक्रा, १४. कोटराक्षी, १५. कुब्जा, १६. विकटलोचना, १७. शुष्कोदरी, १८. लल्लजिह्वा, १९. श्वेतदष्ट्रा, २०. वानरानना, २१. ऋक्षाक्षी, २२. केकरा, २३. वृहत्तुन्डा, २४. सुराप्रिया, २५. कपालहस्ता, २६. रक्ताक्षी, २७. शुक्री, २८. श्येनी, २९. कपोतिका, ३०. पाशहस्ता, ३१. दण्डहस्ता, ३२. प्रचण्डा, ३३. चण्डविक्रमा, ३४. शिशुघ्नी, ३५. पापहन्त्री, ३६. काली, ३७. रुधिर पायिनि, ३८. वसोधरा, ३९. गर्भभक्षा, ४०. हस्ता, ४१. ऽऽन्त्रमालिनी, ४२. स्थूलकेशी, ४३. वृहत्कुक्षिः, ४४. सर्पास्या, ४५. प्रेतहस्ता, ४६. दशशूकरा, ४७. क्रौञ्ची, ४८. मृगशीर्षा, ४९. वृषानना, ५०. व्यात्तास्या, ५१. धूमिनि, श्वाषाः, ५२. व्यौमैकचरणा, ५३. उर्ध्वदृक्, ५४. तापनी, ५५. शोषिणी दृष्टि, ५६. कोटरी, ५७. स्थूल नासिका, ५८. विद्युत्प्रभा, ५९. बलाकास्या, ६०. मार्जारी, ६१. कटपूतना, ६२. अट्ठाट्टहासा, ६३.

कामाक्षी, ६४. मृगाक्षी मृगलोचना।

स्थलमातृका पूजन

१. ब्राह्मी, २. माहेश्वरी, ३. कौमारी, ४. वैष्णवी, ५. वाराही, ६. इन्द्राणी, ७. चामुण्डा—ये सात स्थल मातृकाओं का नाम लेकर पूर्ववत् कहे हुए रीति से आह्वान पूजनादि करना चाहिए।

अधिदेवता पूजन

ईश्वर शिवा, स्कन्द, विष्णु, ब्रह्मा, इन्द्र, यम, काल, चित्रगुप्त—ये क्रम से नवग्रहों के दक्षिण भाग में स्थापित कर पूजन करें।

प्रत्यधि देवता पूजन

अग्नि, जल, पृथ्वी, विष्णु, इन्द्र इन्द्राणी, प्रजापति, सर्प, ब्रह्मा ये क्रम से नवग्रहों के वाम भाग में स्थापित कर पूजन करें।

पञ्चलोक पाल

१. गणपति, २. दुर्गा, ३. वायु, ४. आकाश और ५. अश्विनी कुमार।

पंचलोक पालों को नौ ग्रहों के उत्तर भाग में आह्वान स्थापन तथा पूजनादि करना चाहिए।

दश दिक्पाल

१. इन्द्र, २. अग्नि, ३. यम, ४. नर्ऋृति, ५. वरुण, ६. वायु, ७. कुबेर, ८. ईश्वर, ९. अनन्त और १०. ब्रह्मा।

दश दिक्पालों को दसों दिशाओं में स्थापित करें।

श्री कार्तिकेय पूजन

जहाँ देवी का आसन (रक्त वस्त्र) है उसी के सामने नीचे की ओर षडानन स्वामी कार्तिकेय का पूजन करना चाहिए।

बिल्व पत्र पूजन

बिल्व वृक्ष की एक डाल काटकर लाए और आसन के ऊपर छाया की भाँति लगा दें। अभाव में २-३ पत्तियों की ९ पंखुड़ियाँ ही लाकर वस्त्र पर रख ध्यान करें—

ॐ चतुर्भुज बिल्व वृक्षः रजताभ्याम् वृषस्थितम्।
नानालंकार संयुक्तं जटामण्डल धारिणीम्॥

'**ॐ बिल्व वृक्षाय नमः**' कहकर पूजन करें। फिर प्रार्थना करें—**ॐ श्री फलोऽसि महाभाग सदात्वं शंकर प्रिये कामाक्ष्या रोपनार्थाय त्वांमहं वरये प्रभो।**

अब पूजनकर्त्ता भावना करके वृषभ, त्रिशूल और डमरू का भी पूजन करें। तदनन्तर महालक्ष्मी, महासरस्वती तथा महाकाली का पूजन करें।

कामाख्या पूजन तथा कामाख्या सिद्धि

अब देवी के पूजन के लिए साधक को दत्त चित्त हो अग्रसर होना चाहिए। रक्त वस्त्र पर कामाक्षा यन्त्र अवश्य हो। इसके अतिरिक्त जो मन्त्र-यन्त्र-तन्त्र सिद्ध करना हो उसे भी रखकर साथ ही पूजन करें। यन्त्र-तन्त्र कितनी भी संख्या में पूजन के लिए रख दिए जाए, पूजन मात्र से सिद्ध हो जाते हैं किन्तु मन्त्र तो यथोचित संख्या में जपने से ही सिद्ध होंगे।

ध्यान—महापद्मवनान्तः स्ये कारणानन्द विग्रहे।
शब्दब्रह्ममयि स्वच्छे कामेश्वरि प्रसीदमे॥

प्रार्थना

रक्ताम्भोधिस्थपीतोल्लसदरुण सरोजाधिरूढा कराब्जै। शूलं कोदण्ड मिक्षूद्भवमथगुणमप्यङ्कुशं पञ्चबाणान्॥ बिभ्राणाऽसृक्कपालं त्रिनयनलसिता पीनवक्षोरुहाढ्या देवी बालार्क वर्ण भवतु सुखकारी कामाक्ष्या परा नः॥ तुलाकोटि पराक्रान्ता पादपद्मचराश्रिता। सिंहासनोर्द्धं संसुप्ता शवाशन कृताश्रया॥ मणिप्रभा विघ्नेन शिवेन परमेष्ठिना। नवकेशेन संश्लिष्टा कामाख्या परमेश्वरी॥

आह्वान—ॐ भगवती स्वकीय गण तथा परिवार सहिते इहागच्छ इह तिष्ठ, मम पूजा गृहाण, सम्मुखे भव वरदो भव।

सिंहचर्मोत्तरासंगा कामाख्या विपलोदरी।
वैयाघ्रचर्मवसना तथा चैव हरोदरी॥
चण्डित्व चण्डिरूपोसि सुरतेजो महाबले।
आगच्छ तिष्ठ यज्ञेस्मिन् यावत् पूजां करोम्यहम्॥

प्राण प्रतिष्ठा

विनियोग—विनियोग के लिए पृथ्वी पर जल छोड़े कामाख्या देव्याः प्राण प्रतिष्ठा मन्त्रस्य ब्रह्मा, विष्णुः महेश्वरा ऋषयः ऋग् यजुसामनिच्छंदासि चैत्यन्त देवता प्राण प्रतिष्ठायाः विनियोगः।

***मन्त्र*— ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हं सः कामाक्षायाः प्राणाः इह प्राणाः। ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हं सः कामाक्षायाः जीव इह स्थितः। ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं कामाक्षायाः (अस्यां मूतौं व चित्रौ) सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनस्त्वक्चक्षुः श्रोत्र-जिह्वा-घ्राण-पाणिपाद-पायूपस्थानि इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।**

अस्यै प्राणः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च।
अस्यै देवतवमचीर्य मामहेति च कश्चन॥

अब साधक या पूजनकर्ता मूल मन्त्र '**ॐ ह्रीं देव्यै नमः**' का जप करें पुनः पूर्वोक्त विधि अनुसार अंगन्यास मातृका न्यास करावे। तथा नीचे लिखे मन्त्र से तीन बार पुष्पांजलि प्रदान करे—

ॐ भूः भुवः स्वः ॐ कामाक्ष्यै चामुण्डायै विद्महे भगवत्यै धीमहि तन्नो गौरी प्रचोद्यात्।

पूजन—अब देवी की षोडशोपचार विधि से पूजन करे। '**ॐ ऐं ह्रीं क्लीं कामाख्यै स्वाहा**' यह देवी का द्वादश अक्षर वाला मन्त्र है। इसी एक मन्त्र से देवी का पूजन करना चाहिए तथा तीन पत्तियों वाले बेलपत्ते की पंखुड़ी आसन के लिए इस तरह मन्त्र बोलकर दें—**ॐ ऐं ह्रीं क्लीं कामाख्यै स्वाहा पाद्यं समर्पयामि।**

अर्घ्य के लिए—ॐ ऐं ह्रीं क्लीं कामाख्यै स्वाहा अर्घ्य समर्पयामि।

इस प्रकार से पूजन कर निम्नलिखित मन्त्र से प्रार्थना करनी चाहिए—

प्रार्थना— जय कामेशि चामुण्डे जय भूतापहारिणि।
जय सर्वगते देवि कामेश्वरि नमोऽस्तु ते॥
नमों देविमहाविद्ये! सृष्टिस्थित्यन्त कारिणी।
नमः कमल पत्राक्षि! सर्वाधारे नमोऽस्तु ते॥
सविश्वतैजसप्राज्ञ वराट् सूत्रात्मिके नमः।
नमोव्याकृतरूपायै कूटस्थायै नमो नमः॥
कामाक्ष्ये सर्गादिरहिते दुष्टसंरोधनार्गले!।
निरर्गल प्रेमगम्ये! भर्गे देवि! नमोऽस्तु ते॥
नमः श्री कालिके! मातर्नमो नील सरस्वति।
उग्रतारे महोग्रे ते नित्यमेव नमोनमः॥
छिन्नमस्ते! नमस्तेऽस्तु क्षीरसागर कन्यके।
नमः शाकम्भरि शिवे! नमस्ते रक्तदन्तिके॥
निशुम्भ शुम्भदलनि! रक्तबीज विनाशिनि।
धूम्रलोचन निर्णासे! वृत्रासुरनिबर्हिणिं॥
चण्डमुण्ड प्रमथिनि! दानवान्त करे शिवे!।
नमस्ते विजये गंगे शारदे! विकटानने॥
पृथ्वीरूपे दयारूपे तेजोरूपे! नमो नमः।
प्राणरूपे महारूपे भूतरूपे! नमोऽस्तु ते॥
विश्वमूर्ते दयामूर्ते धर्ममूर्ते नमो नमः।
देवमूर्ते ज्योतिमूर्ते ज्ञानमूर्ते नमोऽस्तु ते॥
कामाख्ये काम रूपस्थे कामेश्वरी हर प्रिये।
कामांश्च देहि मे नित्यं कामेश्वरि नमोस्तुते॥

जप नियम

इसके बाद (१) **'ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे'** (यह मन्त्र राज है) या (२) **'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं कामाख्यै स्वाहा'** (यह कामाख्या देवी का दशाक्षर

मन्त्र है) या (३) **'ॐ भूः भुवः स्वः ॐ कामाक्ष्यै चामुण्डायै विद्महे भगवत्यै धीमहि धियो योनः प्रचोदयात्।'** (यह कामाख्या देवी का गायत्री मन्त्र है) इसका प्रतिदिन यथाशक्ति बराबर से जप करें। मन्त्र में जितने अक्षर हैं उतने लाख का मन्त्र जप एक पुरश्चरण कहलाता है। पुरश्चरणहीन मन्त्र भी निष्प्राण समझा जाता है। एक पुरश्चरण समाप्त होने पर हवनादि करना चाहिए। जप संख्या का दशांश हवन, हवन का दशांश तर्पण किया जाता है। हवन द्रव्यों में विशेषकर घृत, खीर, तिल, बिल्व पत्र, यव मधु आदि लेकर दशांश हवन करे। तब देवी की सिद्धि प्राप्त होती है।

तत्पश्चात् अन्य मन्त्रों की सिद्धि के लिए उपरोक्त किसी एक मन्त्र को, अथवा किसी दो या तीनों को १०८ बार जपे। यह साधक के मनोबल और इच्छा के ऊपर है और तब उस मन्त्र के विधि और संख्यानुसार वह मन्त्र जपे। पश्चात् संख्यानुसार जप समाप्त होने पर हवन करें। शेष नियम पहले जैसा ही है अर्थात् उपरोक्त मन्त्रों के जप के १० हवन के और १ तर्पण के हुआ और जो अन्य कामनार्थ मन्त्र जपा गया है उसकी संख्यानुसार दशांश हवन और दशांश तर्पण करे तब वह मन्त्र भी सिद्ध हो जाता है। इसमें तनिक भी संशय नहीं है।

दिग्बन्धन

आत्म रक्षार्थ तथा यज्ञ रक्षार्थ निम्न मन्त्र से जल, सरसों या पीले चावलों को (अपने चारों ओर) छोड़ें—

मन्त्र—ॐ पूर्वे रक्षतु वाराहः आग्नेयां गरुड़ध्वजः।
दक्षिणे पद्मनाभस्तु नैऋत्यां मधुसूदनः॥
पश्चिमे चैव गोविन्दो वायव्यां तु जनार्दनः।
उत्तरे श्री पति रक्षे देशान्यां हि महेश्वरः॥
ऊर्ध्व रक्षतु धातावो ह्यधोऽनन्तश्च रक्षतु।
अनुक्तमपि यम् स्थानं रक्षतु॥
अनुक्तमपियत् स्थानं रक्षत्वीशो ममाद्रिधृक्।
अपसर्पन्तु ये भूताः ये भूताः भुवि संस्थिताः॥

ये भूताः विघ्नकर्तारस्ते गच्छन्तु शिवाज्ञया।
अपक्रमंतु भूतानि पिशाचाः सर्वतोदिशम्।
सर्वेषाम् विरोधेन यज्ञकर्म समारम्भे॥
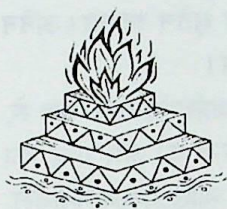
हवन विधि

अग्नि-स्थापन—तुष, केश, रेत, भस्मादि निषेध वस्तु से रहित चारों कोण से हस्त परिमाण वेदी बनाना चाहिए। भूमि को कुशों से शुद्ध करे। इन कुशों को ईशान दिशा में रख कर शुद्ध गोबर और जल से लीपे। श्रुवा के अग्रभाग से वेदी के बीच में दक्षिण तरफ से शुरू करके ३ रेखा खींचे जो कि पश्चिम से पूर्व की ओर हो। अनामिका और अंगूठे से खींची हुई लकीर की मिट्टी को थोड़ा सा लेकर ईशान दिशा में फेंक दे। फिर वेदी पर जल छिड़के। वेदी के पूर्व में उत्तर की ओर अग्रभाग करके कुशा रखे। पुनः वेदी के दक्षिण में पूर्व की ओर अग्रभाग पर कुशा रखे। पुनः वेदी के पश्चिम में उत्तर की ओर अग्रभाग करके कुशा रखे। पुनः वेदी के उत्तर में पूर्व की ओर अग्रभाग कर कुशा रखे। तब कांसे के पात्र में अग्नि मँगवाए और पूर्व मुख अग्नि निम्न मन्त्र द्वारा स्थापन करें—

मन्त्र—**त्वं मुखं सर्वदेवां सप्तार्चिरभिद्यते। आगच्छ भगवन्नग्ने यज्ञेऽस्मिन्सन्निधो भव॥ अग्निं आवाहयामि स्थापयामि इहागच्छ इह तिष्ठ।**

'**ॐ पावकाग्नये नमः**'—इस मन्त्र द्वारा पञ्चोपचार से पूजा करें। तब हाथ में पुष्प लेकर प्रार्थना करें—**ॐ अग्ने खाण्डिल्यगोत्रमेषध्वज! प्राङ्मुख मम सम्मुखो भव।**

प्रथम ये सात आहुतियाँ घी की दें—

(१) ॐ प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये इदं न मम। (२) ॐ इन्द्राय स्वाहा। इदमिन्द्राय इदं न मम। (३) ॐ अग्नये स्वाहा। इदमग्नये इदं न मम। (४) ॐ सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय इदं न मम। (५) ॐ भूः स्वाहा। इदमग्नये इदं न मम। (६) ॐ भुवः स्वाहा। इदं वायवे इदं न मम। (७) ॐ स्वः स्वाहा। इदं सूर्याय इदं न मम।

पूर्णाहुति—अब जिन-जिन मन्त्रों की जितनी आहुतियाँ देनी हों वह देनी चाहिए। फिर उन्हीं मन्त्रों को कहने के बाद नीचे लिखे मन्त्र से पूर्णाहुति दें—

ॐ सप्तमे अग्नेमधः स सप्ति जिह्वाः सप्त ऋषयः सप्त धाम प्रियाणि। सप्त होत्राः सप्त धात्वा यजन्ति सप्त योनीरापृणस्व धृतेन स्वाहा। अनेन होमेन श्री परमेश्वरी कामाक्ष्या देवी प्रीयतां न मम।

दशांश हवन के बाद दशांश तर्पण 'कामाख्या तर्पयामि' इस मन्त्र से, तर्पण संख्या का दशांश मार्जन कामाख्या मूर्ति का, यन्त्र का और मन्त्र, का 'कामाख्यां' मार्जयामि इस मन्त्र से होता है। मार्जन के प्याले में दूध गंगाजल, चन्दन में से एक अथवा तीनों सम्मिलित होना चाहिए। यह मार्जन दूब से किया जाता है और अंत में मार्जन संख्या का दशांश ब्राह्मण भोजन हो तब मन्त्र जप की अथवा पाठ की पूर्णता होती है।

जप समर्पण—मन्त्र जप पूरा करके उसे भगवती को समर्पण करते हुए कहें—

गुह्यति गुह्य गोप्त्री त्वं, गृहाणास्मत्कृतं जपम्।
सिद्धिर्भवतु मे देवि, त्वत्प्रसादान्महेश्वरि॥

इस प्रकार देवी के बाएँ हाथ में जप समर्पण करे।

अब श्रुवा से भस्म लेकर लगाए—

ॐ त्र्यायुषं जमदग्ने इति ललाटे।

ॐ कश्यपस्य त्र्यायुषम् इति ग्रीवायां।

ॐ यद्देवेषु त्र्यायुषम् इति दक्षिण बाहुमूले।

ॐ तन्नोऽअस्तु त्र्यायुषम् इति हृदि।

अब वेदी के चारों तरफ रखी हुई कुशओं को अग्नि में डाल दे। आचार्य और ब्राह्मणों को दक्षिणा दें। तब हाथ में पुष्प लेकर प्रार्थना करें।

प्रार्थना

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः।
नमः प्रकृत्यै भद्रार्य नियताः प्रणाताः स्माताम्॥

नमस्ते पार्श्वयोः पृष्ठे नमस्ते पुरतोऽम्बिके!।
नमः ऊर्ध्व नमश्चाऽधः सर्वत्रैव नमोनमः॥
जय देवि! जगन्मातर्जय देवि परात्परे!।
जय श्री कामरूपस्थे! जय सर्वोत्तमोत्तमे॥

कामाख्या ध्यानम्

रविशशियुतकर्णा कुंकुमापीतवर्णा,
मणिकनकविचित्रा लोलजिह्वा त्रिनेत्रा।
अभयवरदहस्ता साक्षसूत्रप्रहस्ता,
प्रणतसुरनरेशा सिद्धकामेश्वरी सा॥
अरुण-कमलसंस्था रक्तपद्मासनस्था,
नवतरुणशरीरा मुक्तकेशी सुहारा।
शवहृदि पृथुतुङ्गा स्वांघ्रि, युग्मा मनोज्ञा,
शिशुरविसमवस्त्रा सर्वकामेश्वरी सा।
विपुलविभवदात्री स्मेरवक्त्रा सुकेशी,
दलितकरकदन्ता सामिचन्द्रावनभ्रा।
मनसिज-दृशदिस्था योनिमुद्रांलसन्ती।
पवनगगनसक्तां संश्रुतस्थानभागा॥
चिन्त्या चैवं दीप्यदग्निप्रकाशा,
धर्मार्थाद्यैः साधकैर्वाञ्छितार्थः॥

— कालिका पुराण

कामाख्या स्तोत्रम्

जय कामेशि चामुण्डे जय भूतापहारिणि।
जय सर्वगते देवि कामेश्वरि नमोऽस्तु ते॥
विश्वमूर्ते शुभे शुद्धे विरूपाक्षि त्रिलोचने।
भीमरूपे शिवे विद्ये कामेश्वरि नमोऽस्तु ते॥
मालाजये जये जम्भे भूताक्षि क्षुभितेऽक्षये।

महामाये महेशानि कामेश्वरि नमोऽस्तु ते॥
भीमाक्षि भीषणे देवि सर्व्वभूत-क्षयङ्करि।
करालि विकरालि च कामेश्वरि नमोऽस्तु ते॥
कालि कराल विक्रान्ते कामेश्वरि हरप्रिये।
सर्व्वशास्त्रसारभूते कामेश्वरि नमोऽस्तु ते॥
कामरूप-प्रदीपे च नीलकूट-निवासिनि।
निशुम्भ-शुम्भमथनि कामेश्वरि नमोऽस्तु ते॥
कामाख्ये कामरूपस्थे कामेश्वरि हरिप्रिये।
कामनां देहि में नित्यं कामेश्वरि नमोऽस्तु ते॥
वपानाढ्यवक्त्रे त्रिभुवनेश्वरि।
महिषासुरवधे देवि कामेश्वरि नमोऽस्तु ते॥
छागतुष्टे महाभीमे कामख्ये सुरवन्दिते।
जय कामप्रदे तुष्टे कामेश्वरि नमोऽस्तु ते॥
भ्रष्टराज्यो यदा राजा नवम्यां नियतः शुचिः।
अष्टम्याच्च चतुर्द्दश्यामुपवासी नरोत्तमः॥
संवत्सरेण लभते राज्यं निष्कण्टकं पुनः।
य इदं श्रृणुवाद्भक्त्या तव देवि समुद्भवम्॥
सर्वपापविनिर्म्मुक्तः परं निर्वाणमृच्छति।
श्रीकामरूपेश्वरि भास्करप्रभे, प्रकाशिताम्भोजनिभायतानने।
सुरारि-रक्षः-स्तुतिपातनोत्सुके, त्रयीमये देवनुते नमामि॥
सितसिते रक्तपिशङ्गविग्रहे, रूपाणि यस्याः प्रतिभान्ति तानि।
विकाररूपा च विकल्पितानि, शुभाशुभानामपि तां नमामि॥
कामरूपसमुद्भूते कामपीठावतंसके।
विश्वाधारे महामाये कामेश्वरि नमोऽस्तु ते॥
अव्यक्त विग्रहे शान्ते सन्तते कामरूपिणि।
कालगम्ये परे शान्ते कामेश्वरि नमोऽस्तु ते॥
या सुम्षुनान्तरालस्था चिन्त्यते ज्योतिरूपिणी।
प्रणतोऽस्मि परां वीरां कामेश्वरि नमोऽस्तु ते॥

दंष्ट्राकरालवदने मुण्डमालोपशोभिते।
सर्व्वतः सर्वङ्गे देवि कामेश्वरि नमोस्तु ते॥
चामुण्डे च महाकालि कालि कपाल-हारिणी।
पाशहस्ते दण्डहस्ते कामेश्वरि नमोऽस्तु ते॥
चामुण्डे कुलमालास्ये तीक्ष्णदंष्ट्र महाबले।
शवयानस्थिते देवि कामेश्वरि नमोऽस्तु ते॥

—योगिनीतन्त्र

कामाख्या कवचम्

ॐ कामाख्याकवचस्य मुनिर्वृहस्पति स्मृतः।
देवी कामेश्वरी तस्य अनुष्टुपछन्द इष्यतः॥
विनियोगः सर्व्वसिद्धौ नञ्च शृण्वन्तु देवताः।
शिरः कामेश्वरी देवी कामाख्या चक्षुषी मम॥
शारदा कर्णयुगलं त्रिपुरा वदनं तथा।
कण्ठे पातु महामाया हृदि कामेश्वरी पुनः॥
कामाख्या जठरे पातु शारदा पातु नाभितः।
त्रिपुरा पार्श्वयोः पातु महामाया तु मेहने॥
गुदे कामेश्वरी पातु कामाख्योरुद्वये तु माम्।
जानुनोः शारदा पातु त्रिपुरा पातु जङ्घयोः॥
महामाया पादयुगे नित्यं रक्षतु कामदा।
केशे कोटेश्वरी पातु नासायां पातु दीर्घिका॥
दन्तसङ्घाते मातङ्ग्यवतु चाङ्गयोः।
बाह्वोर्म्मां ललिता पातु पाण्योस्तु बनवासिनी॥
विनध्यवासिन्यङ्ग लीषु श्रीकामा नखकोटिषु।
रोमकूपेषु सर्व्वेषु गुप्तकामा सदावतु॥
पादाङ्गुलि-पार्ष्णिभागे पातु मां भुवनेश्वरी।
जिह्वायां पातु मां सेतुः कः कण्ठाभ्यन्तरेऽवतु॥
पातु नश्चान्तरे वक्षः ईः पातु जठारान्तरे।

सामिन्दुः पातु मां वस्तौ विन्दुर्व्विद्वन्तरेऽवतु॥
ककारस्त्वचि मां पातु रकारोऽस्थिषु सर्व्वदा।
लकाराः सर्व्वनाडिषु ईकारः सर्व्वसन्धिषु॥
चन्द्रःस्नायुषु मां पातु विन्दुर्मज्जासु सन्ततम्।
पूर्व्वस्यां दिशि चाग्नेष्यां दक्षिणे नैर्ऋते तथा॥
वारुणे चैव वायव्यां कौवेरे हरमन्दिरे।
अकाराद्यास्तु वैष्णवा अष्टौ वर्णास्तु मन्त्रगाः॥
पान्तु तिष्ठन्तु सततं समुद्भवविवृद्धये।
ऊर्द्धाधः पातु सततं मान्तु सेतुद्वयं सदा॥
नवाक्षराणि मन्त्रेषु शारदा मन्त्रगोचरे।
नवस्वरन्तु मां नित्यं नासादिषु समन्ततः॥
वातपित्तकफेभ्यस्तु त्रिपुरायास्तु त्र्यक्षरम्।
नित्यं रक्षतु भूतेभ्यः पिशाचेभ्यस्तथैव च॥
तत् सेतु सततं पाता क्रव्याद्भ्यो मान्निवारकौ।
नमः कामेश्वरी देवीं महामायां जगन्मयीम्॥
या भूत्वा प्रकृतिर्नित्यं तनोति जगदायतम्।
कामाख्यामक्षमालाभयवरदकरां सिद्धसूत्रैकहस्तां॥
श्वेतप्रेतोपरिस्थां मणिकनकयुतां कुङ्कमापीतवर्णाम्।
ज्ञानध्यानप्रतिष्ठामतिशयविनयां ब्रह्मशक्रादिवन्द्या॥
मग्नौ विन्द्वन्तमन्त्रप्रियतमविषयां नौमि विद्धयैरतिस्थाम्।
मध्ये मध्यस्य भागे सततविनमिता भावहावली या,
लीला लोकस्य कोष्ठे सकलगुणयुता व्यक्त रूपैकनम्रा।
विद्या विद्यैकशान्ता शमनशमकरी क्षेमकर्त्री वरास्या,
नित्यं पायात् पवित्रप्रणववरकरा कामपूर्व्वेश्वरी नः॥
इति हरकवचं तनुस्थितं शमयति वै शमनं तथा यदि।
इह गृहाण यतस्व विमोक्षणे सहित एष विधिः सह चामरैः॥
इतीदं कवचं यस्तु कामाख्यायाः पठेद् बुधः।
सुकृत् तं तु महादेवी तनुव्रजति नित्यदा॥

नाधिव्याधिभयं तस्य न क्रव्यादृमो भयं तथा।
नाग्नितो नापि तोयेभ्यो न रिपुभ्यो न राजतः॥
दीर्घायुर्व्वहुभोगी च पुत्रपौत्रसमन्वितः।
आवर्त्तयन् शतं देवी मन्दिरे मोदते परे॥
यथा तथा भवेद्बद्धः संग्रामेऽन्यत्र वा बुधः।
तत्क्षणादेव मुक्तः स्यात् स्मरणात् कवचस्य तु॥

—कालिका पुराण

कामाख्या चालीसा

॥ दोहा॥

सुमिरन कामाख्या करूँ, सकल सिद्धि की खानि।
होइ प्रसन्न सत करहु माँ, जो मैं कहौं बखानि॥

जै जै कामाख्या महारानी। दात्री सब सुख सिद्धि भवानी॥
कामरूप है वास तुम्हारो। जहँ ते मन नहिं टरत है टारो॥
ऊँचे गिरि पर करहुँ निवासा। पुरवहु सदा भगत मन आसा।
ऋद्धि सिद्धि तुरतै मिलि जाई। जो जन ध्यान धरै मनलाई॥
जो देवी का दर्शन चाहे। हृदय बीच याही अवगाहे॥
प्रेम सहित पंडित बुलवावे। शुभ मुहूर्त निश्चित विचारवे॥
अपने गुरु से आज्ञा लेकर। यात्रा विधान करे निश्चय धर॥
पूजन गौरि गणेश करावे। नान्दीमुख भी श्राद्ध जिमावे॥
शुक्र को बाँयें व पाछे कर। गुरु अरु शुक्र उचित रहने पर॥
जब सब ग्रह होवें अनुकूला। गुरु पितु मातु आदि सब हूला॥
नौ ब्राह्मण बुलवाय जिमावे। आशीर्वाद जब उनसे पावे॥
सबहिं प्रकार शकुन शुभ होई। यात्रा तबहिं करे सुख होई॥
जो चह सिद्धि करन कछु भाई। मंत्र लेइ देवी कहँ जाई॥
आदर पूर्वक गुरु बुलावे। मन्त्र लेन हित दिन ठहरावे॥
शुभ मुहूर्त में दीक्षा लेवे। प्रसन्न होई दक्षिणा देवै॥
ॐ का नमः करे उच्चारण। मातृका न्यास करे सिर धारण॥

षडङ्ग न्यास करे सो भाई। माँ कामाक्षा धर उर लाई॥
देवी मन्त्र करे मन सुमिरन। सन्मुख मुद्रा करे प्रदर्शन॥
जिससे होई प्रसन्न भवानी। मन चाहत वर देवे आनी॥
जबहिं भगत दीक्षित होइ जाई। दान देय ऋत्विज कहँ जाई॥
विप्रबंधु भोजन करवावे। विप्र नारि कन्या जिमवावे॥
दीन अनाथ दरिद्र बुलावे। धन की कृपणता नहीं दिखावे॥
एहि विधि समझ कृतारथ होवे। गुरु मन्त्र नित जप कर सोवे॥
देवी चरण का बने पुजारी। एहि ते धरम न है कोई भारी॥
सकल ऋद्धि-सिद्धि मिल जावे। जो देवी का ध्यान लगावे॥
तू ही दुर्गा तू ही काली। माँग में सोहे मातु के लाली॥
वाक् सरस्वती विद्या गौरी। मातु के सोहैं सिर पर मौरी॥
क्षुधा, दुरत्यया, निद्रा तृष्णा। तन का रंग है मातु का कृष्णा।
कामधेनु सुभगा और सुन्दरी। मातु अँगुलिया में है मुंदरी॥
कालिरात्रि वेदगर्भा धीश्वरि। कंठमाल माता ने ले धरि॥
तृषा सती एक वीरा अक्षरा। देह तजी जनु रही नश्वरा॥
स्वरा महा श्री चण्डी। मातु न जाना जो रहे पाखण्डी॥
महामारी भारती आर्या। शिवजी की ओ रहीं भार्या॥
पद्मा, कमला, लक्ष्मी, शिवा। तेज मातु तन जैसे दिवा॥
उमा, जयी, ब्राह्मी भाषा। पुरवहिं भगतन की अभिलाषा॥
रजस्वला जब रूप दिखावे। देवता सकल पर्वतहिं जावें॥
रूप गौरि धरि करहिं निवासा। जब लग होइ न तेज प्रकाशा॥
एहि ते सिद्ध पीठ कहलाई। जउन चहै जन सो होई जाई॥
जो जन यह चालीसा गावे। सब सुख भोग देवि प्रद पावे॥
होहिं प्रसन्न महेश भवानी। कृपा करहु निज-जन अस वानी॥

॥ दोहा॥

कहें गोपाल सुमिर मन, कामाख्या सुख खानि।
जग हित माँ प्रगटत भई, सके न कोऊ खानि॥

कामाक्षायाष्टक

एक समय यज्ञ दक्ष कियोतब न्योत सबै जग के सुर डारो।
ब्रह्म सभा बिच माख लग्य तेहि कारण शंकर को तजिडारो।
रोके रुके नहिं दक्ष सुता, बुझाय बहू विधि शंकर हारो।
नाम तेरो बड़ है जग में करुणा करके मम कष्ट निवारो॥ १॥
संग सती गण भेज दिये, त्रिपुरारि हिये मँह नेक विचारो।
राखे नहीं संग नीक अहै जो रुके तो कहूँ नहिं तन तजि डारो।
जाय रुकी जब तात गृहे तब काहु न आदर बैन उचारो।
नाम तेरो बड़ है जग में करुणा करके मम कष्ट निवारो॥ २॥
मातु से आदर पाय मिली भगिनी सब व्यंग मुस्काय उचारो।
तात न पूछ्यो बात कछू यह भेद सती ने नहीं विचारो।
जाय के यज्ञ में भाग लख्यो पर शंकर भाग कतहुँ न निहारो।
नाम तेरो बड़ है जग में करुणा करके मम कष्ट निवारो॥ ३॥
तनक्रोध बढ्यो मनबोध गयो, अपमान भले सहि जाय हजारो।
जाति निरादर होई जहाँ तहँ जीवन धारन को धिक्कारो।
देह हमार है दक्षके अंश से जीवन ताकि सो मैं तजि डारो।
नाम तेरो बड़ है जग में करुणा करके मम कष्ट निवारो॥ ४॥
अस कहि लाग समाधि लगाय के बैठि भई निश्चय उर धारो।
प्रान अपान को नाभि मिलय उदानहिं वायु कपाल निकारो।
जोग की आग लगी अब ही जरि छार भयो छन में तन सारो।
नाम तेरो बड़ है जग में करुणा करके मम कष्ट निवारो॥ ५॥
हाहाकार सुन्यो गण शंभु तो जग विध्वंस सबै करि डारो।
जग्य विध्वंसि देखि मुनि भृगु मन्त्र रक्षक से सब यज्ञ सम्हारो।
वीरभ्रद करि कोप गये और दक्ष को दंड कठिन दै डारो।
नाम तेरो बड़ है जग में करुणा करके मम कष्ट निवारो॥ ६॥
दुखकारन सतीशव कांधे पे डार के विचरत है शिवजगत मंझारो।
काज रुक्यो तब देव गये और श्रीपति के ढिंग जाय पुकारो।

विष्णु ने काटि किये शव खण्ड गिर्‌यो जो जहाँ तहँ सिद्धि बिठारो।
नाम तेरो बड़ है जग में करुणा करके मम कष्ट निवारो॥ ७॥
योनि गिर्‌यो कामाख्या थल सों, बन्यो अतिसिद्ध न जाय संभारो।
बास करें सुर तीन दिना जब मासिक धर्म में देवि निहारो।
कहत गोपाल सो सिद्ध है पीठ जो माँगत है मिल जात सो सारो।
नाम तेरो बड़ है जग में करुणा करके मम कष्ट निवारो॥ ८॥

॥ दोहा॥

लाल होई खल तीन दिन, जब देवि रजस्वला होय।
मज्जन कर नर भव तरहिं, जो ब्रह्म हत्यारा होय॥ १॥
कामाख्या तीरथ सलिल, अहै सुधा सम जान।
कह गोपाल सेवन करूँ, खान, पान, स्नान॥ २॥
भक्ति सहित पढ़िहै सदा, जो अष्टक को मूल।
तिनकी घोर विपत्ति हित, शरण तुम्हारि त्रिशूल॥ 3॥
कामाख्या जगदम्बिके, रक्षहु सब परिवार।
भक्त 'गिरि' पर कृपा करि, देहु सबहिं सुख डार॥ ४॥

कामाक्षा माँ की आरती

आरती कामाक्षा देवी की।
जगत् उधारक सुर सेवी की॥ आरती...

गावत वेद पुरान कहानी।
योनिरूप तुम हो महारानी॥
सुर ब्रह्मादिक आदि बखानी।
लहे दरस सब सुख लेवी की॥ आरती...

दक्ष सुता जगदम्ब भवानी।
सदा शंभु अर्धंग विराजिनी।
सकल जगत् को तारन करनी।
जै हो मातु सिद्धि देवी की॥ आरती...

तीन नयन कर डमरू विराजे।
टीको गोरोचन को साजे।
तीनों लोक रूप से लाजे।
जै हो मातु! लोक सेवी की॥ आरती...

रक्त पुष्प कंठन वनमाला।
केहरि वाहन खंग विशाला।
मातु करे भक्तन प्रतिपाला।
सकल असुर जीवन लेवी की॥ आरती...

कहैं गोपाल मातु बलिहारी।
जाने नहिं महिमा त्रिपुरारी।
सब सत होय जो कह्यो विचारी।
जै जै सबहिं करत देवी की॥ आरती...

प्रदक्षिणा

नमस्ते देवि देवेशि नमस्ते ईप्सितप्रदे।
नमस्ते जगतां धात्रि नमस्ते भक्त वत्सले॥

दण्डवत् प्रणाम्

नमः सर्वाहितार्थायै जगदाधार हेतवे।
साष्टांगोऽयं प्रणामस्तु प्रयत्नेन मया कृतः॥

वर-याचना

पुत्रान्देहि धनं देहि सौभाग्यं देहि मंगले।
अन्यांश्च सर्व कामांश्च देहि देवि नमोऽस्तुते॥

क्षमा प्रार्थना

ॐ विधिहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं यदिच्छित्।
पूर्णं भवतु तत्सर्व त्वत्प्रसादात् महेश्वरीम्॥

देवी विसर्जन

गच्छ देवि महामाया. कल्याणं कुरु सर्वदा।
यथाशक्ति कृता पूजा भक्त्या कमललोचने॥

गच्छन्तु देवताः सर्वे दत्वा में वरभीप्सितम्।
त्वम् गच्छ परमेशानि सुख सर्वत्र गणैः सह॥

पूजन करने वाले को चाहिए कि पूजित देवों के आसन को दाहिने हाथ से स्पर्श करे (हिला दे) ब्राह्मणों को दक्षिणा देने के बाद अभिषेक कराए अर्थात् आचार्य और ब्राह्मण लोग यज्ञकर्ता के मस्तक पर जल के छींटे डालें और मन्त्र पढ़ें—

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ७ शान्तिः पृथिवि शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्ति वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्ति सर्व ७ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामा शान्तिरेधि॥

ॐ शान्ति! शान्ति!! शान्ति!!! सर्वारिष्टा सुशान्तिर्भवतु!!

इसके बाद इष्टमित्रादि सहित प्रतिमा को लेकर किसी जलाशय में विसर्जन करे। विसर्जन से पूर्व कपूर आदि से आरती करनी चाहिए।

विसर्जन के बाद प्रार्थना

आयुर्देहि यशोदेहि भाग्यं भगवति देहि मे।
पुत्रम् देहि धनं देहि सर्वान् कामांश्च देहि मे॥

जो व्यक्ति इस प्रकार कामाक्षा देवी का पूजन जप विधिपूर्वक करता है, उसकी साधना अवश्य ही सफल होती है। वह सब पापों से मुक्त होकर समस्त कामनाओं को प्राप्त करता है तथा अंत में आवागमन के बंधन से छूटकर निश्चत ही मुक्त हो जाता है। इसमें सन्देह नहीं है। उसके यन्त्र-मन्त्र सिद्ध होकर साधक को मनोवांछित फल देते हैं।

प्राधानिक रहस्य

त्रिगुणमयी परमेश्वरी महालक्ष्मी—सावर्णि नाम के राजा ने प्रसंगवश क्रौष्टिक मुनि जिनका दूसरा नाम भागुरि ऋषि भी था, से पूछा कि भगवन् आप मुझे त्रिगुणमयी देवी के प्रधान प्रकृति को बताइए। ऋषि बोले कि हे राजन्! यह विषय परम गोपनीय है, इसे किसी से कहने योग्य नहीं बतलाया गया है, किन्तु तुम मेरे भक्त हो, इसलिए तुमसे न कहने योग्य मेरे पास कुछ भी नहीं है। सुनो! त्रिगुणमयी परमेश्वरी ही महालक्ष्मी, सबकी आदि कारण

हैं। उन्होंने अपने तेज से इस शून्य जगत् को व्याप्त कर रखा है। वे अपनी चारों भुजाओं में मातुलिंग (विजौरे का फल), गदा, खेट (ढाल) एवं पान का बर्तन और मस्तक पर सर्प, लिंग तथा योनि—इन वस्तुओं को धारण करती हैं। तपाए हुए सोने के समान उनकी कांति है, तपाये हुए सुवर्ण के ही उनके आभूषण है। उस महालक्ष्मी ने इस संपूर्ण जगत् को देखकर केवल तमोगुण रूप उपाधि के द्वारा एक अन्य उत्कृष्ट रूप धारण किया।

तमोगुणी परमेश्वरी महाकाली—वह रूप नारी का ही था, जिसके शरीर की कांति निखरे हुए काजल की भाँति काले रंग की थी उसका श्रेष्ठ मुख दाढ़ों से सुशोभित था। नेत्र बड़े-बड़े और कमर पतली थी। उसकी चारों भुजाएँ ढाल, तलवार, प्याले और कटे हुए मस्तक से शोभायमान थी। वह वक्ष-स्थल पर धड़ (कबन्ध) की तथा मस्तक पर मुंडों की माला धारण किए हुए थी। इस प्रकार प्रकट हुई स्त्रियों में श्रेष्ठ तामसी देवी ने महालक्ष्मी से कहा—'माता जी! आपको नमस्कार है। मुझे मेरा नाम और कर्त्तव्य बताइए।' तब महालक्ष्मी ने स्त्रियों में श्रेष्ठ उस तामसी देवी से कहा—'मैं तुम्हें नाम प्रदान करती हूँ और जो-जो कर्म हैं, उनको भी बतलाती हूँ। महामाया, महाकाली, महामारी, क्षुधा, तृषा, निद्रा, एकबीरा, कालरात्रि तथा दुरत्यया—ये तुम्हारे नाम हैं, जो कर्मों द्वारा लोक में चरितार्थ होंगे। इन नामों के द्वारा तुम्हारे कर्मों को जानकर जो उनका पाठ करेगा, वह सुख भोगेगा।

सतोगुणी परमेश्वरी महासरस्वती—हे राजन्! महाकाली से यों कहकर महालक्ष्मी ने अत्यन्त शुद्ध सत्वगुण के द्वारा दूसरा रूप धारण किया, जो चन्द्रमा के समान गौरवर्ण था। वह श्रेष्ठ नारी आपने हाथों में अक्षमाला, अंकुश, वीणा तथा पुस्तक धारण किए हुए थी, महालक्ष्मी ने उसे भी नाम प्रदान किए। महाविद्या, महावाणी, भारती, वाक्, सरस्वती, आर्या, ब्राह्मी, कामधेनु, वेदगर्भा और धीश्वरी (बुद्धि की स्वामिनी) ये तुम्हारे नाम हैं।

महाकाली और महासरस्वती को आदेश—तदन्तर महालक्ष्मी ने महाकाली और महासरस्वती से कहा—'देवियों। तुम दोनों अपने-अपने गुणों के योग्य स्त्री पुरुष के जोड़े उत्पन्न करो।'

महालक्ष्मी द्वारा ब्रह्मा तथा लक्ष्मी को उत्पन्न करना—उन दोनों से

यों कहकर महालक्ष्मी ने पहले स्वयं ही स्त्री पुरुष का एक जोड़ा उत्पन्न किया। वे दोनों हिरण्यगर्भ (निर्मल ज्ञान से युक्त) सुन्दर तथा कमल के आसन पर विराजमान थे। उनमें से एक नारी थी और दूसरा नर। तत्पश्चात् माता महालक्ष्मी ने पुरुष को ब्रह्मन् बिधे! विरन्चि! तथा घात:! इस प्रकार सम्बोधित किया ओर स्त्री को श्री! पद्मा! कमला! लक्ष्मी! इत्यादि नामों से पुकारा।

ऋषि बोले कि हे राजन्। इसके बाद महाकाली और महासरस्वती ने भी एक-एक जोड़ा उत्पन्न किया। इनके भी रूप और नाम मैं तुम्हें बतलाता हूँ।

महाकाली द्वारा शंकर तथा त्रयीविद्या (सरस्वती) को उत्पन्न करना—महाकाली ने कण्ठ में नील चिह्न से युक्त, लाल भुजा, श्वेत शरीर और मस्तक पर चन्द्रमा का मुकुट धारण करने वाले पुरुष को तथा गोरे रंग की नारी को जन्म दिया। वह पुरुष रुद्र, शंकर, स्थाणु, कपर्दी और त्रिलोचन के नाम से प्रसिद्ध हुआ तथा स्त्री के त्रयीविद्या, कामधेनु, भाषा, अक्षरा और स्वरा—ये नाम हुए।

महासरस्वती द्वारा विष्णु और गौरी को उत्पन्न करना—हे राजन्! महासरस्वती ने गोरे रंग की नारी ओर श्याम रंग के नर को प्रकट किया। उन दोनों के नाम भी मैं तुम्हें बतलाता हूँ। उनमें नर (पुरुष) के नाम विष्णु, कृष्ण, हृषीकेश, वासुदेव और जनार्दन हुए तथा स्त्री उमा, गौरी, सती, चण्डी, सुन्दरी, सुभगा और शिवा इन नामों से प्रसिद्ध हुई। इस प्रकार महालक्ष्मी ही दो स्त्री रूप होकर तीन स्त्री रूप हुई और वही युवतियाँ (तीनों रूप) ही तत्काल पुरुष रूप को प्राप्त हुई। इस बात को ज्ञान नेत्र वाले ही समझ सकते हैं। दूसरे अज्ञानी जन इस रहस्य को नहीं जान सकते।

त्रय शक्तियों द्वारा सृष्टि का सृजन, पालन तथा संहार:—हे राजन्! महालक्ष्मी ने त्रयीविद्या रूपा सरस्वती को ब्रह्मा के लिए पत्नी रूप में समर्पित किया, रुद्र को वरदायिनी गौरी तथा भगवान् वासुदेव को लक्ष्मी दे दी। इस प्रकार सरस्वती के साथ संयुक्त होकर ब्रह्मा जी ने ब्रह्माण्ड को उत्पन्न किया और परम पराक्रमी भगवान् रुद्र ने गौरी के साथ मिलकर उसका भेदन किया। राजन्! उस ब्रह्माण्ड में प्रधान (हमतत्त्व) आदि कार्य समूह पंचमहा

भूतात्मक समस्त स्थावर-जंगम-रूप-जगत् की उत्पत्ति हुई। फिर लक्ष्मी के साथ भगवान् विष्णु ने उस संसार का पालन-पोषण किया और प्रलय काल में गौरी के साथ महेश्वर ने उस सम्पूर्ण संसार का संहार किया। तो महाराज! महालक्ष्मी ही सर्वसत्वयुक्त तथा सब तत्त्वों का नाना प्रकार के नाम धारण करती हैं। सगुण वाचक सत्य, ज्ञान, चित्त्, महामाया आदि नामान्तरों से इन महालक्ष्मी का निरूपण करना चाहिए। केवल एक नाम (महालक्ष्मी मात्र) से अथवा अन्य प्रत्यक्ष अनुमान उपमान शब्द प्रमाण से उनका वर्णन नहीं हो सकता।

तो हे राजन्! ध्यान से विचार करो कि जिन सत्वप्रधाना त्रिगुणमयी महालक्ष्मी के तामसी आदि भेद से तीन रूप बताए गए हैं, वे ही शर्वा, चण्डिका, दुर्गा और भगवती आदि नामों से कही जाती हैं और ये ही भगवती दुर्गा भगवान् शंकर के साथ कामाख्या में विराजकर अपने भक्तों को दर्शन देती हैं, और उनकी अभिलाषाएँ पूरी करती हैं। उन्हीं देवी को हम कामाख्या कहते हैं। हम उनके चरणों में शीश नवाते हैं। बोलो! जै कामाख्या की।
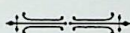
कामाक्षा मन्त्र के प्रयोग

कामाक्षा-मूल-मन्त्र—क्षौं ॐ वषट् ठः ठः॥ यही हवन मन्त्र भी है ओर यही कामाक्षा देवी का जप-मन्त्र भी है।

शिव उवाच

देवि! त्वं भक्त सुलभे सर्व कष्ट हारिणी।
कलौ हि रोगनाशाय उपायं ब्रूहि यत्नतः॥

देव्युवाच

शृणु देव! प्रवक्ष्यामि कलौ मन्त्रौषधिः उत्तमम्।
यः करिष्यति विधानेन तस्यरोगं जायते ध्रुवं॥

भय बाधाओं से मुक्ति

जपेदश्वत्थमालभ्य मन्दवारे शतं द्विजः।
भूतरोगाऽभिचारेभ्यो मुच्यते महतो भयत्॥

अर्थात्—शनिवार के दिन जो द्विज पीपल के नीचे सौ बार उपरोक्त मन्त्र का जप करे तो इससे भौतिक रोग तथा आभिचारिक महान् भय-बाधाओं से शीघ्र मुक्त हो जाता है।

सब व्याधियों का नाश

गुरुच्याः पर्वविच्छिन्नाः पयोक्ता जुहुयाद् द्विजः।
एवं मृत्युञ्जयो होमः सर्वव्याधि विनाशनः॥

अर्थात्—गुरुच को खण्ड-खण्ड करके उसे दूध में भिगोकर अग्नि में होम करे तो इस होम हो 'मृत्युंजय' होम कहते हैं। इसमें सब प्रकार की

व्याधियों नाश करने की शक्ति है।

ज्वर तथा क्षय रोग

आम्रस्य जुहुयात्पत्रै पयोक्तैर्ज्वरशान्तये।
वचाभिः पयसाक्ताभिः क्षयं हुत्वा विनाशयेत्॥

अर्थात्—'ज्वर की शान्ति के लिए दूध में भिगोए आम्र के पत्तों से हवन करें।' क्षीर (दूध) से युक्त मीठे वच का हवन करने से 'क्षयरोग' दूर हो जाता है।

पुनः क्षय रोग

लता पर्वसु विच्छिद्य सोमस्य जुहुयाद्द्विजः।
सोमे सूर्येण संयुक्ते पयोक्ताः क्षय शान्तये॥

अर्थात्—सोमलता को गाँठों पर से अलग-अलग करके उसे दूध में भिगोकर यदि ब्राह्मणों द्वारा अमावस्या को हवन कराया जाए तो 'क्षय रोग' की शान्ति होती है।

राज्ययक्ष्मा (टी.बी.)

मधुत्रितयहोमेन राजयक्ष्मा विनश्यति।
निवेद्य भास्करायाऽन्नं पायसं होमपूर्वकम्।
राजयक्ष्माभिभूतञ्च प्राशयेच्छान्तिमाप्नुयात्॥

अर्थात्—मधुत्रितय अर्थात् दूध-दही, घृत से किए हुए होम में राजयक्ष्मा (टी.बी.) को दूर करने की शक्ति है अथवा खीर का हवन करके सूर्य को अर्पण करे, फिर प्रसाद के रूप में उसका स्वयं भी भोजन करे तो राजयक्ष्मा-जनित उपद्रव शान्त हो जाता है।

कुष्ठरोग-मृगीरोग

कुसुमैः शङ्खवृक्षस्य हुत्वा कुष्ठं विनाशयेत्।
अपस्मारविनाशः स्यादपामार्गस्य तण्डुलैः॥

अर्थात्—शंख वृक्ष के पुष्पों से अर्थात् शंख पुष्पी से हवन करने पर 'कुष्ठरोग' का निवारण होता है। अपामार्ग (चिचिड़ा) के बीज से हवन करने पर 'मृगीरोग' दूर होता है।

उन्माद और प्रमेह

क्षीरवृक्षसमिद्धोमादुन्मादोऽपि विनश्यति।
औदुम्बरसमिद्धोमादतिमेहः क्षयं ब्रजेत्।
प्रमेहं शमयेत हुत्वा मधुनेक्षुरसेन वा॥

अर्थात्—क्षीर वाले वृक्ष की समिधा से हवन करने पर 'उन्माद' रोग शान्त होता है। गूलर की समिधा से हवन करने पर असाध्य 'प्रमेह रोग' भी दूर हो जाता है। अथवा मधु या इक्षु रस के हवन से रोगी पुरुष पुराने प्रमेह का प्रशमन करे।

मसूरिका (बवासीर)

मधुत्रितयहोमेन नयेच्छान्तिं मसूरिकाम्।
कपिला सर्पिणा हुत्वा नयेच्छान्ति मसूरिकाम्॥

अर्थात्—त्रिमधु अर्थात् दूध-दही-घृत के हवन करने से मसूरिका (बवासीर) रोग शान्त हो जाता है। अथवा कपिला गौ के घृत से हवन करके भी मसूरिका रोग शान्त किया जा सकता है।

पशु-जीव-जन्तु सम्बन्धी

उदुम्बरवटाऽश्वत्थैर्गोगजाश्वऽऽमयं हरेत्।
पिपीलि-मधु वल्मीके गृहे जाते शतं शतम्।
शमीसमिद्भिरन्नेन सर्पिषा जुहुयाद् द्विजः।
तदुत्यं शान्तिमायाति शेषेस्तत्र बलिं चरेत्॥

अर्थात्—गूलर, वट और पीपल की समिधाओं से हवन करके गाय, घोड़े एवं हाथी के अजीर्ण को दूर करे। पिपीलिका (चींटी) तथा मधुवल्मीक

(दीमक) जन्तुओं द्वारा गृह में उपद्रव उपस्थित होने पर शमी की समिधाओं, खीर एवं गोघृत से दो-दो सौ बार हवन करें, तब उपर्युक्त बाधा शान्त होती है। अवशिष्ट पदार्थों से वहाँ बलि दी जा सकती है।

देवी-प्रकोप तथा बन्धन (जेल) मुक्तिहेतु

अभ्रस्तनितभूकम्पालक्ष्यादौ वनवेतसः।
सप्ताहं जुहुयादेवं राष्ट्रे राज्यं सुखी भवेत्॥
यां दिशां शतजप्तेन लोष्ठेनाऽभिप्रताडयेत्।
ततोऽग्निभारुतारिभ्यो भयं तस्य विनश्यति॥
मनसैव जपेदेनां बद्धो मुच्येत बन्धनात्॥

अर्थात्—बिजली गिरने पर तथा भूकम्पादि के परिलक्षित (आशंका) होने पर जंगली बेंत की समिधा से सप्ताह भर होम करे तो राष्ट्र (राज्य) में सुख-शान्ति रहे। यदि कोई व्यक्ति सौ बार मन्त्र पढ़कर जिस दिशा में ढेला फेंके, वहाँ अग्निभय, वातभय तथा शत्रुभय कभी नहीं होता । यदि उपरोक्त मूल मन्त्र मन में जपा करें तो बन्धन (जेल) में पड़ा मनुष्य छूट जाता है। इसमें सन्देह नहीं है।

भूत-प्रेत-बाधा निवारण

***मन्त्र*—ॐ क्षौं क्षौं ह्रीं ह्रीं अमुकस्य प्रेतबाधां शान्तय शान्तय करु करु स्वाहा क्षौं ॐ॥ कामख्या! तव दासः नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं॥** पढ़कर १०८ बार शमी के लकड़ी से हवन करे तो यह मन्त्र सिद्ध हो जाता है।

अभिमन्त्र्य शतं भस्म न्यसेद्भूतादिशान्तये।
शिरसा धारयेद्भस्म मन्त्रयित्वा तदित्यृचा॥

अर्थात्—भूतादि बाधा से पीड़ित मनुष्य उपरोकत मन्त्राभिमंत्रित भस्म यदि खा ले या सिर चढ़ा ले तो कैसी ही बाधा हो, उससे मुक्ति पाकर सुखी हो जाता है।

भूतरोगविषादिभ्यः स्पृश्ञ्जप्त्वा विमोचयेत्।
भूतादिभ्यो विमुच्येत् जलं पीत्वाऽभिमन्त्रितम्॥

अर्थात्—उपरोक्त मन्त्र जपता हुआ यदि कोई मनुष्य कुशा के स्पर्श करते हुए झाड़े तो भूत-प्रेत, विषकृत उपद्रव शान्त हो जाते हैं। उपरोक्त मन्त्र से अभिमन्त्रित जल का पान करने से भूत-प्रेत-पिशाचादि से पीड़ित मनुष्य तुरन्त मुक्त हो जाता है।

लक्ष्मी कामना

अथ पुष्टिं श्रियं लक्ष्मी पुष्पैर्हुत्वाऽऽप्नुयाद्द्विजः।
श्री कामो जुहुयात्पद्मै रक्तैः श्रियमवाप्नुयात्॥

अर्थात्—अब पुष्टि श्री और लक्ष्मी देवी को पुष्पों द्वारा प्रसन्न करे। अर्थात् लक्ष्मी चाहने वाले को चाहिए कि वह रक्तोत्पल द्वारा हवन करे।

हुत्वा श्रियमवाप्नोति जाती पुष्पैर्नवैः शुभैः।
शालितण्डुलहोमेन श्रियमाप्नोति पुष्कलाम्॥
समिद्भिर्बिल्ववृक्षस्य हुत्वा श्रियमवाप्नुयात्।
बिलवस्य शकलैर्हुत्वा पत्रः पुष्पैः फलैरपि॥

अर्थात्—जूही के पुष्प (ताजे फूल) तथा साठी के चावल से होम करने पर प्रचुर लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। बिल्व की समिधा से बिलवफल के टुकड़ों, पत्रों एवं पुष्पों को घृत में मिलाकर हवन करने से महालक्ष्मी की प्राप्ति होती है।

श्रियमाप्नोति परमां मूलस्य शकलैरपि।
समिद्भिर्बिल्ववृक्षस्य पायसेन च सर्पिषा॥

अर्थात्—बिल्व वृक्ष की जड़ के टुकड़े, खीर एवं घृत के साथ यदि होम किया जाए तो भी अनन्त लक्ष्मी की प्राप्ति होती है।

लक्ष्मी प्राप्ति, कन्या प्राप्ति तथा कन्या को वर प्राप्ति

शतं शतञ्च सप्ताहं हुत्वा श्रियमवाप्नुयात्।
लाजैस्त्रिमधुरोपेतैर्होमे कन्यामवाप्नुयात्।

अनेन विधिना कन्या वरमाप्नोति वाच्छितम्॥

अर्थात्—बिल्व वृक्ष की जड़ के टुकड़े, खीर एवं घृत के साथ यदि होम किया जाए और एक सप्ताह एक सौ-सौ बार प्रतिदिन हवन करता रहे तो निश्चय ही प्रचुर लक्ष्म प्राप्ति होती है। धान का लावा, त्रिमधु के साथ मिलाकर यदि होम करें तो दिव्य कन्या उत्पन्न होती है। पुनः इसी विधि से वर की अभिलाषा वाली कन्या होम करे तो उसे मनोभिलाषित वर प्राप्त होता है।

स्वर्ण तथा अन्न धन प्राप्ति के लिए

रक्तोत्पलशतं हुत्वा सप्ताहं हेम चाप्नुयात्।
सूर्यबिम्बे जलं हुत्वा जलस्थं हेम चाप्नुयात्।
अन्नं हुत्वाऽप्नुयादन्नं व्राहीन्व्रीहिपतिर्भवेत्॥

अर्थात्—रक्तोत्पल के हवन से (सप्ताह घर में ही) कर्त्ता को सुवर्ण की प्राप्ति होती है। यहाँ तक कि देवी के मन्त्र का उच्चारण करके सूर्य का तर्पण करने से मनुष्य जल में छिपा हुआ (पड़ा हुआ) सुवर्ण भी प्राप्त कर लेता है। अन्न का हवन करने से, अन्न तथा धान का हवन करने से धन तथा धान्य का स्वामी हो जाता है।

पशुधन प्राप्ति के लिए

करीष चूर्णेर्वत्सस्य हुत्वा पशुमवाप्नुयात्।
प्रियङ्गपायसाजयैश्चभवेद्धोमादिभिः प्रजा॥

अर्थात्—बछड़े के गोबर की कण्डी से हवन करने पर पशु धन प्राप्त होता है। दूध-घृत-मिश्रित प्रियंगु (टाँगुन) के हवन से प्रजा की अनुकूलता (सहयोग) प्राप्त होती है।

श्रेष्ठ पुत्र तथा आरोग्य प्राप्ति के लिए

निवेद्य भास्करायाऽन्न पायसं होमपूर्वक।
भोजयेततदृतुस्नाता पुत्रं परमवाप्नुयात्॥

अर्थात्—खीर बनाकर हवन करे और उसे सूर्य भगवान् को अर्पण करके ऋतुस्नाना स्त्री को भोजन करावे तो उसको अवश्यमेव श्रेष्ठ पुत्र पैदा होता है।

इन सबके लिए संख्या, कामना तथा वस्तु के अनुसार हवन करे मन्त्र केवल एक है—'**क्षौं ॐ ॐ ऊः ठः।**' इससे साधक को अवश्यमेव सिद्धि तथा मनोकामना की पूर्णता प्राप्त होती है। काम्य मन्त्र में ओर भी विधि है जिसको पाठकों की जिज्ञासा की शान्ति के लिए नीचे दिया जा रहा है।

आयुष्य के लिए

गीली तथा एक अंकुरित समिधा का हवन आयुष्य-प्रदाता है।

दीर्घायु के लिए

क्षीरी वृक्षों की अग्रभाग (पुलई) युक्त समिधाओं से, मधुरत्रयों (दूध-घृत-दही) से आर्द्र समिधाओं एवं ब्रीहियों (धान्यों) से सौ आहुति देकर मनुष्य सुवर्ण एवं दीर्घायु को प्राप्त करता है।

शतायु के लिए

सुनहले रंग के पीत कमल से (कमल की कली) आहुति देने पर सौ वर्ष की आयु प्राप्ति होती है।

अकाल मृत्यु के लिए

जन्म कुण्डली में अल्पायु योग तथा अकाल मृत्यु योग होने पर, दूर्वा, दुग्ध, मधु अथवा घृत से सौ-सौ आहुति देने पर एक सप्ताह में अकाल मृत्यु मिट जाती है और अल्पायु योग दीर्घायु में परिवर्तित हो जाती है।

अपमृत्यु विनाश के लिए

शमी की समिधा, अन्न, क्षीर और घृत की एक सप्ताह तक दी हुई सौ-सौ आहुतियाँ अपमृत्यु का विनाश करती हैं।

अपमृत्यु के हटाने के लिए

न्यग्रोध (वट) की समिधा से खीर का हवन एक सप्ताह तक नियमित करते रहने से अपमृत्यु दूर हो जाती है।

विजय प्राप्त करने के लिए

जो नवरात्र में पड़वा से अष्टमी तक देवी का मन्त्र जपे तो काल पर भी विजय प्राप्त कर लेता है।

यम पाश से मुक्ति के लिए

यदि मौन होकर निराहार रहकर देवी का मन्त्र जपता रहे तो तीन दिन और तीन रात में ही यम पाश से मुक्त हो जाता है।

अपमृत्यु से छूटने के लिए

जल में डूबकर जप करे तो अपमृत्यु से छुटकारा पा जाते हैं।

राज्य प्राप्ति के लिए

बिल्व वृक्ष के नीचे जप करने से ९ माह में राज्य तक मिल सकता है। मूल, फल तथा पत्र समेत बिल्व की आहुति राज्य प्रदान करती है।

निष्कण्टक राज्य प्राप्ति के लिए

कमल की सौ आहुति देने पर निष्कण्टक राज्य प्राप्त कराता है।

ग्रामाधीश होने के लिए

अगहनी धान तथा कोदों के चूर्ण की लपसी का हवन मनुष्य को ग्रामाधीश बना देता है।

युद्ध या मुकदमें में विजय के लिए

पीपल तरु की काठी का हवन करके युद्ध काल में मनुष्य विजयी

होता है। मुकदमें में विजय प्राप्त करता है।

सर्वत्र विजय के लिए

मन्दार की समिधा के हवन से सर्वत्र विजय प्राप्त होती है।

वर्षा होने के लिए

बेंत की लकड़ी (समिधा) पर दूध, पत्र, पुष्प के साथ खीर की सौ आहुति देकर एक सप्ताह तक चलाया जाए तो अवश्यमेव वृष्टि होती है।

वर्षा के लिए

नाभि तक जल में खड़े होकर एक सप्ताह तक देवी का जप किया जाए तो वृष्टि होने लगती है।

वर्षा रोकने के लिए

यदि वृष्टि बन्द करनी हो, तो जल में भस्म की सो आहुति देनी चाहिए ऐसा करने से अतिवृष्टि बन्द हो जाती है।

ब्रह्मतेज प्राप्ति के लिए

पलाश की समिधा से हवन करने पर ब्रह्मतेज प्राप्त होता है।

मनोरथों की पूर्णता के लिए

पलाश-पुष्पों की आहुतियाँ सब प्रकार के मनोरथों को पूर्ण करती हैं।

मस्तिष्क और बुद्धि बढ़ाने के लिए

दूध की आहुति 'मेधा' तथा घृत की आहुति 'बुद्धि' का बढ़ाती है।

निर्मल बुद्धि पाने के लिए तथा स्मरण शक्ति बढ़ाने के लिए

ब्राह्मी बूटी के रस को देवी मन्त्र से अभिमन्त्रित करके यदि पान किया

जाए तो निर्मल बुद्धि प्राप्त होती है और स्मरण-शक्ति भी बढ़ती है।

सुन्दर वस्त्र तथा भोजन पाने के लिए

पुष्प की आहुति से, सुगन्धित तथा तन्तुओं (सूतों) की आहुति से सुन्दर-सुन्दर वस्त्र तथा भोजनादि प्राप्त होता है।

अभीष्ट जन को वश में करने के लिए

मधु के साथ लवण का हवन करने से अभीष्ट जन को मनुष्य अपने वश में कर लेता है।

प्रेमी को वश करने के लिए

मधु-मिश्रित बिल्वकुसुम के हवन से प्रेमी वश में हो जाता है।

स्वास्थ्य और आयुष्य प्राप्ति के लिए

जल में खड़े होकर देवी मन्त्र पढ़ते हुए जो प्रतिदिन अंजलि से अपने ऊपर अभिषेक करता है, वह बुद्धि, स्वास्थ्य एवं आयुष्य को प्राप्त करता है।

अन्य जन को प्रसन्न करने के लिए

जल में ही खड़े होकर देवी मन्त्र को जपते हुए किसी अन्य पुरुष का ध्यान रखे तो उस पुरुष को प्रसन्नता प्राप्त होती है।

आयु की कामना के लिए

आयु की कामना वाला पुरुष किसी पवित्र स्थान में बैठकर उत्तम विधि से महीने भर प्रतिदिन एक-एक हजार मन्त्र नियमित जपे।

आयु-आरोग्य-लक्ष्मी, पुत्र-कलत्र-एवं यश के लिए

इसी प्रकार का जप आयु-आरोग्य-लक्ष्मी-पुत्र-कलत्र एवं यश की अभिलाषा से चार मास तक करें।

पुद्ध कलत्रादि के साथ विद्या के लिए

आयु-आरोग्य-लक्ष्मी-पुत्र-कलत्र-यश और विद्या इनमें से किसी एक के लिए एक मास तक जप करे और सभी के लिए पाँच मास तक जपे।

कुछ भी दुर्लभ न होने के लिए

बिना किसी आधार के एक पैर पर खड़े होकर भुजाओं को ऊपर उठाये हुए, तीन सौ मन्त्रों का प्रतिदिन महीने भर जप करने से साधक की सभी कामनाएं पूरी हो जाती हैं, इस प्रकार एकादश सहस्र मन्त्र जप कर लेने पर उसकी सभी कामनाएँ पूरी हो जाती हैं—कुछ भी पाना साधक के लिए दुर्लभ नहीं रह जाता।

अनहोनी को होनी में बदलने के लिए

यदि प्राण-अपान वायु को रोक कर तीन सौ मन्त्रों का एक मास तक जप किया जाए तो जप करने वाले की जो इच्छा हो, शीघ्र पूर्ण हो जाती है। अपनी इच्छानुसार रूप बदल सकता है, दूसरे को बुला सकता है, अनहोनी को होनी में बदल सकता है।

देवी का दर्शन पाने के लिए

उपरोक्त प्रकार से एक सहस्र का जप करने पर पुरुष देवी का दर्शन पाकर सर्वस्व प्राप्त कर लेता है।

अभिलाषा पूर्ति के लिए

कौशिक (विश्वामित्र) मुनि का कथन है कि एक पैर पर खड़े हो—ऊर्ध्वबाहु होकर—स्वास रोकते हुए प्रतिदिन सौ मन्त्रों के क्रम से एक मास पर्यन्त जप करें तो उसकी सारी अभिलाषाएँ पूरी हो जाती है।

मनोकामना पूर्ति के लिए

उपरोक्त प्रकार से तेरह सौ मन्त्रों का प्रतिदिन मास पर्यन्त जप करने से

भी साधक अपनी सारी मनोकामनाएँ पूर्ण कर लेता है।

ऋषि होने के लिए

यदि एक पैर से बिना किसी आधार के भुजाएँ उठाकर खड़े हों और एक वर्ष तक जप करें तथा रात में केवल खीर खाए तो वह पुरुष 'ऋषि' हो जाता है।

जो कहे वही हो

उपरोक्त प्रकार से दो वर्ष जप करें तो उसकी वाणी अमोघ हो जाती है, अर्थात् वह जो कहता है—सत्य होकर रहता है।

त्रिकालदर्शी होने के लिए

एक पावँ पर खड़े होकर और दोनों भुजायें बिना किसी आधार के ऊपर उठाकर तीन वर्षों तक जप करने पर मानव 'त्रिकाल-दर्शी' हो जाता है।

सूर्य भगवान् का दर्शन और वर प्राप्ति के लिए

इस प्रकार चार वर्षों तक जप करें तो स्वयं भगवान् सूर्य उसके सामने आकर दर्शन और वर देते हैं।

अणिमादि सिद्धियों की प्राप्ति के लिए

इसी प्रकार से पाँच वर्षों तक जप करने से अणिमादि सिद्धियों की प्राप्ति हो जाती है।

इच्छानुसार रूप धारण करने के लिए

छः वर्षों तक जप करें तो पुरुषों में इच्छानुसार रूप धारण करने की योग्यता प्राप्त हो जाती है।

देवत्व, मनुत्व ओर इन्द्रत्व प्राप्ति के लिए

सात वर्षों तक जप करने से 'देवत्व' नौ वर्षों तक 'मनुत्व' तथा दश वर्षों तक जप करने से 'इन्द्रत्व' प्राप्त हो सकता है।

प्रजापति और ब्रह्मा के समान होने के लिए

ग्यारह वर्षों तक जप करने से 'प्रजापति' तथा बारह वर्षों के जपस्वरूप उसे ब्रह्मा की योग्यता प्राप्त हो जाती है।

पाप नाश के लिए

एक मास के जप से 'स्वर्ण-चोरी' के पाप से मुक्त हो जाता है। तीन मास तीन हजार जप करें तो 'सुरा-पान' का पाप छूट जाता हे। प्रतिदिन तीन सहस्र जप करके महीने भर का अनुष्ठान करने वाला मानव यदि गुरुतल्पगामी हो तो भी पवित्र हो जाता है।

महापातक नाश के लिए

वन में कुटी बनाकर वहीं रहते हुए तीन हजार प्रतिदिन के हिसाब से यदि एक मास तक जप करें तो वह 'ब्रह्महत्या' जैसे महापातक से भी मुक्त हो जाता है।
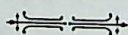
कामाक्षा स्वरूप–कामाख्या यन्त्र

यह यन्त्र देवी स्वरूप ही है। इसको शुभ मूहर्त में पर्व पर, ब्रह्मवेला में स्नान–पूजादि के पश्चात् बनाना चाहिए। सोने या चाँदी के पत्र में भी बनवाया जा सकता है। बनवाने के बाद इसे कामाख्या देवी की भावना करके पूजना चाहिए। इस यन्त्र के सिद्ध होने पर और सभी यन्त्र सिद्ध हो जाते हैं। यदि भोज–पत्र पर गोरोचन और कनेर के कलम से बना हुआ यन्त्र हो तो उसे ताम्र पात्र, स्वण्र पात्र या चाँदी के पात्र में रखकर पूजा करनी चाहिए। बनाने के पहले और सिद्ध करने के पहले नीचे दिए हुए 'सिद्ध कुञ्जिका स्तोत्र' का पाठ अवश्य कर लेना चाहिए, क्योंकि इस स्तोत्र के पाठ करने से सब प्रकार के बाधा विघ्न नष्ट हो जाते हैं। तब यन्त्र बनाए और पूजन करें। धातु में बने हुए यन्त्र का पूर्व बताई रीति अनुसार पूजन करें। पश्चात् देवी सूक्त का पाठ करें, इससे परम सिद्धि प्राप्त होती है। साथ ही यह यन्त्र तथा इसके नीचे रखा हुआ यन्त्र–मन्त्र सिद्ध हो जाता है।

सिद्ध कुञ्जिका स्तोत्र से मारण, काम, क्रोध नाशन मोहन, इष्टदेव मोहन तथा सिद्धि, वशीकरण, मन का वशीकरण, स्तम्भन, इन्द्रियों की विषयों के प्रति उपरति और उच्चाटन, मोक्ष प्राप्ति के लिए छटपटाहट—ये सभी इस स्तोत्र का सोद्देश्य सेवन करने से सफल होते हैं।

शिव उवाच

श्रृणु देवि प्रवक्ष्यामि कुञ्जिकास्तोत्रमुत्तमम्।
येन मन्त्रप्रभावेण चण्डी जापः शुभो भवेत्॥
न कवचं नार्गलास्रोत्रं कीलकम् न रहस्यकम्।
न सूक्तं नापि ध्यानं च न न्यासो न च वार्चनम्॥

कुञ्जिकापाठमात्रेण दुर्गा पाठ फलं लभेत्।
अति गुह्यतरं देवि! देवानामपि दुर्लभम्॥
गोपनीयं प्रयत्नेन स्वयोनिरिव पार्वती।
मारणं मोहनं वश्यं स्तम्भनोच्चाटनादिकम्॥
पाठमात्रेण संसिद्धयेत् कुञ्जिकास्तोत्रमुत्तमम्॥

अथ मन्त्रः

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे॥ ॐ ग्लौं हुँ क्लीं जूं सः ज्वालय ज्वालय ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ज्वल हं सं लं क्षं फट् स्वाहा।

नमस्ते रुद्ररूपिण्यै नमस्ते मधुमर्दिनि।
नमः कैटभहारिण्यं नमस्ते महिषार्दिनि॥
नमस्ते शुम्भहन्त्रयै च निशुम्भासुरघातिनि।
जाग्रतं हि महादेवि जपं सिद्धं कुरुष्व मे॥
ऐंकारी सृष्टिरूपाये ह्रींकारी प्रतिपालिका।
क्लींकारी कामरूपिण्यैं बीजरूपे नमोऽस्तुते॥
चामुण्डा चण्डघाती च यैकारी वरदायिनी।
विच्चेचाभयदां नित्यं नमस्ते मन्त्ररूपिणी॥
धां धीं धूं धूर्जटैः पत्नीं वां वीं वूं वाग्धीश्वरी।
क्रां क्रीं क्रूं कालिका देवि शंशी शूं मे शुभं कुरु॥
हुं हुं हुंकार रूपिण्यै जं जं जं जम्भनादिनी।
भ्रां भ्रीं भ्रूं भैरवी भद्रे भवान्यै ते नमो नमः॥
अं कं चं टं तं पं यं शं वीं दं ऐं वीं हं क्षं।
धिजाग्रं धिजाग्रं त्रोटय त्रोटय दीप्तं कुरु कुरु स्वाहा।
पां पीं पूं पार्वती पूर्णा खां खीं खूं खेचरी तथा।
सां सीं सूं सप्तशती देव्या मन्त्र सिद्धि कुरुष्व मे॥
इदं तु कुञ्जिकास्तोत्रं मन्त्रजागर्तिहेतवे।
अभक्ते नैव दातव्यं गोपितं रक्ष पार्वति॥

यस्तु कुञ्जिकया देवि हीनां सप्तशती पठेत्।
न तस्य जायते सिद्धिररण्ये रोदनं यथा॥

अब विधिपूर्वक देवी के निम्नलिखित मन्त्र तथा यन्त्र की विधिपूर्वक पूजा करें—
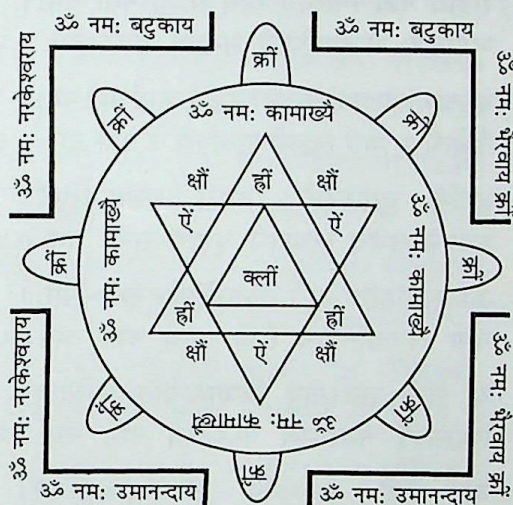
क्षौं ॐ ॐ वषट् ठः ठः

पीतवक्त्राय नमः — **त्रिपुर देवताय नमः**
जत पीतङ्गाय नमः — **सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः**
उमा-महेश्वराभ्यां नमः — **कामाख्या योनि मण्डलाय नमः**

इस प्रकार का यन्त्र बनाए फिर उसी के नीचे मन्त्र लिखें। कामाक्ष्या देवी का बीज मन्त्र 'क्षौं' है। इसके परमेष्ठी, ऋषि, गायत्री छन्द, त्रिपुराख्या देवता हैं।

मन्त्र—**'ॐ ॐ वषट् ठः ठः।'**

अब षोडशोपचार से पूजन करें। तत्पश्चात् देवी सूक्त का पाठ करें। क्योंकि इस सूक्त के पाठ से यन्त्र-मन्त्र सिद्ध होकर सजीव तथा शक्तिवान् हो जाते हैं। देवी की सिद्धि तो अवश्यमेव प्राप्त होती है।

तन्त्रोक्तं देवी सूक्तम्

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्मताम्॥ १॥

रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्यै धात्र्यै नमो नमः।
ज्योत्नाये चेन्दुरूपिण्यै सुखायै सततं नमः॥ २॥

कल्याण्यै प्रणतां वृद्धयै सिद्धयै कुर्मो नमो नमः।
नैर्ऋत्यै भूभृतां लक्ष्म्यै शर्वाण्यै ते नमो नमः॥ ३॥

दुर्गायै दुर्गपारायै सारायै सर्वकारिण्यै।
ख्यात्यै तथैव कृष्णायै धूम्रायै सततं नमः॥ ४॥

अतिसौम्यातिरौद्रायै नतास्तस्यै नमो नमः।
नमो जगत्प्रतिष्ठायै दैव्यै कृत्यै नमो नमः॥ ५॥

या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ ६॥

या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ ७॥

या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ ८॥

या देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ ९॥

या देवी सर्वभूतेषु क्षुधारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ १०॥

या देवी सर्वभूतेषुच्छायारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ ११॥

या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ १२॥

या देवी सर्वभूतेषु तृष्णारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ १३॥

या देवी सर्वभूतेषु क्षान्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ १४॥

या देवी सर्वभूतेषु जातिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ १५॥

या देवी सर्वभूतेषु लज्जारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ १६॥

या देवी सर्वभूतेषु शान्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ १७॥

या देवी सर्वभूतेषु श्रद्धारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ १८॥

या देवी सर्वभूतेषु कान्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ १९॥

या देवी सर्वभूतेषु लक्ष्मीरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ २०॥

या देवी सर्वभूतेषु वृत्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ २१॥

या देवी सर्वभूतेषु स्मृतिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ २२॥

या देवी सर्वभूतेषु दयारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ २३॥

या देवी सर्वभूतेषु तुष्टिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ २४॥

या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ २५॥

या देवी सर्वभूतेषु भ्रान्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ २६॥

इन्द्रियाणामधिष्ठात्री भूतानां चाखिलेषु या।
भूतेषु सततं तस्यै व्याप्तिदेव्यै नमो नमः॥ २७॥

चितिरूपेण या कृत्स्नमेतद्व्याप्य स्थिता जगत्।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ २८॥

स्तुताः सुरैः पूर्वमभीष्टसंश्रयात्तथा सुरेन्द्रेण दिनेषु सेविता।
करोतु सा नः शुभंहेतुरीश्वरी शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः॥ २९॥

या साम्प्रतं चोद्धतदैत्यतापितै रस्माभिरीशा च सुरैर्नमस्यते।
या च स्मृता तत्क्षणमेव हन्ति नः सर्वापदो भक्तिविनम्रमूर्तिभिः॥ ३०॥

देवी मन्त्रों के विषय में महत्त्वपूर्ण बातें

ॐ' ब्रह्मस्वरूप है। इसमें सत्-रज-तम तीनों तत्त्व सन्निहित हैं। लक्ष्मी बीज '**श्री**' है, माया बीज '**ह्रीं**' है, वाणी बीज '**ए**' है और काम बीज '**क्लीं**' है।

ॐ ह्रीं दव्ये नमः—यह माया का मूल मन्त्र है।

ॐ श्रीं देव्यै नमः—ॐ यह लक्ष्मी जी का मूल मन्त्र है।

ॐ क्लीं देव्यै नमः—यह कामनार्थ देवी का मूल मन्त्र है तथा कामाक्षा देवी का भी मूल मन्त्र है।

ॐ ऐं देव्यै नमः—यह वाणी का मूल मन्त्र है। बिना 'ॐ' लगाए '**ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डाये विच्चे**' यह 'मन्त्र-राज' है। इसको नवार्ण मन्त्र भी कहते हैं। यह देवी का द्वादशाक्षर मन्त्र है। **ॐ ह्रीं भुवनेश्वयैं नमः**—यह मूल प्रकृति का मूल मन्त्र है।

सावित्री का गायत्री मन्त्र है—**ॐ भुर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं**

भर्गोदेवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

इसी प्रकार लक्ष्मी जी का गायत्री मन्त्र है—**ॐ भूर्भुवः स्वः महादेव्यै च विद्महे विष्णुपत्न्यै च धीमहि तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात्।**

अब कामाख्या देवी का गायत्री मन्त्र भी देखिए—**ॐ भूर्भूवः स्वः कामाक्ष्यै विद्महे भगवत्यै धीमहि तन्नो गौरी प्रचोदयात्।**

पार्वती का बीज मन्त्र है **'पां'**, भैरवी का बीजमन्त्र **भ्रां**, कालिका का बीजमन्त्र **क्रां**, शारदा का **श्रां**, विन्ध्यवासिनी का **वीं** है।

अब चूँकि **क्लीं** काम (कामना) का बीज मन्त्र होने से काम के बाद का अक्षर **क्षां** कामाख्या देवी का बीज मन्त्र हुआ, जिसके, ५ लाख का जप कल्पतरु सदृश समस्त मनोरथों का पूर्ण करने वाला है।

कामाख्या का मूल मन्त्र—**क्षौं ॐ ॐ वषट् ठः ठः।**

षडाक्षर मन्त्र—**ॐ कामाक्ष्यै नमः।**

देवी के मन्त्रों का जप संख्या में करें जो कि ११,००० से कम न हो।

अब जप का दशांश हवन, हवन का दशांश मार्जन, मार्जन का दशांश तर्पण, तर्पण का दशांश ब्राह्मण भोजनादि कराएँ। फिर यन्त्रों को प्रयोग में लाए। उपरोक्त कामाख्या मन्त्र सर्वकार्य सिद्ध करने वाला है। भुक्ति-मुक्ति देने वाला है। धन एवं ऐश्वर्य सन्तान आदि से पूर्ण करने वाला है। इसमें वशीकारण आकर्षण की शक्ति है, अतः यह एक सफल कवच भी है। इसको धारण करने वालों पर देवी की कृपा सदैव भरपूर बनी रहती है। इससे कोर्ट (कचहरी) में सफलता, परीक्षा में सफलता, जिस कार्य में हाथ लगाए पूर्ण सफलता प्रापत होती है। इस प्रकार भक्त इस जन्म में सम्पूर्ण सुखों को भोगता है। साथ ही उसकी पाँच पीढ़ी भी सुख भोग कर आनन्द लेती है। अन्त में मृत्यु के पश्चात् मोक्ष प्राप्त होता है और भक्त देवी लोक को सहज ही प्राप्त कर लेता है।

सर्वकार्य सिद्धि कामाख्या यन्त्र

यह कामाख्या देवी का अद्भुत यन्त्र है। इसको भोजपत्र पर अष्टगंध

की स्याही से शुक्रवार को बनाकर नवरात्र में बताई गई विधि से ताँबे के ताबीज में धारण करें तो जो आप चाहेंगे वही होगा।
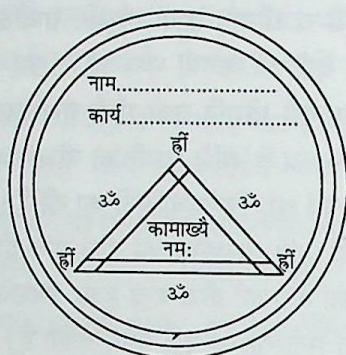
मन्त्र—ॐ ह्री क्लीं कामाक्ष्यै नमः।

इस मन्त्र का ११,००० जप होना अत्युत्तम होता है। फिर तो यन्त्र कहीं, कभी, किसी हालत में रहने पर प्रभावहीन नहीं होता है और इसकी प्रभा सदा ही बनी रहती है। इच्छित कार्य, ऐश्वर्य वृद्धि, एकाएक धन लाभ, व्यापार वृद्धि, नए कार्य का प्रारंभ, नौकरी प्राप्ति, विपत्ति निवारण में यह यन्त्र सहायक है। धूप, अगरबत्ती आदि सदैव दिखाते रहना चाहिए।

स्त्री वशीकरण कामाख्या यन्त्र

इस यन्त्र को भोजपत्र पर हरे रंग से जंगली कबूतर की टाँग की कलम से बनाना चाहिए। हस्त नक्षत्र और शुक्रवार का योग हो तो अच्छा है। पुनः
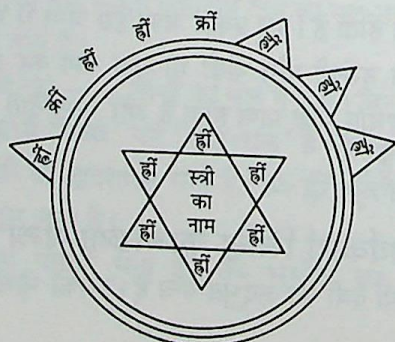
भगवती कामाख्या का पूजन करें तो इसका भी वहाँ रखकर विधिवत् पूजा करें। यह सिद्ध हो जाएगा। भगवती से आज्ञा लेकर इसको उठा लें और मोड़कर रख लें। उस स्त्री का अवसर पाकर दिखाए। देखते ही वह स्त्री कामातुर होकर आपकी ओर निश्चय ही आकर्षित हो जाएगी।

पुरुष वशीकरण कामाख्या यन्त्र

इस यन्त्र को भोजपत्र पर गोरोचन और मुर्गे की टाँग की कलम से गुरुवार पुष्य नक्षत्र में बनाना चाहिए। पति के वशीकरण का यह अद्भूत यन्त्र है। पूजादि कर अपना कार्य करें। सफलता देवी की कृपा से निश्चित है।
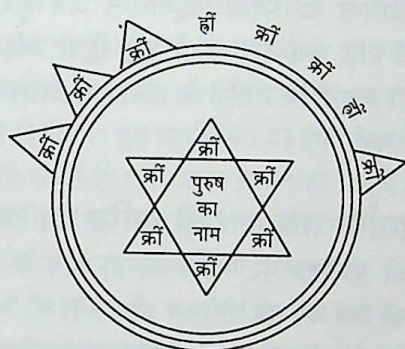
सिने-संसार में प्रवेश हेतु कामाख्या यन्त्र

जो लोग फिल्मी दुनिया में जाना चाहते हैं या अपनी सन्तान को इस

क्षेत्र में भेजने के इच्छुक हैं और सफलता भी देखना चाहते हैं तो उन्हें इन यन्त्र की परीक्षा निम्न प्रकार से अवश्यमेव करनी चाहिए।

नाम—

कार्य—

(जैसे कलाकार, संगीतकार, डॉयरेक्टर, प्रोड्यूसरादि)

इस यन्त्र को भोजपत्र पर कनेर की कलम और गोरोचन की स्याही से बनाए। तथा नवरात्र में देवी की स्थापना कर कामाख्या यन्त्र के नीचे लाल कपड़े पर इसे भी रखे और निम्न मन्त्र का सम्पुट देकर दुर्गासप्तशती का पाठ करें। अथवा कराएँ।

***मन्त्र*— विद्यावन्तं यशस्वन्तं लक्ष्मीवन्तं जनं कुरु।**
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि॥

यन्त्र सिद्ध हो जाएगा फिर चाँदी के ताबीज में धारण कर लें। देवी की अनुकम्पा से इच्छा पूर्ण होगी।

श्री प्राप्ति तथा लक्ष्मी प्राप्ति का यन्त्र

इस यन्त्र को भोजपत्र पर, चाँदी पर या सोने के पत्र पर बनवाना चाहिए। भोजपत्र पर जब बने तब गोरोचन और कनेर की कलम से बने फिर चाँदी या सोने की ताबीज में भरकर किसी एक नवरात्र में पाठ, होम, जपादि
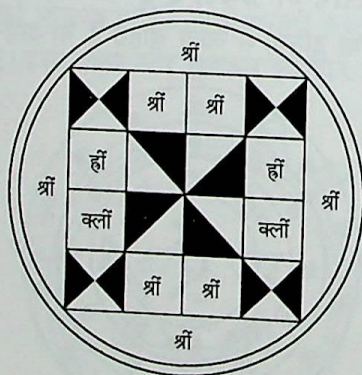
कराएँ जाएँ। पुनः इसको पूजा के स्थान में रखकर प्रतिदिन पूजा कर लक्ष्मी सूक्त का एक पाठ प्रेमपूर्वक करें।

अटूट सम्पत्ति आपके यहाँ रहेगी और लक्ष्मी का वास सदैव आपके घर में रहेगा। घर में सुख शान्ति होगी।

लक्ष्मी सूक्तं

सरसिजनिलये सरोजहस्ते
धवलतरांशुक गन्धमाल्यशोभे।
भगवति हरिवल्लभे मनोज्ञे त्रिभुवन
भूतिकरी प्रसीद मह्यम॥ १॥

हे भगवती हरिवल्लभे लक्ष्मी माता! कमल आपका निवास स्थान है, आप कर में कमल लिए रहती हो। आप अति स्वच्छ धवल वस्त्र, चन्दन और माला धारण किये रहती हो। तुम सबके मन की बातें जानती हो, त्रिभुवन की सम्पदा प्राप्त कराने वाली हो। मेरे ऊपर प्रसन्न हो जाइये।

धनमग्नि धनं वायुर्धनं सूर्यो धनं वसु।
धनमिन्द्रो बृहस्पतिर्वरुणं धनमस्सु मे॥ २॥

अग्नि धन है, वायु धन है, जल धन है, इन्द्र धन है, वृहस्पति धन है, वरुण धन हैं ये सब मुझे प्राप्त होवें। इनके द्वारा मुझे धन मिले।

वैनतेय सोमं पिव सोमं पिवतु वृत्रहा।
सोमं धनस्य सोमिनो मह्यं ददातु सोमिनः॥ ३॥

गरुड़ जी सोम पान कर, वृत्रासुर को मारने वाले इन्द्र भी सोम पान करें। ये सोमपायी मुझे सोमयुक्त धन प्रदान करें।

न क्रोधो न च मात्सर्यं न लोभो ना शुभामतिः।
भवन्ति कृतपुण्यानां भक्तानां सूक्तं जापिनाम्॥ ४॥

जो इस सूक्त का पाठ करने वाले पुण्यात्मा भक्त हैं, उनकी क्रोध, मत्सरता, लोभ तथा पाप कर्मों में मति नहीं होती है।

पद्मानने पद्मऊरू पद्माक्षी पद्मसम्भवे।
तन्मे भजसि पद्माक्षि येन सौख्यं लभाम्यहम्॥ ५॥

हे पद्मानने! हे लक्ष्मी देवि! आपका श्रीमुख पद्म सरिस है, ऊरु पद्म समान तथा नेत्र भी पद्म सदृश हैं आप पद्म से पैदा हुई हैं। अत: हे पद्माक्षि! मेरे ऊपर दया दृष्टि कीजिए जिससे मैं सुख को प्राप्त होऊँ।

विष्णुपत्नीं क्षमां देवीं माधवीं माधवप्रियाम्।
विष्णुप्रियां सखीं देवीं नमाम्यच्युतवल्लभाम॥ ६॥

जो माता लक्ष्मी देवी विष्णु की पत्नी हैं, क्षमा स्वरूपा हैं, माधव भगवान की प्यारी हैं, सबकी सुहृदा हैं, उन अच्युत वल्लभा को मैं बारम्बार नमस्कार करता हूँ।

महालक्ष्मीं च विद्महे विष्णुपत्न्यै च धीमहि।
तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात् (लक्ष्मी गायत्री)॥ ७॥

मैं उन महादेवी को जानता हूँ, उन विष्णु भगवान की पत्नी का ध्यान करता हूँ, वे लक्ष्मी जी हमें धर्म कार्यों में प्रेरित करें, हम पर दया दृष्टि रखें।

पद्मानने पद्मिनि पद्मपत्रे
पद्मप्रिये पद्मदलायताक्षि
विश्वप्रिये विश्वमनोऽनुकूले
त्वत्पादपद्मंमयि सन्निधत्स्व॥ ८॥

हे विश्व की प्यारी लक्ष्मीजी! आप पद्मानना हैं पद्मनि हैं, पद्मवाहिनी हैं, पद्मप्रिया हैं, पद्मदल सदृश आपके नयन हैं। आप विश्व की प्यारी और विश्वम्भर के मनोनुकूल हैं, आपके पाद पद्म मेरे हृदय में सदा विराजमान रहें।

आनन्दः कर्दमः श्रीदश्चिक्लीत इति विश्रुताः।
ऋषयः श्रियः पुत्राश्च मयि श्रीर्देवि देवता॥ ९॥

आनन्द, कर्दम, श्रीद, चिक्लीत ये चार जो प्रसिद्ध पुत्र हैं जो कि इस सूक्त के ऋषि भी हैं और इस सूक्त के मुख्य देवता लक्ष्मी जी के पुत्र ही हैं वे मुझे श्री दें।

ऋणरोगादि दारिद्रयं पापक्षुदपमृत्यवः।
भयशोक मनस्तापा नश्यन्तु मम सर्वदा॥ १०॥

हे महालक्ष्मी! मेरी ऋण, रोगादि बाधाएँ दारिद्रय पाप अपमृत्यु, भय,

शोक एवं समस्त मानसिक ताप आदि सदा के लिए नष्ट हों, जिससे कि मैं सर्वदा सुख भोगूँ।

श्री वर्च स्वमायुष्य मारोग्य मा
विधात् शोभमानं महीयते।
धनं धान्यं पशुं बहुपुत्र लाभम्
शत सम्वत् सरं दीर्घमायुः॥ ११॥

इस सूक्त का पाठ करने से लक्ष्मी, तेजस्विता, आयु, आरोग्य आदि सभी तथा पवित्रता एवं गौरवशाली वस्तुएँ वृद्धि को पाती हैं और धन-धान्य, बहुपुत्र लाभ तथा सौ वर्ष तक की दीर्घ आयु इसके जप मात्र से ही मिल जाया करती हैं।

स्वप्न में प्रश्नोत्तर प्राप्त करने का यन्त्र

सर्वप्रथम स्वर्ण पत्र पर एक यन्त्र बनवा लेना चाहिए। पुनः प्रातः स्नान पूजादि के बाद इस यन्त्र को भोजपत्र पर कुल १०० की संख्या में बनाएँ तथा इस यन्त्र की पूजा करें। इसी प्रकार २१ दिन तक नित्य करें। इक्कीसवें दिन उन सबको आटे में भरकर गोली बनाएँ और एक एक कर नदी, तालाब या किसी जलाशय में 'क्लीं' मन्त्र का उच्चारण करते हुए छोड़ते जाएँ। यन्त्र सिद्ध हो जाएगा। वशीकरण अथवा आकर्षण के लिए पुरुष इसको दाहिने हाथ में बाँधे तथा स्त्री बाएँ हाथ में बाँधे। इस यन्त्र को गले में बाँधे रहने से हाथ के सभी कार्य सिद्ध होते हैं। शत्रु का नाश करना हो तो इस यन्त्र को अग्नि में तपाए परन्तु तपाते समय शत्रु का नाम लेते रहना चाहिए। स्त्री के कमर में बाँधने से पुत्र की प्राप्ति एवं गर्भ की सुरक्षा होती है। इस यन्त्र का रोज पूजन करने से घर में लक्ष्मी की वृद्धि व इष्ट सिद्ध होता है और व्यापार में वृद्धि होती है। रविवार के दिन इस यन्त्र को सिरहाने रखकर और प्रश्न सोचकर सोया जाए तो उस प्रश्न का सही उत्तर स्वप्न में प्राप्त होता है। भागे हुए व्यक्ति के कपड़े में यन्त्र रखकर ऊपर खूंटी में टाँग दिया जाए तो वह आदमी अवश्य ही घर लौट आता है।

यन्त्र—
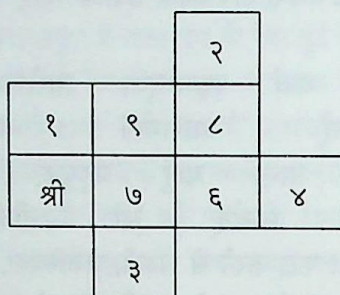
गर्भ धारण करने का यन्त्र

१. 'ॐ नमो आदेश गुरु को गर्भ काया में होवै गुरु की शक्ति मेरी शक्ति भक्ति फुरो मन्त्र ईश्वरोवाचा।'

इस मन्त्र को स्थिर लग्न में, रविवार को पुष्य नक्षत्र में भोजपत्र पर अष्टगंध से लिखकर स्त्री-पुरुष पूजा करें। १,००० का जाप करें। इसका गन्डा बनाकर दोनों अपने हाथ में पहने तो बंध्या स्त्री को भी गर्भ स्थिर हो जाता है।

२. रजोधर्म के पश्चात् स्त्री प्रसंग करने के प्रथम निम्न यन्त्र को भोजपत्र पर अष्टगंध से बनाकर स्त्री की कमर में बाँधे तो अवश्य ही गर्भ धारण हो।

वं वं ह्रीं	पुरुष का नाम	वं वं ह्रीं
वं वं ह्रीं	स्त्री का नाम वौं वौं वौं ह्रीं ह्रीं ह्रीं स्वाहा	वं वं ह्रीं
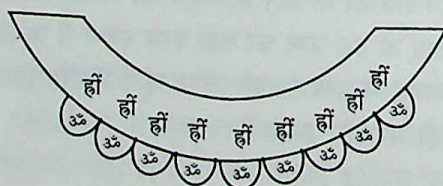
३. रविवार के दिन मूल नक्षत्र में अष्टगन्ध से भोजपत्र पर लिखकर स्त्री के बाएँ हाथ पर बाँधने से बंध्या स्त्री को भी गर्भ धारण करने में समर्थ होती है।

४. निम्न यन्त्र को कुंकुम,गोरोचन से भोजपत्र पर सोमवार के दिन लिखकर स्त्री बाहु या कंठ में धारण करें तो गर्भवती हो और पुत्र उत्पन्न हो।

ॐ	ह्रीं	ॐ
ह्रीं	स्त्री का नाम	ह्रीं
ॐ	ह	ॐ

५. मूल नक्षत्र रविवार को भोजपत्र पर अष्टगन्ध से लिखे और स्त्री के बाएँ हाथ में बाँधे तो स्त्री अवश्य गर्भवती हो।

ॐ	ॐ	ॐ	ॐ
ॐ	ह्रीं	ह्रीं	ॐ
ॐ	ह्रीं	ह्रीं	ॐ
ॐ	ॐ	ॐ	ॐ

६. 'ॐ नमो भगवते महाबलाय पराक्रमाय मनोभिलषित स्तम्भन कुरु कुरु स्वाहा।'

उपरोक्त मन्त्र १०८ बार जपकर दीवाली को सिद्ध करें। फिर एक पाव दूध लेकर १०८ बार पढ़कर दूध को फूंक मारें और उसे पीकर ईश्वर का नाम लें सम्भोग क्रिया करें तो स्त्री अवश्यमेव गर्भ धारण करें।

७. पुष्य नक्षत्र में गुरुवार के दिन भोजपत्र पर इस मन्त्र को लिखकर बाएँ हाथ पर बाँध दे तो गर्भ स्तम्भन अवश्य होए।

ॐ

ॐ

ॐ	ह्रीं	ॐ
ॐ	ह्रीं	ॐ
ॐ	ह्रीं	ॐ

ॐ

ॐ

कामाख्या वशीकरण मन्त्र

१. **'ॐ ये परक्षों भयं भगवती कामाक्ष्या रेक्ष स्वाहा।'** देवी की पूजा कर इस यन्त्र को २० हजार बार जपने से यह सिद्ध हो जाता है।

क. पुष्य नक्षत्र में यर्थर्सगा की जड़, रुद्रवंती की जड़ ले और कुमारी के काते सूत में उपरोक्त मन्त्र पढ़ते हुए पुरुष के दाहिने हाथ में और स्त्री के बाएँ हाथ में बाँधे तो सभी जड़ व चेतन उसके वशीभूत हो जाएँ।

ख. चन्दन व वट की जड़ को जल में पीस लें, फिर उसी के बराबर थोड़ा राख मिलाकर उपरोक्त मन्त्र पढ़ते हुए जिसके मस्तक में तिलक करें, सभी उसके वश में हो जाएँ। उस तिलक वाले को जो भी देखे तो आकर्षित हो।

ग. अंधकार की जड़ को गोरोचन में मिलाकर पानी में पीसकर उपरोक्त मन्त्र पढ़ते हुए तिलक करे, तो तीनों लोक वश में हों। इसमें संशय नहीं है।

२. **'ॐ नमो नमो कामरूपवासिनी सर्वलोक वश्य करी स्वाहा।'** इस मन्त्र से १०८ बार चन्दन की लकड़ी में हवन करें तो यह यन्त्र सिद्ध हो जाता है। फिर उस हवन की भस्म रख लें और जिसके ऊपर यह यन्त्र पढ़ते हुए छोड़े वह वश में हो। जंगल में हिंसक पशु के मिल जाने पर यह प्रयोग अत्युत्तम है।

३. **'ॐ नमः ह्रीं क्लीं सर्वार्थ साधिन्यै कामाक्ष्यै स्वाहा।'** इस मन्त्र से एक हजार कनेर पुष्य का हवन करें तो यह मन्त्र सिद्ध होता है। सिद्ध होने के बाद जिससे भी आँख मिलेगी वह वश में हो जाएगा। कोर्ट, कचहरी,

कार्यालयादि के अधिकारियों से काम लेने के लिए यह सफल प्रयोग है।

४. **'ॐ नमो भगवती मंगलेश्वरीसुखराजिनी सर्वधरं भातंगी कुमारीक लघु लघु वलं कुरु कुरु स्वाहा।'** एक हजार बार जपने से यह मन्त्र सिद्ध होता है। फिर कुमारी के काते सूत में सहदेई का मूल् बाँधकर स्त्री की कमर में बाँधे तो जल्दी से बढ़कर भोगने योग्य हो और वश में हो।

५. **'ॐ बज्रकरण शिवे रुध रुध भवे ममाई अमृत कुरु कुरु स्वाहा।'**—इस मन्त्र को एक सहस्रवार जप कर सिद्ध करें फिर—

क. मुक्ता की जड़ को चन्दन में मिलाकर घिसे और उसको लगाएँ तो जो देखे वह चाहे पुरुष हो या स्त्री वश में हो जाएँ।

ख. मुक्ता की जड़ को सोने में मढ़ाकर पुरुष दाहिने और स्त्री बाएँ हाथ में बाँधे तो शरीर सुखी रहे तथा धनी हो।

स्त्री द्रवीकरण मन्त्र

'ॐ नमो भगवती उगदामरेशुराह द्रवै द्रवै स्त्रीणां पातय स्वाहा।' इस मन्त्र को १०८ बार पढ़कर सिद्ध करें फिर गौदरि को पानी में पीसकर हाथ पर लेप करें तो पुरुष के छूने से स्त्री द्रवित हो जाए।

पति वशीकरण मन्त्र

'ॐ काम मालिनी ठः ठः स्वाहा।' इस मन्त्र को १०८ बार पढ़कर कौडिल्ला की विष्टा व माँस घृत में मिलाकर योनि में लगाए तो पुरुष वश में होए।

स्त्री वशीकरण मन्त्र

'चामुण्डे तरुततु अमुकायकर्षय स्वाहा।' यह मन्त्र आकर्षण का है। इसके इक्कीस रोज एक-एक हजार की संख्या में जपे और प्रति दिन पुरुष स्त्री का नाम लेकर ध्यान करें तो निश्चय ही वह स्त्री आकर्षित होकर वश में हो।

स्तम्भन् मन्त्र-1

१. **'ॐ नमो भगवते विश्वामित्राय नमः सर्वमुखीभ्यां विश्वामित्राज्ञायति आगच्छ स्वाहा।'**

२. इस मन्त्र को पढ़कर ऊँट की हड्डी को भूमि में जिसका नाम लेकर गाड़े तो वह तुरन्त चलता हुआ भी रुक जाए।
३. उपरोक्त मन्त्र को शत्रु का नाम लेकर १०८ बार तर्पण करें तो रिपु की बुद्धि नष्ट हो जाए।

स्तम्भन् मन्त्र-२

'ॐ नमो ब्रह्मवासिनी रक्ष रक्ष ठः ठः स्वाहा।'

१. उक्त मन्त्र को पढ़कर सात बाल उखाड़े, तीन हाथ में बाँधें, दो-दो बाल हाथ में रखें और चोरी करने जाए तो सब स्तम्भित रहें, कोई न बोले।
२. अकोल की खड़, लक्ष्मणा की जड़, सरफोंका की जड़, मयूर की जड़, छिर्हटा की जड़ और कसौंदी की जड़ पुष्यार्क में लेकर घर में रखे तो चोरादि के घुसने का डर न रहे। यदि केतकी की जड़ शिर में रखें तो भी भय न रहे।
३. ताल वृक्ष की जड़ मुँह में और खजूर की जड़ बाएँ पैर में बाँधे तो शस्त्र से न कटे।

स्तम्भन मन्त्र-३

'अहो कुंभकरणमहाराक्षसवेष सांगीव संभूत परसैन्यभंजनं महाभगवान रुद्रोग्याययांती स्वाहा।'

इस मन्त्र को १०८ बार जपकर सिद्ध कर लें फिर पुष्यार्क में शिरस की जड़ ले जल में पीसकर तिलक करें तो गरम लोहे में न जलें।

१. इसी मन्त्र को पढ़कर साँप के काटे हुए रोगी को तिलक करे तो जहर न चढ़े।
२. श्वेतगुंजा की जड़ और असगंध की जड़ उत्तरा-भाद्रपद नक्षत्र में उत्तर मुख कर सिर पर रखें तो अग्नि में न जले।
३. पीततजिया का फल जहर खाए हुए मनुष्य को खिलाए तो उसके शरीर में जहर न फैले।
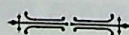
कामाख्या देवी शाबर मन्त्र

तिजारी, इकतरा और आधासीसी झाड़ने का मन्त्र

'ॐ कामर देश कामक्षा देवी, तहाँ बसै इस्माईल जोगी। इस्माईल जोगी के तीन पुत्री, एक रोलै, एक पक्षौले। एक ताप तिजारी इकतरा अथवा आधा सीसी टोरे। उतरै तो उतरो चढ़े तो मारो। ना उतरै तो गं गरुण मोर हंकारी। सबद सांचा, पिण्ड कांचा। फुरो मन्त्र ईश्वरो वाचा।

उपरोक्त मन्त्र का उच्चारण करते हुए मोर पंख से झाड़ना चाहिए।

दाँत दर्द झाड़ने का मन्त्र

'ॐ नमः आदेश कामरु देश कामाक्षा देवी, जहाँ बसै इस्माईल जोगी। इस्माईल योगी ने पाली गाय, नित दिन चरने बन में जाए। बन में सूखा घास पात जो खाय, उसके गोबर ते कीड़ा उपजाय। सात सूत सुतियाला, पुच्छि पुच्छि याला। देह पीला मुख काला। वह अन्न कीड़ा दनत गलाबे मसूढ़ गलावे, डाढ़ मसूढ़ करै पीड़ा तो गुरु गोरखनाथ की दोहाई फिरे।'

इस मन्त्र के प्रयोग के लिए तीन लोहे की कीलें लेकर इन्हें सात बार अभिमन्त्रित करके किसी लकड़ी में ठोंक दें। दाँत, मसूढ़ों और दाढ़ के दर्द में इससे लाभ होता है।

आँख झाड़ने का मन्त्र

'उत्तर दिशि कूल कामाख्या सुन योगी की बाघ इस्माईल योगी की दुइ बेटी, एक के सिर चूल्हा दूसरी काटै माड़ी फूला लोना चमारी

दुहाई शबद सांचा फूली काछा पिण्ड कांचा फुरो मन्त्र ईश्वरो वाचा।'

उपरोक्त मन्त्र का २१ बार उच्चारण करते हुए चाकू से भूमि में सात रेखा खींचे। इस प्रकार सात दिन तक निरन्तर झाड़े तो नेत्र रोग का शमन हो जाता है।

कान दर्द झाड़ने का मन्त्र

'ॐ कनक पर्वत पहाड़ धुंधुआर धार कामरूप कामाख्या घुस लेकर डार डार पात पात झार झार मार मार हुं हुंकार ॐ क्लीं क्रीं स्वाहा।'

उपरोक्त मन्त्र को २१ बार सर्प की बांबी की मिट्टी को अभिमन्त्रित करके कान में लगाए तो हर प्रकार के कान का दर्द शान्त हो जाता है।

कमर दर्द झाड़ने का मन्त्र

'चलता आवे उछलता जाए, भस्म करता डह जाय माँ कामाख्या सिद्धि, गुरु की आन, मन्त्र साँचा पिण्ड कांचा, फुरो मन्त्र ईश्वरो वाचा।'

कुमारी कन्या के शुक्ल पक्ष में १०१ तार के काते हुए सूत को उपरोक्त मन्त्र से ११ बार अभिमन्त्रित करें और कमर में बाँध दें तो कमर का दर्द चला जाता है।

पेट का दर्द शान्त करने का मन्त्र

'ॐ नुन तू सिन्धू नून सिंधुवाय।
नुन मन्त्र पिता महादेव रचाया॥
महेश के आदेश मोही गुरुदेव सिखाया।
गुरु ज्ञान से हम देऊ पीर भगाया॥
आदेश देवी कामरू कामाक्षा माई।
आशा हाड़ि सादी चण्डी की दोहाई॥'

तीन अंगुलियों से सेंधा नमक लें और उसे तीन बार उपरोक्त मन्त्र से अभिमन्त्रित करके खिलाएँ तो उदर पीड़ा की निवृत्ति होती है।

समस्त शरीर की पीड़ा दूर करने का मन्त्र

'ॐ नमो कोतकी ज्वालामुखी काली दे बर, रोग पीड़ा दूर कर, सात समुन्दर पार कर, आदेश कामरू देश कामाख्या माई हाड़ि दासी चंडी की दुहाई।'

उपरोक्त मन्त्र से ११ बार झाड़ने पर समस्त शरीर के दर्द की निवृत्ति होती है।

पेट दर्द दूर करने का दूसरा मन्त्र

'ॐ पेट व्यथा पेट व्यथा तुम हो बलबीर।
तेरे दर्द से पशु मनुष्य नहीं स्थिर॥
पेट पीड़ा लेवें पल में निकार।
दो फेंक सात समुन्दर पार॥
आज्ञा कामरू कामाख्या पाई।
आशा हाड़ि दासी चण्डी दोहाई॥'

बाएँ हाथ से दर्द वाले भाग का स्पर्श करें और सात बार उपरोक्त मन्त्र का उच्चारण करते हुए झाड़ना चाहिए।

पेट के वायुगोला झाड़ने का मन्त्र

'ॐ नमो काली कङ्कालिनी नदी पार बसै इस्माईल योगी लोहे का कछौटा काटि काटि लोहे का गोला काट काट, ओ कामाख्या तो शब्द सांचा फुरो मन्त्र ईश्वरो वाचा।'

रविवार अथवा मंगलवार को चाकू से पृथ्वी पर रेखा काटते हुए उपरोक्त मन्त्र का उच्चारण करते हुए झाड़े तो वायु गोला दर्द में आरोग्य होता है।

पेचिस झाड़ने का मन्त्र

'ॐ नमो कामरू देश कामाख्या देवी तहाँ क्षीर सागर के बीच उपला पानी। अरे रक्त पेचिस ओर कौन ठिकाना। (अमुक) के उदार

खोंचा जो रहा उपजाय। नरसिंह बर से क्षण में चल जाय। (अमुक) अंग नहीं रोग नहीं पीर। गुरु में बाँध दिया जंजीर। आज्ञा हाड़ि दासी चण्डी की।'

अमुक के स्थान पर रोगी का नाम लेकर पीतल के किसी बर्तन में रखे जल को ऊपर के मन्त्र से तीन बार अभिमन्त्रित करके रोगी को पिलाएँ तो हर प्रकार का पेचिस ठीक हो जाता है।

पाचन क्रिया बढ़ाने के लिए

'अगस्त्यं कुंभकरणं च शमिंच बडवानलम्।
भोजनं पचनार्थाय स्मरेद्भीम् च पंचकम्॥'

भोजन करने के बाद तीन बार मन्त्र का उच्चारण करके पेट पर दायाँ हाथ फेरना चाहिए।

बवासीर झाड़ने का मन्त्र

'ॐ नमो आदेश कामरू कामक्षा देवी की,
भीतर बाहर में बोलूँ
सुन देकर मन तूँ
कहे जलावल केहि कारण।
रसहित पर तूं डूमर में विख्यात
रहता ऊपर अमुक के गात
नरसिंह देव तोसे बोले बानी
अब झट से होजा तू पानी
आज्ञा हाड़ि दासी फुरो मन्त्र चण्डी उवाच।'

प्रातः व सायं तीन बार मन्त्र का उच्चारण करके झाड़ना चाहिए। लगातार १५-२० दिन तक इसे करें।

नक्सीर रोकने का मन्त्र

'ॐ नमो गुरु की आज्ञा सार-सार महासागर बाँधू सात बार फिर

बाँधू तीन बार लोहे की सार बाँधू सीर बाँधे हनुमन्त वीर पाके न फूटे तुरत सेखे।'

श्री हनुमान जी का उपासक इसे अधिक सफलता से प्रयोग कर सकता है। वैसे सभी कर सकते हैं। इस मन्त्र को सिद्ध करने के बाद आवश्यकता पड़ने पर कण्डे की भस्म से ७ बार रोगी को झाड़ना चाहिए।

पीलिया (कमल) रोग निवारण के लिए

'ॐ नमा वीर वैताल असराज नारसिंह देव खादी तुषार्दी पीलिया कूं भिदाती कारै झारै पीलिया रहै न कमल रहे न नेक निशान जो कही जाय तो कामरू कामाख्या की आन मेरी भक्ति गुरु की शक्ति फुरो मन्त्र ईश्वरो वाचा।'

एक कांसे की कटोरी या थाली में थोड़ा सा तेल डाल कर उसे रोगी के सिर पर रख दें। मन्त्र का उच्चारण करते हुए कुशा या दूब से उसे चलाते रहें। मन्त्र के प्रभाव का प्रमाण यह होगा कि तेल धीरे-धीरे पीला होता जाएगा। जब तेल पीला हो जाए तो उसे उतार लें। इस प्रक्रिया को तीन दिन लगातार करें। पीलिया रोग ठीक हो जाएगा।

पागल कुत्ते के काटे का मन्त्र

'ॐ कामरू देश कामाख्या देवी, जहाँ बसै इस्माईल योगी। इस्माईल जोगी का झाबरा कुत्ता सोना डाढ़ रूप का कुंडा। बन्दर नीचे रीछ बजावे सीतां बैठी औषध बाँटे कूकुर का विष दूरहिं भागे। शब्द साँचा पिण्ड काँचा फुरो मन्त्र ईश्वरो वाचा।'

इस मन्त्र का उच्चारण करते हुए पागल कुत्ते ने जहाँ पर काटा हो वहाँ पर झाड़े तो विष उतर जाता है और किसी प्रकार का कष्ट नहीं रहता।

पागल कुत्ते के काटे के झाड़ने का दूसरा मन्त्र

'ॐ नमो आदेश गुरु को आदेश कामरू देश का झाबरा कुत्ता हुकन सुषपसुसे शब्द साँचा पिण्ड काँचा फुरो मन्त्र ईश्वरो वाचा।'

इस मन्त्र का उच्चारण करते हुए १०९ बार काटे हुए स्थान पर झाड़े। शनिवार को तीन तोले चावल लेकर जल में भिगो दें और रविवार को उसे पीसकर दो गोली बना लें। उपचार करते समय रोगी का मुख सूर्य की ओर होना चाहिए। मन्त्र का उच्चारण करते हुए चावल की गोली काटे हुए स्थान पर फेरते रहें। विष के उतरने का प्रमाण यह है कि काटने वाले कुत्ते के बाल गोली में से निकलते हैं। इसी तरह से दूसरी गोली को भी काटे हुए स्थान पर फेरें। उसमें से भी बाल निकलेंगे। इसी प्रकार रविवार, सोमवार और मंगलवार ३ दिन तक झाड़ा लगाएँ। रोगी को भी कुछ सावधानियाँ बरतनी चाहिए। उसे एक वर्ष तक जल में अथवा दर्पण में अपना मुख नहीं देखना चाहिए। अचार, खटाई, तेल की बनी अथवा तली वस्तुएँ और उड़द नहीं खानी चाहिए।

मृगी रोग निवृत्ति के लिए मन्त्र

'ॐ हलाहल सरगत मंड़िया पुरिया श्री राम जी फूंके मृगी वाई सूखे सुख होई ॐ ठः ठः स्वाहा।'

इस मन्त्र को भोजपत्र पर अष्टगन्ध से लिखकर गले में बाँध देना चाहिए।

अण्डवृद्धि (हाइड्रोसील) की निवृत्ति के लिए

'ॐ नमो आदेश गुरु को जैसे के लेहु रामचन्द्र कबूत ओसाई करहु राध बिनि कबूत पवन पूत हनुमंत धाउ हर-हर रावन कूट मिरावन श्रावइ अण्ड खेतहि श्रावइ अण्ड-अण्ड विहण्ड श्रावइ वाजं गर्भहिं श्रवइ स्त्री कीलहि श्रवइ शाप हर हर जबरि हर हर हर!!!।'

इसका उपचार दो प्रकार से किया जाता है—

१. अण्डकोष को धीरे-धीरे से मलते रहिए और मन्त्र उच्चारण करते रहना चाहिए।
२. रोगी को अभिमन्त्रित जल पिलाना चाहिए।

ज्वर निवृत्ति के लिए

'दोऊ भाई ज्वर सुरा महावीर नाम।
दिन राति खटि मरे महादेव के ठाम॥
फूर छुदसे छित्तस रूप मुहूर्त्त मों धराय।
नाराज नामूक के घर दुआर फिराय॥
ज्वाला ज्वरपाला ज्वर काला ज्वर विंशाकि।
दाह ज्वर उमा ज्वर भूआ ज्वर शूषकि॥
घोड़ा ज्वर भूता तिजारी और चौथाइया।
सबन को भंग घोटन शिव ने बुझइया॥
यह ज्वर ज्वर सुता तूं कौन तकाव।
शीघ्र (अमुक) अंग छोड़ तुम जाव॥
यदि अंगन में तू भूति भटकाय।
तो महादेव के लागा तूं खाय॥
आदेश कामरू कामाख्या माई।
आदेश हाड़ी दासी चण्डी को दोहाई॥'

हर प्रकार का विषम ज्वर शान्त हो जाता है। रोगी का मुख उत्तर की ओर होना चाहिए। सात बार मन्त्र का उच्चारण करके झाड़े। इस प्रकार तीन दिन तक झाड़ा लगाना चाहिए।

जलने व घाव शीघ्र भरने के लिए

'ॐ नमो आदेश कामरू देश कामाख्या देवी जले तेल रेव तेव महा तोरे। (अमुक) लहर पीर पल में टारे, मन्त्र पढ़े नरसिंह देव कुटिया में बैठि के, श्री रामचन्द्र रहि रहि फूँक के। जाय (अमुक) के, जलन एक पलन में जाय खाय सागर की नीर नान में। आज्ञा हाड़ि दासो फुरो मन्त्र चण्डी वाचा।'

तेली के घरसे लाया हुआ सरसों के तेल से उपरोक्त मन्त्र से तीन बार अभिमन्त्रित करके जले स्थान पर लगाएँ तो जलन से हुए घाव या अन्य घाव शीघ्र ठीक हो जाता है।

नजर टोना झाड़ने का मन्त्र

'ॐ नमो कामरू देश कामाक्षा देवी को आदेश नजर काटौं बजर काटौं मुहूर्त में देकर पाप रक्षा करें जय दुर्गा माय, नरसिंह ओना टोना बहाय (अमुक) रोग सागर पार चल जाय आज्ञा हाड़िदासी चण्डी दुहाई। फुरो मन्त्र ईश्वरो वाचा।'

रोगी को तीन बार उपरोक्त मन्त्र पढ़कर झाड़ना चाहिए।

पशुओं के कीड़ों की निवृत्ति के लिए

'ॐ नमो कीड़ा रे तूं कुण्ड कुंठिला। लाल पूँछ तेरा मुँह काला हम तोसे पूछूँ कहाँ से आया। तोड़ि माँस तू सब काहे खाया। अब जाय तू भस्म होइ जाय। गुरु गोरखनाथा बाबा के लागूँ पायँ। शब्द साँचा पिण्ड काँचा फुरो मन्त्र ईश्वरी वाचा।'

नीम की टहनी के द्वारा उपरोक्त मन्त्र पढ़कर प्रातः और सायं सात बार रोगी पशु को झाड़ना चाहिए। परन्तु सप्ताह में केवल दो बार—रविवार और मंगलवार।

मृतसञ्जीवनी विद्या मन्त्र

'हों ओं सा ओं भू र्भुवः स्वाहा। ॐ त्र्यम्बकं यज्जामहे सुगन्धि पुष्टिवर्धनम् उर्वारुकमिव बन्धानान्मृत्योर्मुक्षीय आमृतात्। हों ओं जूं सः ॐ भू र्भुवः स्वाहा।'

इस मन्त्र की कम से कम एक माला (१०८ मन्त्र) जप से सभी कार्यों में सफलता प्राप्त होती है। अधिक जप से अधिक लाभ की आशा निश्चित है। आरोग्य प्राप्ति इसकी विशेषता है।

शरीर रक्षा के लिए

'ॐ नमो परमात्मने परब्रह्म ममशरीरे पाहि पाहि कुरु कुरु स्वाहा।'

किसी शुभ तिथि को एक हजार मन्त्र जप करके इसे सिद्ध कर लेना चाहिए। फिर १०८ बार मन्त्र नित्य जप करने से शरीर की रक्षा होती है।

कार्य सम्पन्न करने के लिए

'ॐ नमः बज्र का कोठा जिसमें पिण्ड हमार पैठा ईश्वर कुंजी ब्रह्मा का ताला मेरे आठों याम का यती हनुमंत रखवाला।'

१,००० मन्त्र जप से इसे सिद्ध करने के बाद तीन बार मन्त्र उच्चारण करने से ही कार्य सम्पन्न होता है।

मासिक धर्म के कष्ट की निवृत्ति के लिए

'ॐ नमों आदेश देवी मनसा माई बड़ी-बड़ी अदरक पतली पतली पतली रेश बड़े विष के जल फाँसी दे शेष गुरु का वचन न जाय खाली। पिया पंचमुण्ड के बामपद ठेली, विषहरी राई को दुहाई फिरै।'

अदरक का एक छोटा सा टुकड़ा लेकर तीन बार उपरोक्त मन्त्र से अभिमन्त्रित कर रोगिणी को खिलाएँ।

गर्भस्थापना के लिए

'ॐ नमो कामरू कामाक्षा देवी जल बाँधू जल बाई बाँधू बाँधि देउ जल के तीर, पाँचों कूत कलुआ बाँधू, बाँधू हनुमत वीर। सहदेव की धनुआ और अर्जुन का बाण, रावण रण को थाम ले नहीं तो हनुमन्त की आप फुरो मन्त्र ईश्वरो वाचा।'

जिस स्त्री के गर्भ न रहता हो उसे उपरोक्त मन्त्र से अभिमन्त्रित करके एक गण्डा पहनाना चाहिए। इसकी विधि यह है कि किसी कुमारी कन्या से सूत कतवाए और इस सूत को स्त्री के सिर से पैर तक नापे और इसका गण्डा बनाकर अपने इष्टदेव की पूजान अर्चन कर सवा सेर रोट का भोग लगाए।

गर्भ रक्षा मन्त्र

'ॐ थं ठं ठिं ठीं ठें ठैं ठौं ठः ठः ॐ॥'

भोजपत्र पर अनार की कलम से उपरोक्त मन्त्र को लिखकर ताबीज की तरह स्त्री की कमर में बाँध दें। जिस सूत्र से ताबीज बाँधा जाए वह किसी कुमारी कन्या के हाथ का काता हुआ हो। इसके साथ ही अनुराधा

नक्षत्र में और हर्षण योग में सोमवार को १०८ मन्त्र के उच्चारण के साथ स्त्री को झाड़े तो गर्भ गिरने का भय नहीं रहता।

सुखी प्रसव के लिए

'ऐं ह्रं ह्रां ह्रू ह्रं ह्रौ हः ॥'

केसर के भोजपत्र पर इस मन्त्र को श्रद्धापूर्वक लिखें और एक गर्भिणी स्त्री को दिखाकर उसके बिस्तर के नीचे रख दें। इस प्रक्रिया से शिशु का जन्म सुखपूर्वक हो जाएगा।

मृतवत्सा दोष निवृत्ति के लिए

'छोटी मोटी खप्पर तू धरती कितना गुण
जियके बल काट कू जान विज्ञान।
दाहिनी ओर हनुमान रहे बायीं ओर चील।
चहुँ ओर रक्षा करें वीर वानर नील।
नील बानर की भक्ति लखि न जाय।
जेही कृपा सुतवत्सा दोष न जाय।
आदेश कामरू का कामाक्ष्या माई।
आज्ञा हाड़ि दासी चण्डी की दुहाई।'

इस मन्त्र को प्रयोग मछली पकड़ने वाले त्रिकोण यन्त्र के मध्यम से किया जाता है। इस यन्त्र को अभिमन्त्रित करके गर्भिणी स्त्री की कमर में बाँध दें तो बालक कामाख्या देवी की कृपा से दीर्घजीवी होगा।

चोर भय रक्षा मन्त्र

'ॐ करालिनी स्वाहा ॐ कपालिनी स्वाहा।
ह्रौं ह्रीं ह्रीं ह्रीं चोर बंध ठः ठः ठः।'

१०८ मन्त्र जप कर सिद्ध कर लेना चाहिए फिर सात बार मन्त्र का उच्चारण करके अभिमन्त्रित मिट्टी द्वार पर गाड़ दें तो चोर भय नहीं होता।

चोर पहचानने के लिए

'ॐ नमें इन्द्राग्नि बन्ध बन्धय स्वाहा।'

सन्देहस्पद व्यक्तियों का नाम भोजपत्र पर लिखकर उपरोक्त मन्त्र उच्चारण करते हुए अग्नि में एक एक का नाम छोड़ना चाहिए। यदि उन नामों में वास्तविक चोर का नाम होगा तो वह नहीं जलेगा, शेष जल जाएँगे। परन्तु यह प्रक्रिया शनिवार और रविवार को ही उपयुक्त होती है।

एक दूसरे प्रकार से भी यह प्रयोग कर सकते हैं। भोजपत्र पर मन्त्र पढ़ते हुए सभी सन्देहास्पद व्यक्तियों के नाम तथा मन्त्र लिखें और उसे सफेद मुर्गी के गले में बाँध दें। उस मुर्गी को एक टोकरी से ढाँक कर उन व्यक्तियों का हाथ एक-एक करके रखने को कहें। जब चोर का हाथ टोकरी पर पड़ेगा तब वह मुर्गी बोल उठेगी।

सर्वकार्यसिद्धि मन्त्र

'ॐ आं आं स्वाहा।'

इस मन्त्र के सिद्धि के लिए १,००० मन्त्र नित्य जपें। २१ दिन जपने के बाद दशांश हवन करें। साधन काल में साधक को चाहिए कि वह पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करें। पुनः जिस काम को करना हो १०८ बार जप कर काम में हाथ लगाए। कार्य अवश्य सिद्ध होगा।

सर्व कार्य सिद्धि का दूसरा मन्त्र

'ॐ नाम काली कंकाली महाकाली के पूत कंकाली भैरव हुक्मे हाजिर रहै मेरा भेजा तुरत करे रक्षा करे आन बाँधों बान बाँधों चलते फिरते को औसान बाँधू दशा मुखा बाँधू नो नाड़ी बहत्तर कोठा बाँधू फूल में भेजूं फूल में जाय काठे जी पड़े थर थर काँपे हल हल हलै गिर गिर परै उठ उठ भगै बक बक बकै मेरा भेजा सवा घड़ी पहर सवा दिन सवा मास सवा बरस का बावला न करे तो काली माता की शैय्या पर पाँव धरे वचन जो चुकै तो समुद्र सूखे बाचा छोड़ कुबावा करै तो धोबी की नाद चमार के कुण्डे में पैर मेरा भेजा न करै तो रुद्र के नेत्र से अग्नि

ज्वाला कढ़ै सिर की जटा टूटि भूमि पर गिरे माता पार्वती के चीर पै चोट पड़े बिना हुक्त नहीं मारना हो, काली के पुत्र कङ्काल भैरव फुरो मन्त्र ईश्वरो वाचा।'

यह भैरव के सिद्धि का मन्त्र भी है। इसे सूर्य ग्रहण की रात्रि में सिद्ध करना चाहिए। साधना के लिए त्रिकोण चौका लगाना चाहिए और घी का चौमुखा होना चाहिए। दक्षिण दिशा की ओर मुख करके बैठना चाहिए। पूजन में लड्डू, एक जोड़ा लौंग, सिन्दूर, लाल कनेर के फूल अवश्य रखना चाहिए। उपरोक्त मन्त्र का एक सहस्र जप करके दशांश हवन करने से मन्त्र सिद्ध होता है। यदि भैरव साक्षात् उपस्थित हो जाएँ तो साधक को भयभीत नहीं होना चाहिए वरन् सम्मान के रूप में धूप-दीप से उनका पूजन करें और गले में फूलों की माला पहना दें और नैवेद्य के रूप में लड्डू प्रस्तुत करें। फिर साधक उनसे जिस कार्य के लिए कहेगा, उसकी पूर्ति होगी।

पुष्टि कर्म मन्त्र

'ॐ परब्रह्म परमात्मने नमः। उत्पत्ति स्थित प्रलय काराय ब्रह्म हरिहराय त्रिगुणात्मने सर्व कौतुक निदर्शय दर्शय दत्तात्रायाय नमः। मन्त्र तन्त्र सिद्धि कुरु कुरु स्वाहा।'

२१ दिन में विधि विधान पूर्वक १ लाख मन्त्र जपने से इसकी सिद्धि मानी जाती है। इसे दीपावली, होली अथवा किसी अन्य शुभपर्व पर सिद्ध किया जा सकता है। सिद्ध करने के पश्चात् किसी भी कार्य में सफलता प्राप्त करने के लिए इस मन्त्र को १०८ बार जपना होता है।

धन प्राप्ति के लिए

'ॐ लक्ष्मीं वं, श्री कमला धारं स्वाहा।'

इस मन्त्र की सिद्धि के लिए १ लाख २० हजार बार जपने तथा दशांश हवन करने से होती है। इसका शुभारम्भ वैशाख मास में स्वामी नक्षत्र में करें तो शुभ होगा।

धन प्राप्ति का दूसरा मन्त्र

'ॐ नमो ह्रीं श्रीं क्रीं श्रीं क्लीं श्रीं लक्ष्मी मम गृहे धनं चिन्ता दूर करोति स्वाहा।'

प्रातः स्नानादि से निवृत्ति होकर १ माला (१०८ मन्त्र) का नित्य जप करें।

धन प्राप्ति का तीसरा मन्त्र

'ॐ नमों पद्मावती पद्मनतने लक्ष्मीदायिनी बाँछा भूत प्रेत विंध्यवासिनी सर्व शत्रुसंहारिणी दुर्जन मोहिनी ऋद्धि सिद्धि वृद्धि कुरु कुरु स्वाहा। ॐ नमः क्लीं श्रीं पद्मावत्यै नमः।

इस मन्त्र को सिद्ध करने के लिए साधना के समय लाल वस्त्रों का प्रयोग करना होता है और पूजा में प्रयुक्त होने वाली सभी पूजन सामग्री को रक्तवर्ण में ही रखना होता है। इसकी साधना अर्द्धरात्रि के समय करनी पड़ती है। इसका शुभारंभ शनिवार या रविवार से ठीक रहता है। १०८ बार नित्य प्रति जपें। छार, छबीला, गोरोचन, कर्पूर, गुग्गुल और कचरी को मिलाकर मटर के बराबर छोटी-छोटी गोलियाँ बनाए। जप के बाद नित्य प्रति १०८ आहुतियों का हवन करना चाहिए। इस प्रयोग को २ दिन तक लगातार करना चाहिए तभी लक्ष्मी की कृपा होती है।

नौकरी तथा व्यापार पाने के लिए

'ॐ नमः भगवती पद्मावती सर्वजन मोहिनी सर्व कार्य वरदायिनी मम विकट संकट हारिणी मम मनोरथ पूरणी मम शोक विनासिनी ॐ नमः पद्मावत्यै नमः।'

इस मन्त्र की सिद्धि करने के बाद मन्त्र का प्रयोग किया जाए जो नौकरी अथवा व्यापार की व्यवस्था देवी की कृपा से हो जाती है। इसमें आने वाले विघ्न दूर जो जाते हैं। धूप दीप आदि से पूजन करे प्रातः दोपहर और सायंकाल में १-१ माला का निरन्तर १ मास तक जप कर दशांश हवन करें। साधना स्थल के सामने (१) लिखकर रख लें एकाग्रतापूर्वक की गई साधना सफल होती है।

व्यापार वृद्धि के लिए

'भँवरवीर तू चेला मेरा खोल दूकान कहा कर मेरा उठै जो डंडी बिकै जो माल भँवरवीर नहिं जाय।'

बिक्री बढ़ाने के लिए यह अद्भुत मन्त्र है। इसका प्रयोग केवल रविवार के दिन ही अच्छा माना जाता है और तीन रविवार तक लगातार करने से सफलता मिलती है। प्रयोग इस प्रकार है कि काली उड़द को २१ बार अभिमन्त्रित कर व्यापार स्थल पर डालें।

व्यापार वृद्धि के लिए दूसरा प्रयोग

'ॐ श्रीं श्रीं श्रीं परमां सिद्धौं श्रीं श्रीं ॐ।'

इसकी साधना सायंकाल को श्रेष्ठ मानी जाती है। प्रदोष व्रत करके १,००० मन्त्रों का जप करें। पश्चात् अष्टगन्ध और नागोरी के फूलों से १०८ मन्त्र की अग्नि में आहुतियाँ दें। इस प्रकार सात प्रदोष करने से व्यापार में वृद्धि होती है।

सम्भाविता हानि से सुरक्षा के लिए

'श्री शुक्ले महाशुक्ले कमल दल निवासिन्यै महालक्ष्म्यै नमो नमः लक्ष्मी माई सत्य की सवाई आवो माई करो भलाई ना करो तो सात समुन्दर की दुहाई ऋद्धि सिद्धि खावोगी तो नौनाथ चौरासी की दुहाई।'

व्यापार का दैनिक कार्य आरम्भ करने से पूर्व उपरोक्त मन्त्र का १०८ बार जप करें तो हानि से सुरक्षा होती है और वृद्धि का लाभ भी प्राप्त होता है।

गाय-भैंस के दूध बढ़ाने का मन्त्र

'ॐ हनीं करालिनि पुरुष सुखं मुजं ठं ठः।'

यह वीरभप्रोड्डीश तन्त्र का पंच दशाक्षर मन्त्र है। इसके विधिवत् प्रयोग से गाय और भैंस के दूध में वृद्धि होती है। गाय भैंस को जो भी घास-भूसादि खिलाना हो उसे उपरोक्त मन्त्र से १०८ बार अभिमन्त्रित करके उन्हें देने से दूध की मात्रा बढ़ जाती है।

बुद्धि विकास के लिए

'ॐ नमो कामाक्षा, त्रिशुला, रब, हस्त, पाधा पाती, गरुण सर्व लखी तु प्रीतये, समांगन तत्त्व चिन्तामणि नरसिंह चल, चल क्षोनकोटीकात्थानी तालव प्रसाद के ॐ ह्रों ह्रीं क्रूं त्रिभवन चालिया, चाहिया स्वाहा।'

इस साधना का शुभारम्भ शुक्ल पक्ष रोहिणी नक्षत्र के दिन से करना चाहिए। अगले रोहिणी नक्षेत्र के दिन तक मन्त्र जप करते रहना चाहिए। प्रात: स्नानादि से निवृत्ति होकर ४१ तुलसी के पत्तों को उपरोक्त मन्त्र से १०८ बार अभिमन्त्रित करके खा लिया करें। इस साधना से बुद्धि का तीव्र विकास होता है।

बुद्धि विकास का दूसरा विधान

'ॐ सच्चिदा एकी ब्रह्म ह्रीं सच्चिदी क्रीं ब्रह्म।'

इस मन्त्र के १,००,००० के जप से वुद्धि से तीव्र होती और विद्या की प्राप्ति होती है।

बुद्धि तीव्र होने का तीसरा मन्त्र

'ॐ क्रीं क्रीं क्रीं।'

इस मन्त्र का अनुष्ठान १,००,००० जप का है। मन्त्र की सिद्धि होने पर बुद्धि तीव्र होती है और विद्या की उपलब्धि होती है।

विद्या प्राप्ति के लिए

'ॐ नम: श्रीं श्रीं अहं वद वद वाग्वादिनी भगवती सरस्वत्यै नम: स्वाहा विद्यां देहि मम: ह्रीं सरस्वती स्वाहा।

सूर्य या चन्द्र ग्रहण के दिन १४४ मन्त्र के जप से साधना का शुभारम्भ करना चाहिए। इसे २१ दिनों तक लगातार १०८ मन्त्र जप करके साधना में लगे रहें। इससे विद्या की प्राप्ति होती है।

वाक् सिद्धि मन्त्र

'ॐ ह्रीं कामिनी स्वाहा।'

इससे वाक् शक्ति मिलती है। यहाँ तक कि गूंगे को श्री कंठ मिलता है। इसकी सिद्धि तेरह हजार मन्त्र नित्य प्रति जपने से तीन मास में प्राप्त होती है। अनुष्ठान के दिनों में सात्विक आहार करना चाहिए। सत्य और अहिंसा का पालन करना चाहिए और छल-कपट से दूर रहना चाहिए। वकीलों के लिए यह मन्त्र परमोपयोगी है।

उन्नति के लिए

'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीं श्रीं श्रीं श्रीं श्रीं श्रीं श्रीं लक्ष्मी मम् गृहे धन पूरे, चिन्ता दूरे दूरे स्वाहो।'

व्यापार, नौकरी या किसी भी क्षेत्र में निरन्तर उन्नति प्राप्त करने के लिए इस मन्त्र का नित्य १०८ बार जप किया करें।

विपत्ति निवारण के लिए

**'हुक्म शेख फरीद कमरिया निशि अँधियरिया।
जाग पानी पथरिया तीनों से तोही बचइया॥'**

सफर में जब कभी ऐसा अवसर आए कि जोरों से वर्षा हो रही हो आंधी और तूफान आ रहा हो और ओले गिर रहे हो, इस विकट परिस्थिति में पास में कोई सुरक्षा का स्थान दृष्टि गोचर न हो रहा हो तो इस घोर विपत्ति से बचने के लिए इस मन्त्र का तीन बार उच्चारण करते हुए ताली बजाएँ तो इस घोर विपत्ति से सुरक्षा होती है।

विघ्न नाश के लिए

'ॐ नमः शान्ते प्रशांते ॐ ह्रीं ह्रौं सर्वक्रोध प्रशमनी स्वाहा।'

एक हजार मन्त्र जप करके इसे सिद्ध करें। फिर नित्य प्रति २१ बार मन्त्र का उच्चारण करके मुख का मार्जन करें तो परिवार के सभी सदस्यों की हर प्रकार के विघ्नों से सुरक्षा रहती है। सायंकाल पीपल की जड़ में शर्बत

छोड़ें और श्रद्धापूर्वक धूप, दीप जलाएँ।

किसी भी कष्ट से छुटकारा पाने के लिए

'ॐ रां रां रां रां रां रां रां रां रां कष्ट स्वाहा।'

इसका १०८ बार पाठ करना चाहिए।

सुखी प्रवास के लिए

'गच्छ गौतम शीघ्रं त्वं ग्रामेषु नगरेषु च।
अशनं वसनं चैव ताम्बूलं तत्र कल्पय॥'

प्रयोग के पहले इस सिद्ध कर लेना चाहिए। सिद्धि का समय सूर्य-चन्द्र ग्रहण और होली दीपावली की रात्रि माना गया है। विधि पूर्वक १०८ मन्त्र जप से यह सिद्ध हो जाता है। प्रवास के समय चार कंकड़ मन्त्र से अभिमन्त्रित कर चारों दिशाओं में फेंक देना चाहिए। इससे प्रवास सुखमय रहता है।

अग्नि शान्त करने का मन्त्र

'ॐ नमोऽग्निरूपाय ह्रीं नमः।'

इस मन्त्र को १०८ बार उच्चारण करके ग्रहण, होली या दीपावली पर सिद्ध कर लेना चाहिए। आवश्यकता पड़ने पर किसी अग्निकाण्ड में सात अंजुलि जल छोड़ने से अग्नि शान्त हो जाएगी।

अकस्मात् अग्नि में जलने के भय से सुरक्षित रहने के लिए उपरोक्त मन्त्र का उच्चारण करके रविवार को श्वेत कनेर की जड़ को दाई भुजा में बाँध कर रखना चाहिए।

अग्नि और जल के भय से रक्षा के लिए

'शेख फरीद की कामरी निशि अस अन्धियारी तीनों को टालिए अनल ओला जल विष।'

उपरोक्त मन्त्र पढ़कर ताली बजाएँ और अपने चारों ओर सुरक्षा की

भावना करें।

अग्नि बन्धन मन्त्र

'अज्ञान बाँधो विज्ञान बाँधो छोपरा घाट आठ कोटि वैसंदर बाँधो अस्त हमारा भाई आन हि देखें झझके मोहि देखे बुझाई हनुवन्त बाँधो पानी होइ जाइ अग्नि भवेत् के असमत्ती हाथी होइ वैसंदर बाँधो नारायण साखि मोरी गुरु की शक्ति फुरो मन्त्र ईश्वरो वाचा।'

इस मन्त्र को सूर्य ग्रहण में १,००८ बार जप कर सिद्ध कर लें। फिर आवश्यकता पड़ने पर १०८ बार उच्चारण कर ८ कंकड़ी अग्नि की ओर फेंक देने से अग्नि बन्धन होता है।

दृष्टिबन्धन मन्त्र

'ॐ नमो बटुमी चामुण्डी ठः ठः ठः स्वाहा।'

कुमारी कन्या से सूत कताकर पद्मनाल पर सूत लपेटे और उपरोक्त मन्त्र का १०८ बार जप करें। उसको घुमाकर दिखाए जो देखेगा उसका दृष्टिबन्धन हो जाएगा।

योगिनी दशा दोष निवारण मन्त्र

मंगला—'ॐ ह्रीं मंगले मंगलायै स्वाहा।'

जप संख्या—१,०००

पिंगला—'ॐ ग्लौं पिंगले वैरिकारिणी प्रसीद फट् स्वाहा।'

जप संख्या—२,०००

धान्या—'ॐ श्री धनदे धन्ये स्वाहा।'

जप संख्या—३,०००

भ्रामरी—'ॐ भ्रामरी जगताधीश्वरी भ्रामरी क्लीं स्वाहा।'

जप संख्या—४,०००

भद्रिका—'ॐ भद्रिके भ्रदं देहि अभद्रनाशाय स्वाहा।'

जप संख्या—५,०००

उल्का—'ॐ उल्के मम रोगं जम्भय स्वाहा।'

जप संख्या—६,०००

सिद्धा—'ॐ ह्रीं सिद्धे मे सर्वमानं संसाधय स्वाहा।'

जप संख्या—७,०००

संकटा—'ॐ ह्रीं सङ्कटे मम रोगं नाशय स्वाहा।'

जप संख्या—८,००० या अधिक से अधिक जितना हो सके। जप के पश्चात् दशांश हवन करना चाहिए।

सर्व ग्रह दोष, भूत-प्रेत महापातक दारिद्रादि नाशक मन्त्र

'ॐ नमः भवे भास्कराय अस्माकं अमुक सर्व ग्रहणं पीड़ा नाशनं कुरु कुरु स्वाहा।'

इस मन्त्र का प्रयोग करने से पहले इसकी सिद्धि अवश्य कर लेना चाहिए। सिद्धि के लिए १०८ मन्त्र का जप पर्याप्त माना जाता है। इस मन्त्र से १०८ आहुति देनी चाहिए। हवन सन्ध्या समय होना चाहिए। सामिग्री में—जौ, तिल, सफेद, सरसों, गेहूँ, चावल, मूंग, चना, कुश, शम्मी, आम्र, डुम्बरक् पत्ता और अशोक, धतूरा, दूर्वा, आक व ओंगा की जड़ लेकर इनमें दूध, धी, मधु और गोमूत्र भी मिला लेना चाहिए। इसकी सिद्धि से सभी प्रकार के ग्रह, पीड़ा, भूत-प्रेतोपद्रव एवं महापातक दोष महादारिद्रादिक नाश होकर सुख और शान्ति मिलता है।

ग्रह बाधा निवारण मन्त्र

'ॐ शं शं शिं शीं शुं शूं शें शैं शों शौं शं शः स्वः सः स्वाहा।'

बारह अंगुली की पलाश की लकड़ी की एक अच्छी सी कील बना लें ओर १,००० मन्त्र का जाप करके से अभिमन्त्रित करें। जिस घर में यह कील गाड़ा जाएगा वह घर भूत प्रेत प्रेतकादि दोषों से मुक्त रहेगा।

ग्राम विघ्न निवारण तन्त्र

रविवार या मंगलवार को बन्दर का हाड़ लाकर धूप दीप से पूजा करें,

गाँव के बाहर गाड़ दें और नित्य पूजा करें तो ग्राम शुभ हो जाएगा और गाँव का विघ्न दूर हो जाएगा।

भूत प्रेत निवारण मन्त्र

'ॐ नमो मसाणं बरसिने प्रेतनां कुरु कुरु स्वाहा।'

सिद्धि प्राप्त करने के लिए इसका १,००० जप करना चाहिए। इसके बाद भूतग्रस्त रोगी को सात बार झाड़े।

भूत भगाने का मन्त्र

**'भूत सबका भाई काहे आनन्द अपार।
जिसको गुमान से अमुक को भार॥
हमरे सांई को पऊँ करो सलाम हजात।
जाते होय भूप आवेश किनार॥
जितनी मेथी छोड़ बड़े और आनि से अंत।
तस से धूम्र गन्ध ते, पल में भूत भगंत॥
(अमुक) अंग भूत नहीं यह मेथी के लाय।
उठि के आगे रत क्षण में जाय पराय॥
आदेश देवी कामरू कामक्षा माई।
आज्ञा हाड़ि दासि चण्डी की दोहाई॥'**

थोड़ी सी मेथी लेकर रोगी के देह में सात बार मन्त्र पढ़ते हुए छुआ कर अग्नि में देकर मुँह के सामने धुवाँ दें।

सरसों मन्त्र

**'ऐ सरसों पीला सफेद और काला।
तू चलना फिरना भाई सा चला॥
तोहर वाण से गगन फट जाय।
ईश्वर महादेव के जटा कटाय॥
डाकिनी योगिनी व भूतपिशाच।**

काला पीला श्वेत सूसांच॥
सब मार काट धरूं खेत खरिहान।
तेरे नजर से भागे भूत लै जान॥
आदेश देवी कामरू कामक्षा माई।
आज्ञा हाँडी दासी चण्डी दोहाइ॥'

इस मन्त्र से थोड़ा सरसों को तीन बार पढ़कर रोगी को वही सरसों मारे और थोड़ा अग्नि में डाल धूनी दें।

हल्दी वाण मन्त्र

'हल्दी गौरी बाण की लिया हाथ उठाय।
हल्दी वाण से नील गिरी पहाड़ थहराय॥
यह सब बोलत वीर हनुमान।
डाइन योगिनी भूत प्रेत मुंड काटौतान॥
आज्ञा कमारू कामाक्षा माई।
आज्ञा हाड़ि की चण्डी की दोहाई॥'

७ हल्दी की गांठ लेकर उसे ३ बार अभिमन्त्रित करें फिर ३ बार रोगी के सिर पैर तक फिरा कर अग्नि में छोड़ दें। उस हल्दी का धुआँ रोगी के मुख में लगाना चाहिए। धुआँ लगने पर भूत-प्रेत उतर कर सामने आ जाएगा और बात करेगा। फिर उसको उचित पूजादि देकर यथा उचित स्थान पर भेज देना चाहिए या स्थापित कर देना चाहिए। इस मन्त्र से भूत-प्रेत वश में होकर इच्छित कार्य भी करते हैं।

जादू टोने के प्रभाव को दूर करने के लिए

'ॐ नमो आदेश कामरू कामाक्षा देवी लीनो सलोना योगिनी बाँधे टोना आवो राखि में जादू कौन देश फिर अफुल फुलवारी ज्यों ज्यों आवे बस त्यों त्यों (अमुक) हमारे पास मोहिनी देवी की दुहाई।'

इस मन्त्र को होली या दीपावली पर २,१०० जप कर सिद्ध कर लें फिर ७ बार पढ़कर प्रभावित व्यक्ति या जानवर या वस्तु को झाड़े तो जादू

टोने का प्रभाव दूर हो जाता है।

भण्डार भरपूर रहे

'ॐ नमः कामरूपदेश कामाक्षा देवी। ॐ शंङ्कशादनी में बराती धरणी ऊधर इन चण्डी सवा प्रहर होयकर प्रक्षालि मुख प्रक्षालि तुमरो जो ध्यातो साई फल पाई पग भुल बन्ट बन्ट मोरे सम बाँधो चार लड्डू के सिर सोहे सिन्दूर ऋद्धि सिद्धि दो पिया नन्द के पूत सोये को उठाऊँ बैठे को देह पठाय उठा सा लै आवै यदि न जाय लावै तो लाजै गजानन गौरी माय। ईश्वर पार्वती सब जाने घर बैठी ऋद्धि सिद्धि आने माहेश्वरी मारी चढ़का धाव ऋद्धि सिद्धि दो गणनायक राऊ।'

भण्डारे में से भोजन वितरित करने के पहले उसमें से ५ लड्डू निकाल कर उन पर सिन्दूर लगाएँ और घर की स्वामिनि (स्त्री) गणपति का पूजन करें। एक कलश में २ लड्डू रख कर कुएँ के जल से भरें व मन्त्र का उच्चारण करते हुए शेष तीन लड्डू श्रद्धापूर्वक कुएँ में छोड़ वरुण देवता से निवेदन करें। भण्डार में से एक व्यक्ति के लिए भोजन निकाल अलग रखें। एक तपस्वी या ब्राह्मण को मन्त्र जपने के लिए बैठा दें। जब तक भण्डारा चलता रहे तब तक मन्त्र भी चलता रहे। इस प्रकार भण्डारे में कभी कमी न आयेगी।

कामाख्या पुष्प मोहिनी मन्त्र

'ॐ नमो कामरू कामाख्या देवी जहाँ बसे इस्माईल योगी। योगी ने लगाई फुलवारी फूल लोढ़ै लोना चमारी एक फूल हँसे दूजे फूल मुसकियाय तीजे फूल में छोटे बड़े नरसिंह आय जो सूँघे इस फूश की बाँस वह चल आवे हमारे पास दुश्मन को जाई लिया फिरै मेरी भक्ति गुरु की शक्ति फुरो फुरो मन्त्र ईश्वरो वाचा।'

इस मन्त्र से सुगंधित फूल को अभिमन्त्रित करके जिस व्यक्ति को भी सुंघाया जाए वह मोहित हो जाएगा। सिद्धि की साधना रविवार को आरम्भ करके निरन्तर २१ दिन तक चलनी चाहिए और नित्य प्रति १०८ मन्त्रों का जाप करके, पूजन सामग्री से भली प्रकार पूजन करके सुगन्धित पुष्पों को घृत

में बोर करके नित्य १०८ आहुति दें।

कामाख्या लौंग मोहिनी मन्त्र

'ॐ नमः आदेश गुरु का लौंग लौंग तू मेरा भाई तुम्हारी शक्ति चलाई पहली लौं राती बाती दूजा लौंग जीवन माती तीजो लौंग अंग में राखे चौथी लौंग दुईकर जोड़े चारों लौंग जो मेरी खास (अमुक) झट मेरे पास आय आदेश देवी कामरू कामाख्या की दुहाई फिरै।'

ऊपर के मन्त्र से ४ लौगों को ७ बार अभिमन्त्रित करके जिसको भी खिलाया जाएगा वह मोहित हो जाएगा। सिद्धि की साधना रविवार से आरम्भ करें और दीपक जलाकर २१ दिन तक नित्य प्रति २१ मन्त्रों का जाप करें।

कामाख्या मिठाई मोहिनी मन्त्र

'ॐ नमो कामाख्या देवी को आदेश जल मोहू थल मोहू जंगल की हिरणी मोहूँ बाट चलन्ता बटोही मोहूँ दरबार बैठा राजा मोहूँ पलंग रानी मोह मोहनी मेरा नाम मोहनी जगत् संसार तारा तरी ला तोतला तीनों बसे कपाल सिर चढ़े मातु के दुश्मन पामाल करूँ गात के मोहिनी देवी की दोहाई फिरै।'

सर्वप्रथम २१ दिन तक २,१०० मन्त्रों का जाप करके गुग्गुल से हवन कर सिद्ध कर लेना चाहिए। सिद्धि का प्रारम्भ शुक्रवार से करें। फिर आवश्यकता पड़ने पर मिठाई को २१ बार अभिमन्त्रित कर जिसको भी खिलाया जाएगा वह अवश्य ही मोहित हो जाएगा।

शत्रु को दुख देने और मारने का मन्त्र

'ॐ नमः कामाक्ष्यै अमुकस्य हन हन स्वाहा।'

सोमवार या मंगलवार को श्मशान की धूल लेकर राई और आक की लकड़ी लेकर बीस बार मन्त्र पढ़कर हवन करें तो शत्रु बहुत ही कष्ट पाएँ और बाद में मृत्यु को प्राप्त हो।

पान वशीकरण मन्त्र

**'ॐ नमो कामरू देश कामाख्या देवी
जहाँ बसे इस्माईल योगी
योगी ने दिया पान का बीड़ा
पहला बीड़ा आती जाती
दूजा बीड़ा दिखावे छाती
तीजा बीड़ा अंग लपटाई
अमुकी खाय चल आई
दुहाई श्री गुरु गोरखनाथ की।'**

दिवाली के दिन १४४ मन्त्र पढ़कर सिद्ध करें। फिर तीन पान की बीड़े लेकर सात बार मन्त्र पढ़कर अभिमन्त्रित करके खिलाए। खाने वाली स्त्री वशीभूत हो जाएगी। इस प्रयोग को स्त्री भी पुरुष के लिए कर सकती है। हाँ, उसको चार बीड़ा पान ७ बार मन्त्र पढ़कर खिलाना चाहिए।

कामाक्षा देवी का मन्त्र

'ॐ क्लीं नमः' सर्वप्रथम षटकर्मानुसार १०,००० मन्त्र ७ दिन तक जप कर सिद्ध करें। फिर १०८ मन्त्र प्रतिदिन जपें। साधना शुक्रवार से प्रारम्भ करना चाहिए। इससे धनधान्य की वृद्धि, सुखभोग, शान्ति तथा सम्मान मिलता है।

पानी में चलने का मन्त्र-तन्त्र

'ॐ नमो भगवते रुद्राय ठः ठः ठः ठः ठः ठः।'

शिवजी की पूजा करते हुए चार दिन व्रत करें और उपरोक्त मन्त्र का १०,००० मन्त्र सिद्ध होगा। अब ऊपर के मन्त्र पढ़ मगर, शिव और नौगहा इन जीवों की लाश लेकर और साँप का फण भी लें। फिर सरसों के तेल में मध्यम आँच में पकाएँ। उस तेल को सिर में नाक में, कान में और पूरे शरीर में लगाने से पानी में चलने लगेगा। पुनः लेटकर साँपकी तरह भी पानी में जाया जा सकता है।

सर्प-भय निवारण मन्त्र

'आस्तिकस्य मुनिर्माता भगिनी वासुमिस्तवा।
जगत् मारूमुनिपत्नी मनसा देवी नमोस्तुते॥'

इस मन्त्र को तीन बार पढ़कर ताली बजाने से स्वप्न में भी सर्प भय नहीं होता।

सर्प विष बन्धन मन्त्र

ॐ नमो मन्सा देवी का आदेश।
धोबियनियां पाट पर गुदरिया जो धोय रही॥
पुरइनि के पात में सर्प विष उपलाय रही।
हे गुदरी तुम गुरु मेरी हम तुम्हारी चेला॥
अमुक अंग के काली विष बाधूँ तेरा आंचल।
विष विष अरे विष खपरा विष गोखुरा॥
हम गुदरिया में छिपाय रखूं तोहरा।
गरुड़ तुम जे रहत ऊँचे पहार॥
तनिक ताको ऊपर से नीचे एक बार।
आवो रे विष तोरे बाधूँ मनसा के दार॥
दुई मास रह तू गुदरिया में लुकान।
आदेश हाड़ि दासी चण्डी की दोहाई॥

जब किसी को सर्प काटे तो तुरन्त यह मन्त्र पढ़ अपने कपड़े में एक गाँठ बाँधे तो विष बंधें हुए अंग के ऊपर नहीं चढ़ सकता।

घर बैठे सर्प विष शान्ति करण मन्त्र

नहान्हाहियाते काई खाटौंखांधांझियो मरिझाय अना खांचा में जल प्याऊँ खाधो उतरि जाय॥

इस मन्त्र से जल को तीन बार पढ़कर जो मनुष्य सर्प दंशन का सम्वाद लाए। उसे पिलाए तो सर्प विष शान्त होए।

सर्प विष बन्धन अन्य मन्त्र

शुदरी धोबिनियाँ कपड़ा फीचै केबड़तल्ला घाट में पद्य पात में विच उपलाय आँइ उसके पाट में॥

धोबिन तुम गुरु हम तोहार चेला।
अमुक अंग के विष बाधूँ तेरी आंचल॥
आवो रे विष हमारे कपड़े में आय।
बाँधु विष बाँधते घटि जाय॥
आदेश देवी मनसा माई, दुहाई विषहरि राई॥

इस मन्त्र को तीन बार पढ़कर अपने चादर के खूंट में एक गाँठ लगाए तो विष बहुत कम हो जाता है फिर झाड़ते समय मन्त्र का प्रयोग करें।

थप्पड़ मार मन्त्र

घर पक घसनि घसनि सार।
ऊपर घसनि विष नीचे जाय॥
काहे विष तू इतना रिसाय।
कुछ तो तोर होय पानी॥
हमरे थप्पड़ तोड़ नहि ठेकान।
आज्ञा देवी मनसा माई॥
आज्ञा विषहरि माई दुहाई।
जो मनुष्य सर्प झारने को बुलाने आए उसे एक थप्पड़॥

यह मन्त्र पढ़कर मारे तो रोगी के शरीर का विष कम होकर शान्ति मिलें। फिर झाड़न मन्त्र से जाकर झाड़े।

कोड़ा मार मन्त्र

अंगौछा अंगौछा तोर बलिहारी जाई।
अंगौछा मन्त्र मार से विष झर झर जाई॥
सोने का अंगौछा रूपे की झालरी।
होय निर्विष तोरे मारे रोगी का गातरी॥

लो विष झार फेकहु सात समुद्र पार।
आदेश माई मनसा की दुहाई॥
नहीं तो विषहरि राई को आई लाये।

एक नए अंगौछे का कोड़ा बनाकर इस मन्त्र से तीन कोड़ा उसे मारे जो सर्प काटने को झाड़ने के लिए बुलाने आए। इससे विष का ज्वाला कम हो जाए फिर झाड़े।

सर्प जल दर्पण मन्त्र

द्वितीय मन्थन से समुद्र विष उगलाय।
सो देखि देव दैत्य उर सोच अकुलाय॥
देवगण बोले शिव सों होय कौन उपाय।
अब कैसे वचुं तुम सब बोलो जुटि आय॥
इतना वचन सुनि बोले देव महेश्वर।
कहैं अधीरे होय अब हरि रक्षा कर॥
हुए उपस्थित हरि स्मरण के करते ही।
देखि शिव सनअस मधुरी बनी कही॥
अपने कण्ठ से धरौ यह सब विष।
तब यो होय समुद्र जल निर्विष॥
हरि वचन सुना शिव किये विष पानद्ध।
उदरस्थ नाहीं कियो दियो कण्ठ स्थान॥
तबते उनका नाम नील कण्ठ कहाय।
हरि हरि बोल विष जलमों दरसाय॥

एक नई मिट्टी की हँड़िया लाकर जल भरे और उसमें तीनदल दुर्ब्बा डालकर हांड़ी के ऊपर त्रिशूल चिह्न बनाकर तीनबार मन्त्र पढ़कर रोगी को उस जल को देखने को कहे फिर उस जल में दृष्टिगोचर होगा कि रोगी को किस जाति के सर्प ने काटा है।

सर्प हूल लखारण मन्त्र

इकड़ी मकड़ी खिड़की जंगल दुआर।
राम रहीम को इसमें कछु नहीं विचार॥
जय माँ देवी चामुण्डे करूँ तेरा भरोसा।
कारण हूल उखारण देहु पर ऐसा॥
आर ओर डंका धरि के घुमाय।
कौन कौन सर्प सेवा कहुँ समुझाय॥
जितने सब सपिस खड़िस करैंता औगुखुरा।
और केवटियाँ बारह मास बस जल पोखरा॥
जल में जल कितना खाय।
सो कछु बूझि नहिं जाय॥
एक चोट देखि के झाड़े चुपचाप।
विष के ज्वार से जीव थर थर काँपे॥
चोट देखि के ओझा नहिं झारै॥
का करै सो सोचि के मन मारै।
इसी समय वैद्य धन्वन्तरि आय॥
तब उसने ओझा सो कही समुझाय।
सुन ओझा अमा मोर वचन धर ध्यान॥
चौसवा के मन्त्र से करु विष उत्पात।
शंख जल में और मानिक जल में॥
जल में काल कूट विष जल में।
माताकेतीन शिल्वईशमर्छाना औलियासाई॥
माता के स्मरण से विष उखारण खाई।
इसके अंक में अब तनिको विष नाई॥
राईविषहरि देवी मनसा माई की दुहाई।

बिच्छू के दंशन से जिस तरह काटे हुए स्थान में हूनल कांटा टूटकर रह जाता है उसी प्रकार सर्पहूल रहने पर थोड़े केशों के गुच्छे हाथ में लें। इस मन्त्र द्वारा झाड़ने से सर्प दन्त उठ जाते हैं।

रस्सी बन्धन मन्त्र

ॐ नमो आदेश मातु विषहरिया का।
घलिया धुलिया तुम उड़िके फिराव।
हमको देख तुम सम्मुख में ठहराव।
मनसा के बर विष जाय न ऊपर में।
विषहरि के शपथ कहूँ यह पाठ में।
झट से विष धाव मुँह चलि आए।
दुहाई देवी मनसा माय॥

सर्प काटने के साथ ही थोड़ा सा पाट या पाट की रस्सी लें तीन बार मन्त्र पढ़ सर्प के काटे हुए स्थान के ऊपर कसकर बाँधे तो विष ऊपर नहीं चढ़ता है।

डंस मुख विष लावन मन्त्र

ॐ नमो आदेश मनसा देवी को।
केला अफूली गाछ खाली झूर-झूर झुराय॥
देवी की ज्योति से विष डंक मुँह दिखलाय।
तू कहाँ रे विष माया मनसा की दुहाइ॥
गरुड़ज्ञा हम कहौं जे गाई।
कि कम्पन से करे विष शीघ्र नीचूँ आय॥
शिव भोला बुलावें और मनसा माय।
आदेश विषहरि राई॥

यह मन्त्र सात या इक्कीस बार पढ़कर डंक स्थान में फूंके तो विष मुँह में आए।

हस्त चालन मन्त्र

ॐ नमो आदेश देवी मनसा माई को। चाल कटे चोलायान काटे और काट चाल बानी रेख हाथ चलते पवन चलै औरचले महादेव। चल रे हाथ जल्दी चल यदि न चल तो भादो माँस ताड़ चोरी तिसके

निचे तलसे जाय आदेश विषहरि माई की दुहाई फिर।

कोई कुवारे ८ या १० साल के बालक को उत्तर मुख बैठाकर बाएँ हाथ के तलवे को भूमि पर रखे व यह मन्त्र ७ बार पढ़ फूंक मारे तो हाथ चलकर यदि सर्प काटे स्थान में विष रहे जल्दी उठेगा।

प्रथम सर्प विष झाड़न मन्त्र

कोने में बैठे लखीन्जर विहुल बैठो घर में।
दोनों मिलि चरखा कातें हाथ पांव के भर में।
बिहुला बोलत विषहरि तो ही पहिचान।
मोर स्वामी को डंस लिय थे प्राण।
अभी तोहीं करूँ नमस्कार बारम्बार।
तू हमरे घर भूल न आना इस बार।
जावो विधि बेगि झट से जाव।
नहीं तो माय मनसा के माथा खाव।

इन झाड़न मन्त्रों से २१ या १०८ बार एक झाड़ना चाहिए। प्रथम मन्त्र से फायदा न मालूम पड़े तो दूसरा या तीसरा मन्त्र तीन बार पढ़ प्रयोग कर सकते हैं। नीम की टहनी से भी झाड़ा जाता है।

द्वितीय सर्प झाड़न मन्त्र

अरे विष तोरे नोरिया रंगनि रेख रहियो।
जेहि पीबत महादेव के नीलकंठ भयो॥
जावोरे विष मनसादेवी के गुहार भयो।
आज्ञा देवी मनसा माई।
आज्ञा विषहरि राई की दुहाई फिरे।

तृतीय सर्प झाड़न मन्त्र

नदिया से जाय रही विष बहरो के संग में।
शीस गरुर बिलोकत ही पान करे बहु रंग।

जावो वेगि विष लगावो मति देरी।
आए देवी मनसा लिये दूध की झारी॥
नहीं विष अमुक के अंग तनिको नहीं।
फूंक चोटसे मनसा के दोनों हाथ उड़ाहीं।
आदेश देवी मनसा विषहारि रामको दुहाई॥

चतुर्थ सर्प विष झाड़न मन्त्र

ॐ नमो आदेश मनसादेवी को फुड़िया मारे छूड़ हथिया कोने उथले बदरिया। वही पवन में उड़ि जाय विष तोरि सब गदरिया। स्थिर होवे विष घाव मुँह के पार में। नहीं विष नहीं विष 'अमुक' के शरीर में नहीं तो विषहरी राई की दुहाई फिर।

पंचम सर्प विष झाड़न मन्त्र

सुग्रीव के वदन से विष उड़िके पराय।
बुढ़िया मौसी हाट बोढ़न को जाय॥
मुँह में लियो और लियो अंचला पसार।
उनकी कृपा सब विष जल होय छार।
'अमुक' अंग नहीं विष भार।
देवी विषहरी ने दिया विष टार॥

षष्टम् सर्प झाड़न मन्त्र

पराइल बदरिया अन्धेरी रतिया।
साँप साँपिन तू कौन-कौन जतिया॥
डइनी खेल ताख बाँही ओर।
जितना विष सब रहूं पाँय के पोर॥
आदेश विषहरि के विष चल जाई।
ना रहे विष माय मनसा के दुहाई॥

सप्तम् सर्प झाड़न मन्त्र

पिता गृह जाय गौरी शिव रहे रिसाय।
बेयार लागे उनखे अंग बसन उड़ाय।।
उसमें विधि के विर्य गिर जाय।
सो देख ब्रह्मा मन से किये उपजाय।।
उसे भरि रखें शंख के भीतर।
रहै तीन कोटि बरष शंख में आकर।।
जितने कालकूट विष बसी से जन्माई।
कितनी विष उसके यह कहि नहिं जाई।।
यही विषपान करें नाग गण सब आई।
तेही समय से जीवन दर्शन कराय।।
उसके ज्वाल से जीव जन अकुलाय।
श्री हरि हरि कही पुकार लगाय।।
दयामय दीनबन्धु सनत पर होय दयावन्त।
पठये गरुड़ कह वह आगे तुरन्त।।
शोष लई रब विष को गरुड़ आनन्द से।
कृष्ण कृष्ण राम राम बोलो प्रेमानन्द से।।
अमुक अंग नहीं विष नहीं भार।
श्री हरि ने दिये सब विष टार।।
आदेश देवी विषहरि की दुहाई फिरै।

सर्प विष निवारण मन्त्र

उत्तर दिशा काली बदरिया।
तेरी बीच ठाढ़ काल मदरिया।।
एक हाथ चक्र धारे एक हाथ गदा सम्भारे।
चक्र के मारो सात खण्ड हो जाय।।
गदा के मारे सात पाताल चल जाय।
ॐ हरहर बेगिजाय विष महेश के आदेश।।

नीम की डाली से ७ या २१ बार मन्त्र पढ़ झाड़े तो विष दूर हो।

अन्य मन्त्र— **ॐ झार झंखार काले कोठा बार बाल पताला दह-दह छः उजरा छः कारीः पीरी अठारह जाती जाग जाग शब्द साँचा फुरो वाचा।**

गुमा के फूल और अढ़ाई मिर्च पीसकर तीन मन्त्र पढ़कर खिल दें तो विष उतर जाए।

अन्य मन्त्र— **शिरू पवन जहि विष नाशे तेहि देखि विषधर बाचे। सत्यजी आप विष में सन्दी स्येष्ठये ना विष रहे मन्त्रों कुशलउ बालू यावत काल विष निर्विष होई।**

सात मन्त्र पढ़ फूंके।

सर्प विष नाशक मन्त्र

ह्रीं ह्रीं जय चामुण्डे दुष्ट सर्प नाशनी बिगघायती घोर दंशने। कह कह लह लह दह दह पच पच मथ मथ विष नाश्य स्फोटय बिद्रावय किल किल द्रहि द्रहि द्रूहि फट् फट् अमुक विष नाशय ह्रीं ह्रीं फट् कालिके गोष्टे विचारमठ मठे झां झां शां शीं फट् स्वाहा।

सर्प डसे हुए व्यक्ति को सम्मुख बैठाकर बत्तीस बार मन्त्र पढ़ माथे पर झाड़े तो रोगी सम्पूर्ण आरोग्य होता है।

सर्प विष नाशक तुलसी मन्त्र

घोर निःस्वनेस्वसन्वासिनी नील सीभे झनझन गह गह फट फट मथ मथ ज्वाला द्विलीनी विद्रु में हन हन विष नाशय नाशय स्तम्भय स्तम्भय विद्रवय विद्रवय स्थावर जंगल विष नाशय नाशं द्रुत द्रुत लट लट लट कुरु कुरु ह्रीं फट् स्वाहा।

इस मन्त्र का प्रयोग करने के पहले ब्राह्मण द्वारा नील देवी की पाँचों प्रकार पूजा अर्चना करके देवी का चरणामृत लेकर सर्प काटे हुए व्यक्ति के स्थान को धुलाए फिर उत्तर बिठाए सिर पर ३२ बार शरीर पर १६ बार कण्ठ में १२ बार, हृदय में ८ बार, नाभि में ६ बार और जानु में ४ बार मन्त्र का जाप करें तो मन्त्र ग्रन्थों का कहना है कि मृत व्यक्ति भी जीवन पा सकता है।

सर्प विष नाशक तुलसी मन्त्र

राम तुलसी कृष्ण तुलसी बबुल तुलसी पत्ता।
नाही जाने सब कोइ साँपा लाता॥
यदि गिरे रस पीव रोग के गात।
सर्प विष तुरत ही भागि जात॥
क्लीं क्लीं ह्रीं ह्रीं रां रां ठेः ठः।
देहिं विष अमुक अंग अबनाही॥
माया मनसा देवी ढ़े दुइाइ।
आज्ञा विषहरि राइ की दुहाइ॥

एक निश्वास में कृष्ण तुलसी के तीन पत्ते तोड़कर तीन-तीन मन्त्र पढ़ सर्प काटे स्थान में एक-एक कर लगाए। पत्ता सटा हुआ रहने से जानना चाहिए कि अभी विष है। उखड़ जाने से विष नहीं है ऐसा जानना।

सर्प विष दूरीकरण मन्त्र

ॐ तम हानि उदर महानी वासुन्धरी विश्वकूहाल हलोना प्याहति ठः ठः।

इस मन्त्र को पढ़कर गोधूमा की जड़ जल में पीस पिलाए तो विष दूर होए।

प्रथम मनसा सार मन्त्र

मातु मनसा तेरे मन्त्र का करौं प्रचार।
विष नाशन में देवी रहे तेरा अधिकार॥
किसको शक्ति बल है कौन सक छुड़ाय।
विष के हाथ से कौन सके छुड़ाय।
जब लो पूजा तेरी जो करे मनलाय।
तो तिनके तेज से उसका विष झर जाय॥
तब तुम कृपा करो जान अति दीन।
सर्प दशन विष फूंक से हो जाय छीन॥

निशि घोर रहे चहे अन्धेरी होय।
कौन सर्प ने डसा ना जाने हम सोय॥
बीछी मकरी आदि अरु अष्ट रंग नाग।
नाजनी कौन जाने यह रोगी सो लाग॥
याद होय सोरहो चित, विषधर विषाऊं।
तबहूँ न होय स्थिति, कोई पोर कोई ठाऊं॥
आदेश माया मनया देवी की।
अमुक अंग विष निर्विष हो जा।

जिस समय रोगी निस्तेज हो जाए और कौन सर्प ने काटा है यह ठीक नहीं कह सकने पर इस मन्त्र द्वारा झाड़ने से विष उतर जाता है। इस मन्त्र द्वारा विशेष उपकार न हो तो द्वितीय मन्त्र को तीन या सात बार पढ़कर से फूंक देना चाहिए।

द्वितीय मनसा सार मन्त्र

मेघ लाल आदि करे काल कूलीम में जितनी।
सूता के सचार से उसकी लाला गिरे उतनी॥
के उटिया के कम रत्न भाई।
तोहरे रहेने हम ना जाई॥
काला कूचन काल कुटिया विष।
काहे तूं करती इतनी रिष॥
जब तक रहे शक्ति बल तोर।
आदेश देवी मनसा माई की॥
तृतीय मनसा माई की।

ॐ नमो आदेश मनसा देवी को वृजिवाले हुई नितोरे काँटो। कालयार काला कुटा विषकोरे देय माठी। मनसा मन्त्र से फूंक करूं तोरे पानी। देखूँ इस बार तेरी होय कौन ठेकानी मनसा मन्त्र के जोर से विष जल होय गरुड से स्मरण विष नाहीं रहाय।
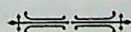
कामाख्या मन्त्र सिद्धि

मारण मन्त्र प्रारम्भ

ओम नमो काल रूपाय अमुकं भस्मी कुरु कुरु स्वाहा।

प्रथम पन्द्रह जपे फिर भांग, नमक, चूरण दीप-शिखा पर एक सौ नौ बार मन्त्र पढ़कर जलाएँ तो दुश्मन मृत्यु मुख में पतित होता है। परन्तु मारण कर्म प्रयोग के पहले स्थिर चित्त से विचार लें। गुरु की आज्ञा लेकर जिस मनुष्य ने उसके पुत्र स्त्री बंधु आदि का नाश किया हो तथा वह पापी पुरुष हो तब ही प्रयोग करें नहीं तो फल उल्टा हो सकता है। मैं स्पष्ट लिख देता हूँ। इसमें सोच विचार लें।

ॐ नमो अमुकस्य हन हन स्वाहा।

कनेर के फूल, सरसों तेल में मिला यह मन्त्र पढ़ दस हजार हवन करें तो शत्रु मारण होए।

ॐ ऐं ह्रीं वहा विकराल भैरवाय।

ज्वालात्काय शत्रुं दह दह हन हन पच पच ऊन्मूलय ऊन्मूलय ॐ ह्रीं ह्रीं फट।

श्मशान में भैंसा के चर्म पर बैठ काले ऊन के द्वारा सात रात्रि तक जप करें प्रत्येक रात्रि १०८ मन्त्र जपें तथा सवा सेर सरसों का हवन करें तो अवश्य शत्रु नाश होए।

शत्रु मारण मन्त्र

ॐ नमः काली कंकाली महाकाली के पुत्र कंकाली भैरो आदेश रहे अजीर मेरा पठामा काल करे भोज रक्षा करे आन बाधूँ बान बाधूँ

दशोसुर बाँधो ना नारी बहत्तर के ठा बाधूँ फूल में भेजू फूल में जाय कोठ जो पड़े थर थर काँपे हल हल हले मेरा सवाघड़ी सवापहर को बावला न कहे तो माता काली की शय्या पर पाँव धरे बाबा चूके तो कूचा सूरे बाबा छोड़ कुवाँ चाकरे तो धोबी के नाद चमार कूँड़े परं मेरा भेजा बावला न करे तो महादेव की जटा टूटि भूमि में गिरे माता पार्वती के चीर पैर चोट करे बिना हुकुम नहीं मरना हो काली के पुत्र कंकाल भैरूँ फुरो मन्त्र ईश्वरो वाचा।

पान सुपारी, दो लौंग, लोहबान, धूप, कपूर और एक ठीकरी में सिन्दूर द्वारा सात वदोदन त्रिशूल बनाकर नाम लिख श्मशान में सब चीजों का हवन कर नित्य २१ बार मन्त्र पढ़कर सात दिन तक करें तो अल्प दिनों में दुश्मन का नाश हो।

अन्य मन्त्र—जल की योगिनी पाताल का नाम उठ अमीर जहाँ लगाऊँ तहाँ दौड़ के मार दौड़ कर अमुक के मार लाई मुहम्मदपीर की दुहाई पैगम्बर तुर्कनी बूत की दुहाई चक्रवी की फुरो मन्त्र ईश्वरो वाचा।

अन्जीर वृक्ष के पास जाकर गुग्गुल की धूनी देकर एक पत्ता मुँह में रख तालाब में गोता लगाकर ७ बार मन्त्र पढ़े फिर धूनी सुखाकर शत्रु के मुख या सिर पर डारे तो निःसंदेह शत्रु नाश करें।

अन्य मन्त्र—ॐ नमः गुरु को आज्ञा लाल पलंग नौरंगी छाया काढ़ कलेजा तूही चाख चौकाल गाय दीप जलाय तीन बार कहे, आवो श्री महावीर बलवीर हनुमानजी फिर तीन बार कहे, आवो कलुआ वीर रणधीर। फिर नैवेद्य धर ११ दिन प्रतिदिन सहस्र मन्त्र जपें और घृत में लौंग, सुपारी, जायफल, गुग्गुल, मिश्री मिला १२५ बार होम करें। ब्राह्मण भोजन कराए सिद्ध हाए। जप प्रयोग करें तब इसी विधि से एक माला ११ दिन तक जपे तो अवश्य शत्रु का मरण होए।

शत्रु नाशन मन्त्र

ॐ नमः कर फावरी कांधे कामरी भैरो वीर खड़ा मसाला हलकी धनुही बज्र का बाण अमुक को बेगि न मार तो देवी काली की आन

फुरो मन्त्र ईश्वरोवाचा।

दीपमालिका की रात्रि में आसन बाँध चौका लगाए धूपदीप नैवेद्य धर १२१ बार मन्त्र पढ़ दीप–शिखा पर मारे। जब प्रयोग करना हो तब काले कुत्ते के रक्त उड़द और चिता भस्म मिलकर तीन बार मन्त्र पढ़कर शत्रु को मारे।

शत्रु को दुख देने का मन्त्र

ॐ नमः कामाक्षये अमुकस्य हन हन स्वाहा। सोमवार या मंगलवार को श्मशान की धूल लेकर राई और आक का काष्ठ लेकर बीस मन्त्र पढ़ हवन करें तो बैरी दुख पाए।

शत्रु को कष्ट देने का मन्त्र

ॐ नमः हनुमन्त बलवनत मातु अंजनी पुत्र हल हलन्त अबी चढ़न्त गढ़ मिला तोड़न आवो लंका जाल बाल भस्मन्त करि आवो लेई लेगा लगूर तेल पटाय सुमिर ते पटका ऐ चन्दरी चन्द्रवली भवानी मिली गावे मंगचार विजई रामलषन हनुमान जी आओ तुम आओ सात पान का बीड़ा लगाय चाभो माथे सिन्दूर चढ़ाओ। मन्दोदरी के सिंहासने हीलत डोलन आओ यहाँ आओ हनुमन्त माया न सिंह नाया आगे मैरूँ किल किलाय ऊपर हनुमंत गाजे दुर्जन को डाट दुष्ट को मार करो संहार राजा हमारे समगुरु फुरो ईश्वरो वाचा।

प्रथम १०,००० मन्त्र जपकर ४० या २१ दिन में पूरा करें। षटक्रमानुसार सब विधि करें, पहले दिन सात पान के बीड़े व पेड़े का भोग रखे। तब दूसरे दिन एक बीड़ा सात बताशे और धूप दीप पुष्प आदि से हनुमानजी का पूजन कर सिन्दूर चढाएँ तो सिद्ध होए। प्रत्येक कार्य में भूमि पर शत्रु की मूर्ति (पुतला) बनाए। जहाँ तहाँ बीज लिखके हृदय में नाम लिखे और मुरदे की हाड़ छाती में ठोंक पुतले को मसान भूमि में गाड़े फिर मुर्दे के भस्म से विवश हो बीमार हो जाए, यदि व न उखाड़ा जाए तो दुश्मन पर हजारों आपत्ति आए और अन्त में मर जाए। ध्यान रहे कि जो कोई कर्म करें हर समय मन्त्र पढ़ता जाए और इस मन्त्र को पढ़ के लोहे की कीलों को दुश्मन के घर के चारों कोने में गाड़ दिया जाए तो स्तम्भन हो।

दुश्मन को कष्ट हो

ॐ नमः काल भैरो कालिका तीर मार तोड़ बैरी छाती घोट हाथ काल जा काढ़ बत्तीसी दांती यदि यह न चले तो नोखरी योगिनी का तीर छूटे मेरी भक्ति की शक्ति फुरो मन्त्र ईश्वरो वाचा।

कनेर का फूल २१ प्रति २१ गुग्गुल की गोली लेकर श्मशान की अग्नि में एक फूल व एक गुग्गुल की गोली मन्त्र पढ़कर हवन करें, २१ दिन तक करें तो दुश्मन को अत्यन्त ही कष्ट मिले।

शत्रु मारण मन्त्र

१. भरणी नक्षत्र में सोमवार के दिन चिता की लकड़ी लाकर शत्रु के द्वार पर अर्द्ध रात्रि को गाड़े तो एक मास में दुश्मन की मृत्यु हो, लकड़ी न्योतकर लाए।

२. बहेरा वृक्ष की लकड़ी का कोयला और बहेड़े का फल, करेंजा का फल व लता केसर इन सब को तेल के साथ नाम लेकर होम करें तो मृत्यु होए।

३. काले उल्लू की जीभ में केसर मिलाकर दुग्ध के साथ पुष्य नक्षत्र रविवार में जिसे पान कराए तो वह उल्लू जैसा हो जए उसको कुछ नहीं सूझे फिर मरण होए।

४. शनिवार को काला तीतर व बड़ी बटेर और लावा पक्षी की बीट लाकर शत्रु के सिर पर छोड़े तो अवश्य शत्रु का मरण होए।

५. आश्लेषा नक्षत्र में काले सर्प की अस्थि एक अंगुल प्रमाण ले शत्रु के घर में फेंके तो शत्रु विनष्ट होए।

भूतादिक मारण मन्त्र

ॐ नमः आदेश गुरु का हनुमत वीर बजरंगी बज्र धार डाकिनी शकिनी भूत प्रेत जिन्न सबको अब मार मार न मार तो निरंजनि निराकार की दोहाई।

शनिवार से लगातार २१ दिन तक हनुमानजी की पूजा व २२१ मन्त्र जप करें फिर चौरास्ते की कांकरी अथवा उड़द सात बार पढ़ कर रोगी को झाड़े।

तेली का तेल नष्ट करने का मन्त्र

'ॐ दह दह स्वाहा।'

चित्रा नक्षत्र में मौरठी की लकड़ी की चार अंगुल प्रमाण की कील को बेइमान तथा निर्दयी तेली के घर गाड़ दें तो उस तेली की कोल्हू में तेल पेरने से नाश हो जाता है। उपरोक्त मन्त्र का १,००० जप कर प्रयोग करें।

किसान का अनाज नष्ट करने का मन्त्र

'ॐ नमो बज्रपाताय सुरपति हुँ फट् स्वाहा।'

जहाँ बज्रपात हो अर्थात् बिजली गिरी हो वहाँ की मिट्टी लेकर एक बज्र बना लें। ५०१ बार पढ़कर इन्द्र की पूजा कर सिद्ध कर लें। फिर मन्त्र पढ़कर उस बज्र को जिसके खेत में गाड़ा जाएगा उसके खेत का अनाज नष्ट हो जाएगा और खेती न हो सकेगी।

माली का बाग नाश करने का मन्त्र

'ॐ ह्रीं हट् हट् फट् स्वाहा।'

इस मन्त्र को शनिवार को पीपल के नीचे १,००८ बार जप कर वहाँ की थोड़ी सी मिट्टी लाए। एक बार पुनः मन्त्र पढ़कर मिट्टी ले फूंक दिया जाए तो माली की पूरी बागवानी नष्ट हो जाए।

अथवा

गन्धक का चूरा लायके पानी देय मिलाय।
बाग में मिश्रण छिड़क दे, सबै नाश हो जाय॥

अहीर का दूध नष्ट करने की विधि

'ॐ नमः दुग्धं बला धन स्वाहा।'

इस मन्त्र को शनिवार को रात १२ बजे बबूल के पेड़ की पूजाकर १,००८ बार जपे। उसी बबूल की लकड़ी में उसी बबूल के काँटे को घी के साथ आहुति १०८ बार इसी मन्त्र से दे अर्थात् होम करें। अब दूसरे दिन उस बबूल के पेड़ के काटों को जिस अहीर के घर में गाड़ दिया जाए तो वहाँ के सभी दुधारू पशुओं का दूध सूख जाएगा।

अथवा

अनुराधा नक्षत्र में जामुन की लकड़ी लाइये।
आठ अंगुल की काट के कील समान बनाइये॥
अहीर के घर में पशुओं के पास जाकर गाड़िये।
दूसरे दिन से उसके यहाँ का सारा दूध नसाइये॥

तमोली के पान नष्ट हो

'ॐ रं रं रीं रीं दग्ध स्वाहा।'

इस मन्त्र को १,००,००० बार जप कर सिद्ध कर लें। पुनः १०८ बार पढ़कर थोड़ी सी मिट्टी तमोली के घर में फेंक देने से उसके घर में पान सड़कर नष्ट हो जाएगा।

अथवा

तमोली के पान नसाय का कीजै यही उपाय।
शतभिषा नक्षत्र में काट सुपारी लाय॥
नव अंगुल नापकर सुन्दर पान लगाय।
तमोली के घर डालिए पान अवश्य गल जाय॥

कलवार की मदिरा नष्ट हो

'ॐ ब्रं ब्रं ब्रीं ब्रीं फट्।'

१,००,००० लाख जपने से यह मन्त्र सिद्ध होता है सिद्ध करने के बाद इस मन्त्र से दुकान या घर की ओर एक फूंक देने से ही कलवार की सब मदिरा पानी जैसी होकर विष का कार्य करेगी।

अथवा

कृत्तिका के नक्षत्र में शनिवार भी होय।
आकमूल को लायकर एक कील बनोय।
उस कील को सोलह अंगुल काटै
कलवार के घर रात में डारै
क्षण भर में सारी मदिरा छरभारै॥

स्त्री मोहन तन्त्र

शुक्रवार को कछुए का नाखून, किरगल का पूँछ, मोर का पंख और सिंगरफ लाकर जला डाले। उस राख को जिस स्त्री के सिर पर छोड़ा जाएगा वह आपके वशीभूत हो जाएगी।

राजकुल मोहन तन्त्र

नीलकमल, गुग्गल और उतना ही अगर मिलाकर अपने सब बदन पर धूनी देकर जाए तो देखते ही राजकुल वश में हो जाए।

सर्व मोहिनी तिलक

१. कुम्कुम, सिन्दूर और गोरोचन को आँवले के तेल में फेंट लें। उसका तिलक लगाकर जहाँ भी जाए तो देखते ही सारा जगत् मोहित हो।

२. तुलसी के बीज को पीसकर सहदेवी के रस में फेंटकर तिलक करें तो सारा जग मोहित हो।

३. मैंनसिल और कपूर को केले के रस में मिलाकर तिलक करने से सारा संसार मोहित हो जाता है ऐसा शिवजी ने पार्वतीजी से कहा है।

४. हरताल, असगन्ध और गोरोचन को पीसकर चूर्ण बना लें और केले के रस में मिलाकर तिलक करने से सारा विश्व मोहित हो जाता है। इसमें संशय नहीं है।

जल स्तम्भन मन्त्र

'ॐ नमो भगवते जल स्तम्भन कुरु कुरु हुँ फट् स्वाहा।'

साँप और नेवले की चर्बी और विषहीन साँप के बच्चे का सर तेल में मिलाकर, १,००८ बार उपरोक्त मन्त्र पढ़कर सिद्ध करें। पुनः उसको आग पर पकाकर एक कर लें और उस तेल को लोहे के पात्र में कृष्णपक्ष की अष्टमी को रख छोड़े। फिर इसी तेल को हाथ में मलकर १०८ बार जपकर जिस जल को स्पर्श करें वह स्थिर हो जाएगा।

पशु पक्षी मोहन तन्त्र

कांकड़ा सिंगी, चन्दन, वच और धूप कूटकर इन्हें मिला लें। इस मिश्रण को शरीर और कपड़े पर लगाने से पशु पक्षी सभी प्राणी मोहित हो जाते हैं।

गर्भ स्थिर रहे

१. **'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय अयं गर्भ स्तम्भन कुरु कुरु स्वाहा।'** एक रविवार से दूसरे रविवार तक प्रतिदिन यह मन्त्र १,००० जपने पर सिद्ध हो जाता है। मूल नक्षत्र में रविवार के दिन भोजपत्र पर अष्टगन्ध की स्याही और कुश की कलम बनाकर अष्टदल कमल पर यह मन्त्र लिखें और स्त्री अपनी बाई भुजा पर बाँध लें तो गर्भ स्थिर रहता है।
२. हिंगलाज पत्थर को पीले कपड़े में रखकर स्त्री कमर में बाँध लें तो गर्भ नहीं गिरता।
३. कुम्हार के चाक की मिट्टी रविवार और मंगलवार को लाई हुई खाने से और पेट पर लगाने से गर्भ नहीं गिरता।
४. शहद खाने से और बकरी का दूध पीने से भी गर्भ नहीं गिरता।
५. सफेद कनेर, मिश्री, केसर, कंदपाठ इस सब चीजों को पीसकर चूर्ण बना लें और शहद मिलाकर खाने से गिरता हुआ गर्भ भी रुक जाता है।
६. कटियाली, कत्था, बेल, पटोल, साँठी इनकी जड़ को दूध में पकाकर स्त्री पीए तो गर्भपात का भय न रहे।
७. शाल वृक्ष के बीज, क्षोर ककोली, काले तिल, देवदारू, कमलनाल, राम पीपरी, शतावरी, गौरासर, जवासा राई, कठियाली, सिंघाड़ी, किसोर, दाख और मिश्री को दूध में औंटाकर सात महीने का गर्भ हो जाने पर सात दिन पीए तो सब प्रकार के उपद्रव शान्त हो जाए और गर्भ नहीं गिरे।
८. साँठ और क्षोर काकोली को दूध में औंटाकर पिलाने से गर्भपात का भय नहीं होता है।
९. जवासा, मुलहट्टी, गौरीसर इस औषधियों को १०-१० ग्राम लेकर दूध में औटाए नवें माव में पिलाए तो गर्भ न गिरे।

बुद्धि नष्ट करने की विधि

उल्लू पक्षी का बीट लाकर छाया में सुखा लें फिर पान में रखकर दुश्मन को खिला देने से दुश्मन की बुद्धि नष्ट हो जाएगी।

शस्त्र स्तम्भन विधि

शुभ नक्षत्र में ओंगा की जड़ काटकर लाए। उसको पीसकर तन पर लेप करें तो शस्त्र की चोट न लगे।

बाल रक्षा विधि

यदि दुष्ट दृष्टि (नजर टोना आदि) के कारण बालक के शरीर में कोई रोग या कष्ट हो जाए तो—

ॐ वासुदेवो जगन्नाथः पूतनातर्जनो हरिः।
रक्षति त्वरितं बालं मुञ्च मुञ्च कुमारकम्॥ १॥
कृष्ण! रक्ष शिशु शङ्ग मधुकैटभ मर्दनः।
प्रातः सङ्ग व मध्याह्ने सांयाह्नेषु च सन्ध्ययोः॥ २॥
महानिशि सदा कंसारिष्ट निषूदनः।
यद्गोरजः पिशाचांश्च ग्रहान् मातृ ब्रहानादि॥ ३॥
बालग्रहान्विशेषेण छिन्धि छिन्धि महाभयान्।
त्राहि-त्राहि हरे नित्यं त्वद्रक्षाभूषितं शिशुम्॥ ४॥

उपरोक्त चार मन्त्रों से अभिमन्त्रित की हुई गौ के गोबर की शुद्ध भस्म को बालक के मस्तक, कंठ, हृदयादि अंगों में लगाने से बालक का कष्ट दूर हो जाएगा।

सर्व कष्ट हरण मन्त्र

ॐ श्री हरि कृष्णाय वासुदेवाय हरये परमात्मने
प्रणत क्लेशनाशाय गोविन्दाय नमो नमः।

इस मन्त्र को भी उपरोक्त विधि से प्रयोग करने से छोटे-बड़े सभी के हर प्रकार के रोग और कष्ट शान्त हो जाते हैं।

दाँत के दर्द झाड़ने का मन्त्र

कालिन नागिन शिरजटा ब्रह्म खोपड़ी हाथ,
मरी मसानी न फिरे गुरु हमारे साथ,
दोहाई ईश्वर! महादेव-गौरा के
पार्वती! दोहाई नैना योगिनी के॥

इस मन्त्र को २१ बार गाय के गोबर के कण्डे की राख पर पढ़कर गाल पर लगाए तो दाँत का दर्द जाता रहे।

रास्ते में सर्प-बिच्छू आदि से रक्षार्थ मन्त्र

'ॐ कारी कमरी मौनी रात,
ढूंढो सरप अपनी बाट,
जो सरप बिच्छा पर परे खात,
वह सरप बिच्छा करे न घात।
दोहाई ईश्वर महादेव गौरा पार्वती के॥

यदि अन्धेरी रात में कहीं जाना पड़े तो उपरोक्त मन्त्र को पढ़ता जाए, ऐसा करने पर सर्प, बिच्छू आदि विषैले जन्तु मार्ग से दूर हो जाएँगे। कदाचित् उन पर पैर भी पड़ जाए तो वे घात नहीं करते।

बीमारी दूर करने का यन्त्र

१०	७७	२	७
६	३	७४	७३
७६	७१	८	१
४	५	७२	७५

इस यन्त्र को रविवार एवं पुष्य नक्षत्र में भोजपत्र पर अनार की कलम

द्वारा अष्टगन्ध से लिखकर गुग्गुल की धूनी देकर रोगी के गले में बाँधे तो रोग धीरे-धीरे बिल्कुल शान्त हो जाएगा।

भागा हुआ व्यक्ति वापिस घर आए

यन्त्र—नाम...

२	९	४
७	७	३
६	६	८

इस यन्त्र को भागे हुए व्यक्ति के किसी कपड़े पर लिखकर उल्टा चौपरत कर पत्थर के नीचे दबा देने से भागा हुआ व्यक्ति शीघ्र लौटाकर चला आता है अथवा उसके विषय में कुछ सूचना मिल जाती है।
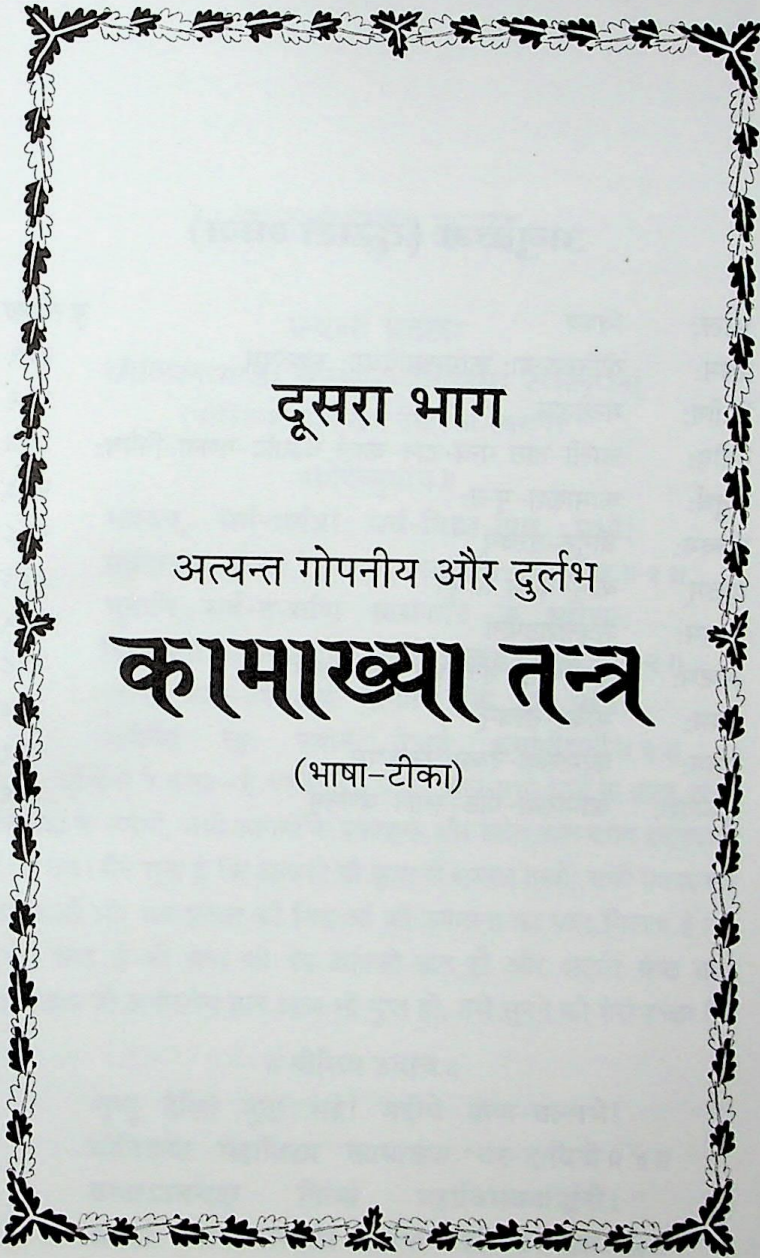
सर्प भगाने का मन्त्र

सर्पापसर्प भ्रदं ते दूरं गच्छ महाविष।
जनमेजस्य यज्ञान्ते आस्तीकवचनं स्मर॥ हुं फट्॥

इस मन्त्र से १११ बार तिल घी की आहुति खैर की लकड़ी से करनी चाहिए। इसके प्रभाव से सर्प ग्रसित स्थान व गृह आदि स्वच्छ हो जाता है तथा सर्प भय नहीं रहता।
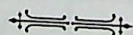
दूसरा भाग

अत्यन्त गोपनीय और दुर्लभ

कामाख्या तन्त्र

(भाषा-टीका)

अनुक्रम (दूसरा भाग)

कामाख्या तन्त्र

प्रथमः पटलः

योनिरूपायाः कामाख्यादेव्याः स्वरूपम्

(योनिरूपा कामाख्या देवी का स्वरूप)

॥श्रीदेव्युवाच॥

भगवन्, सर्व-धर्मज्ञ! सर्व-विद्या-प्रिय, प्रभो!
सर्वदानन्द-हृदय! सर्वागम-प्रकाशक॥ १॥
श्रुतानि सर्व-तन्त्राणि साधनानि च भूरिशः,
विद्यास्ताः सकला देव! फलानि त्वत्-प्रसादतः॥ २॥
सारात् सार-तरं तन्त्रं जानासि किं वद प्रभो!
अतीवेदं रहः स्थानं तेनाहं श्रवणोद्यता॥ ३॥

श्री देवी ने कहा—हे भगवन्! हे प्रभो! आप सभी धर्मों के ज्ञाता, सभी विद्याओं के स्वामी, सभी आगमों के प्रकाशक और सदैव आनन्दमय हृदयवाले हैं। हे देव! मैंने सुना है कि आपकी ही कृपा से समस्त तन्त्रों, सभी प्रकार की साधनाओं और सब प्रकार की विद्याओं की उपासना का फल मिलता है। हे प्रभो! श्रेष्ठ से भी श्रेष्ठ जो तंत्र आपको ज्ञात हो और अत्यंत श्रेष्ठ ब्रह्म प्रतिपादक जो अपौरुषेय ज्ञान आज भी गुप्त हो, उसे सुनने की मेरी इच्छा है।

॥ श्रीशिव उवाच॥

शृणु देवि! मुदा भद्रे! मदीये प्राण-वल्लभे!
योनिरूपा महाविद्या कामाख्या वर-दायिनी॥ ४॥
वरदाऽऽनन्ददा नित्या महाविभववर्द्धिनी।
सर्वेषां जननी साऽपि सर्वेषां तारिणी मता॥ ५॥

रमणी चैव सर्वेषां स्थूला सूक्ष्मा सदा शुभा,
तस्यास्तन्त्रं प्रवक्ष्यामि सावधानाऽवधारय॥ ६॥

श्री शिव बोले—हे प्राणवल्लभे! प्रश्न का उत्तर देता हूँ, सुनो। वरदायिनी महामाया कामाख्या योनिरूपा हैं, वे नित्या हैं, वर और आनन्ददात्री हैं तथा महान ऐश्वर्य को बढ़ानेवाली हैं। वे सबकी जननी और रक्षाकारिणी हैं। वे सदैव स्थूल और सूक्ष्म सभी को मूलभूता, शक्तिस्वरूपा, कल्याणकारिणी हैं। मैं उन्हीं महाविद्या, विराट स्वरूपा 'कामाख्या' का तन्त्र बताता हूँ। अत्यन्त सावधान चित्त से सुनो।

निखिलासु च विद्यासु ये सिध्यन्ति साधकाः।
यत्र कुत्रापि केनाऽपि कामाख्या फलदायिनी॥ ७॥
कामाख्या-विमुखा लोका निन्दिता भुवनत्रये।
बिना कामात्मिकां काऽपि न दात्री सिद्धिसम्पदाम्॥ ८॥

सारे विश्व में जितने प्रकार की विद्याओं की साधना द्वारा साधक लोग जिन विविध सिद्धियों को प्राप्त करते हैं, उन सभी के क्षेत्र में एकमात्र 'कामाख्या' ही वरदायिनी अर्थात् अभीष्ट फलदात्री हैं। साधकों के लिए 'कामाख्या' सर्वविद्यास्वरूपिणी और सर्वसिद्धिदायिनी हैं। जो मनुष्य 'कामाख्या' के प्रति उदासीन रहता है, वह तीनों लोकों में निन्दित होता है। एकमात्र कामात्मिका महामाया 'कामाख्या' को छोड़कर अन्य कोई भी सिद्धिरूपी सम्पदा देने में सक्षम नहीं है।

कामाख्या च सदा धर्मः कामाख्या चार्थ एव च।
कामाख्या कामसम्पत्तिः कामाख्या मोक्ष एव च॥ ९॥
निर्वाणं सैव देवेशि! सैव सायुज्यमीरिता।
सालोक्यं सह-रूपं च कामाख्या परमा गतिः॥ १०॥

'कामाख्या' सदैव धर्म और अर्थ-स्वरूपा हैं। 'कामाख्या' काम और मोक्षस्वरूपा हैं। 'कामाख्या' ही निर्वाण मुक्ति और 'कामाख्या' ही सायुज्य मुक्ति कही गई हैं। 'कामाख्या' ही सालोक्य और सारूप्य मुक्तिस्वरूपा हैं। 'कामाख्या' ही श्रेष्ठ गति हैं।

शिवता ब्रह्मता देवि! विष्णुता चन्द्रताऽपि च।
देवत्वं सर्व-देवानां निश्चितं काम-रूपिणी॥ ११॥
सर्वासामपि विद्यानां लौकिकं वाक्यमेव च।
कामाख्याया महादेव्याः स्वरूपं सर्व हि॥ १२॥

हे देवि! ब्रह्मत्व, विष्णुत्व, शिवत्व, चन्द्रत्व या समस्त देवताओं का देवत्व जिस शक्ति में निहित है, वही काम-रूपिणी 'कामाख्या' हैं। सभी विद्याओं का जो कुछ लौकिक वाक्य है, वही 'कामाख्या' हैं।

पश्य पश्य प्रिये! सर्वं चिन्तयित्वा हृदि स्वयं।
कामाख्यां न विना किञ्चिद् विद्यते भुवन-त्रये॥ १३॥
लक्षकोटि महाविद्यास्तन्त्रादौ परिकीर्तिताः।
सारात् सारतमा देवि! सर्वेषां षोडशी मता॥ १४॥
तस्याश्च कारणं देवि! कामाख्या जगदम्बिका।
चन्द्र-कान्तिर्यथा देवि! जायते लीयते पुनः॥ १५॥
स्थावराणि चराणीह नित्याऽनित्यानि यानि च।
सत्यं पुनः सत्यं विना तां नैव जायते॥ १६॥

महाविद्यारूपिणी सभी महादेवियाँ 'कामाख्या' के ही स्वरूप हैं। हे प्रिय! अपने हृदय में उन सबका ध्यान कर स्वयं देख लो। तीनों लोकों में 'कामाख्या' के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं है। तन्त्रादि में लाखों-करोड़ों महाविद्यायें वर्णित हैं। हे देवी! इन सबमें सबसे श्रेष्ठ षोडशी ही मानी गई हैं। हे देवि! उनकी मूल कारण जगदम्बा 'कामाख्या' ही हैं। हे देवि! जिस प्रकार चन्द्रमा की कान्ति प्रकट होती है, फिर लुप्त हो जाती है और पुनः प्रकट होती है, उसी प्रकार स्थावर और जंगम् तथा नित्य और अनित्य—जो कुछ भी है, वह सब 'कामाख्या' के बिना उत्पन्न नहीं होता, वह सर्वथा सत्य है।

॥ इति श्रीकामाख्या तन्त्रे देवीश्वर सम्वादे प्रथमः पटलः॥

द्वितीयः पटलः

मन्त्रोद्धार

(मन्त्र का उद्धार)

॥ श्रीशिव-उवाच ॥

मन्त्रोद्धारं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि! परात् परम्।
यज्ज्ञात्ववा साधयेत् सिद्धि देवानामपि दुर्लभाम्॥ १॥
मन्त्रस्यास्य प्रतापेन मोहयेदखिलं जगत्।
ब्रह्मादीन् मोहयेद् देवि! बालकं जननी यथा॥ २॥
देव-दानव-गन्धर्व-किन्नरादीन् सुरेश्वरि!
मोहयेत् क्षण-मात्रेण प्रजासु नृपतिर्यथा॥ ३॥

श्री शिव ने कहा—हे देवि! मैं श्रेष्ठ से भी श्रेष्ठ 'मन्त्रोद्धार' को कहूँगा, जिसे जानकर देवताओं को भी सिद्धि प्राप्त होती है। सुनो। दे देवि! इसके प्रभाव से सारा जगत् मुग्ध हो जाता है। जिस प्रकार बालक को माता मोहित करती है या राजा जिस प्रकार प्रजा को वशीभूत कर लेता है, उसी प्रकार हे सुरेश्वरि! देव, दानव, गन्धर्व, किन्नर आदि क्षण भर में वश में आ जाते हैं।

मन्त्रस्य पुरतो देवि! राजानं सचिवादयः।
अन्ये च मानवाः सर्वे मेषादि-जन्तवो यथा॥ ४॥
मोहयेन्नगरं राज्ञः सहस्त्यश्वरथादिकम्।
उर्वश्याद्यास्तु स्वर्वेश्या राज-पत्न्यादिकाः क्षणात्॥ ५॥

इस मन्त्र के सामने, हे देवि! राजा और मन्त्री आदि तथा अन्य सभी मनुष्य भेड़ आदि पशुओं के समान वशीभूत हो जाते हैं। हाथी, घोड़े, रथ आदि के रहित सारी नगरी, राजा-रानी और उर्वशी आदि स्वर्ग की अप्सरायें भी इस मन्त्र के प्रभाव से क्षणभर में वशीभूत हो जाती हैं।

स्तम्भनं मोहनं देवि! क्षोभणं जृम्भणं तथा।
द्रावणं भीषणं चैव विद्वेषोच्चाटने तथा॥ ६॥
आकर्षणं च नारीणां विशेषेण महेश्वरि!

वशीकरणमन्यानि साधयेत् साधकोत्तमः॥ ७॥

हे देवी, महेश्वरी! श्रेष्ठ साधक इस मन्त्र से स्तम्भन, मोहन, क्षोभण, जृम्भण, द्रावण, त्रासन, विद्वेषण, उच्चाटन और विशेषकर स्त्रियों का आकर्षण तथा अन्य सबका वशीकरण करने में समर्थ होता है।

अग्निः स्तम्भति वायुश्च सूर्यो वारि-समूहकः।
कटाक्षेणैव सर्वाणि साधकस्य न चान्यथा!॥ ९॥

कटाक्ष मात्र से साधक अग्नि, सूर्य, वायु और जल-राशि—सभी को स्तम्भित कर देता है, इसमें सन्देह नहीं। हे प्राणप्रिये! इस मन्त्र का ज्ञाता कामदेव के समान जगत् को जीत लेता है। तीनों लोकों में उसके लिए कुछ भी असाध्य नहीं रहता।

जृम्भणान्तं त्यक्त-पाशं यात्रा-वारण-रोहकम्।
वाम-कर्ण-युतं देवि! नाद-बिन्दु-युतं पुनः॥ १०॥
एतत्तु त्रिगुणी-कृत्य कल्पवृक्ष-मनुं जपेत्।
एकः वापि द्वयं वापि चतुर्थ वा जपेत् सुधीः॥ ११॥

नाद-बिन्दु (ँ) से युक्त 'जृम्भणान्त' = 'त', 'यात्रा-वाराण' = 'र', 'वाम-कर्ण' = 'ई' अर्थात् 'त्रीं'—इस बीज को त्रिगुणीकृत करे—'त्रीं त्रीं त्रीं'। कल्पवृक्ष के समान इस मन्त्र का जप करें। बुद्धिमान् साधक एक, दो या चार बार इसका जप करें।

कामाख्या-साधनं कार्यं सर्व-विद्यासु साधकैः।
अन्यथा सिद्धि-हानिः स्याद् विघ्नस्तेषां पदे-पदे॥ १२॥
किं शाक्ता वैष्णवाः किं वा शैवा गाणपत्यकाः।
महा-मायाऽऽवृताः सर्वे तैल-यन्त्रे वृषा इव॥ १३॥
अस्याश्च साधनं देवि! शाक्तानामेव सुन्दरि!
नात्र चक्रविशुद्धिस्तु कालादिशोधनं न च॥ १४॥
कृते च नरकं याति सर्वं तस्य विनश्यति।
क्लेश-शून्यं परं देवि! साधनं द्रुत-पोषकम्॥ १५॥

सभी विद्याओं के साधकों को उक्त कामाख्या-मन्त्र की साधना करनी चाहिए, अन्यथा सिद्धि की हानि होती है और उनके पग-पग पर विघ्न होता

है। शाक्त, वैष्णव, शैव और गाणपत्य—सभी देवताओं के उपासक महामाया द्वारा उसी प्रकार नियन्त्रित रहते हैं, जिस प्रकार तेली का बैल। अत: हे देवी! उक्त मन्त्र की साधना शाक्तों के लिए आवश्यक है। इस मन्त्र की साधना में चक्रादि-शोधन या कालादि-शोधन की आवश्यकता नहीं है। जो इस मन्त्र के संबंध में शोधन-विचार करता है, उसका सबकुछ नष्ट हो जाता है और वह नरक में जाता है। हे देवी! इस मन्त्र की साधना में किसी प्रकार का कष्ट नहीं होता और इसके द्वारा शीघ्र ही सिद्धि प्राप्त होती है।

॥ इति श्रीकामाख्यातन्त्रे देवीश्वर-सम्वादे द्वितीय: पटल:॥

तृतीय: पटल:

काली-तारा मन्त्र-दान-काले चक्रादि-गणना-निषेध:

(काली-तारा के मन्त्र देने में चक्रादि-गणना का निषेध)

॥ श्रीदेव्युवाच ॥

काली-तारा-दाने चक्र-चिन्तां करोति य:।
का गतिस्तस्य देवेश! निस्तारो विद्यते न वा?॥ १॥

श्री देवी ने कहा—काली-तारा का मन्त्र देने में जो चक्र-विचार करता है, उसकी क्या दशा होती है? उसके उद्धार का क्या कोई उपाय नहीं है?

॥ श्रीशिव उवाच ॥

वयमग्निश्च कालोऽपि ये याता महेश्वरि!
किं ब्रूमो देव-देवशि! कालिका-तारिणी-मनुम्॥ २॥
अज्ञानाद् यदि वा मोहात् काली-तारा-मनौ प्रिये!
कृते चक्रादि-गणने शूनी-विष्ठा-कृमिर्भवेत्॥ ३॥
कल्पान्ते च महादेवी! निस्तारो विद्यते न च।
अस्या: पूजां प्रवक्ष्यामि त्रैलोक्य-साधन-प्रदाम्॥ ४॥
हठाद्धठाच्च देवेशि! या या सिद्धिश्च जायते।
प्राप्यते तत्क्षणेनेव नात्र कार्या विचारणा॥ ५॥

श्री शिव ने कहा—हे देव-देवेशि। हम (ब्रह्मा-विष्णु-शिव) और

अग्नि तथा काल भी एवं अन्य जो कुछ उत्पन्न हुआ है, वह सब महेश्वरी से ही उत्पन्न हुआ है। कालिका और तारिणी के मन्त्रों की महिमा मैं क्या बताऊँ! हे प्रिये! अज्ञान या मोहवश यदि कोई काली और तारा के मन्त्र-संबंध में चक्रादि गणना करता है, तो वह कुत्ते के मल में कीड़े का जन्म पाता है और हे महादेवी! कल्प के अन्त में भी उसे मोक्ष नहीं मिलता।

इन देवी की पूजा विधि कहूँगा, जो तीनों लोकों की सिद्धिदायिनी हैं। हे देवेशि! हठपूर्वक घोर साधना करने से जो-जो सिद्धि मिलती है, वह सब इस पूजा से क्षण मात्र में मिल जाती है, इसमें सन्देह नहीं।

सिन्दूर-मण्डलं कृत्वा त्रिकोणं च समालिखेत्।
निज-वीजानि तन्मध्ये योजयेत् साधकोत्तमः॥ ६॥
चतुरस्रं लिखेद् देवी! ततो वज्राष्टकं प्रिये!
अष्ट-दिक्षु यजेत् तां तु न्यास-जालं विधाय च॥ ७॥

सिन्दूर से वृत्त (मंडल) बनाकर त्रिकोण की रचना करें। उसके मध्य में स्वबीजों (त्रीं त्रीं त्रीं) को उत्तम साधक लिखें। तब चतुष्कोण बनाकर आठ वज्रों को अंकित कर न्यासों को कर आठ दिशाओं में उनकी पूजा करें।

अक्षोभ्यश्च ऋषिः प्रोक्तश्छन्दोऽनुष्टुबुदाहृतम्।
कामाख्या देवता सर्व-सिद्धये विनियोजिता॥ ८॥

कामाख्या मन्त्र के ऋषि अक्षोभ्य, छन्द अनुष्टप्, देवता कामाख्या और सर्वसिद्धि के लिए विनियोग है।

कराङ्ग-न्यासकं नैव निज-बीजेन कारयेत्।
षड्-दीर्घ-भाजां ध्यायेत्तु कामाख्यामिष्ट-दायिनीम्॥ ९॥

स्व-बीज (त्रीं) में छः दीर्घ स्वर लगाकर (त्रां, त्रीं, त्रूं, त्रैं, त्रौं, त्रः) कराङ्गन्यासादि करे। तब अभीष्टदायिनी कामाख्या देवी का ध्यान करें।

कामाख्या देवी का ध्यान

रक्त-वस्त्रां वरोद्युक्तां सिन्दूर-तिलकान्विताम्।
निष्कलङ्कां सुधा-धाम-वदन-कमलोज्जवलाम्॥ १०॥
स्वर्णादि-मणि-माणिक्य-भूषणैर्भूषितां पराम्।
नाना-रत्नादि-निर्माण-सिंहासनोपरि-स्थिताम्॥ ११॥

हास्य-वक्त्रां पद्मराग-मणि-कान्तिमनुत्तमाम्।
पीनोत्तुङ्ग-कुचां कृष्णां श्रुति-मूल-गतेक्षणाम्॥ १२॥
कटाक्षैश्च महा-सम्पद्-दायिनीं हर-मोहिनी।
सर्वाङ्ग-सुन्दरी नित्यां विद्याभिः परि-वेष्टिताम्॥ १३॥
डाकिनी-योगिनी-विद्याधरीभिः परि-शोभिताम्।
कामिनीभिर्युतां नाना-गन्धाद्यैः परि-गन्धिताम्॥ १४॥
ताम्बूलादि-कराभिश्च नायिकाभिर्विराजिताम्।
समस्त-सिद्ध-वर्गाणां प्रणतां च प्रतीक्षणाम्॥ १५॥
त्रिनेत्रां मोहन-करीं पुष्प-चापेषु विभ्रतीम्।
भग-लिङ्ग-समाख्यानां किन्नरभ्योऽपि नृत्यताम्॥ १६॥
वाणी लक्ष्मी सुधा वाक्य प्रतिवाक्य-समुत्सकाम्।
अशेष-गुण-सम्पन्नां करुणासागरां शिवाम्॥ १७॥

लाल वस्त्रधारिणी, द्विभुजा, सिन्दूरतिलक लगाए, निर्मल चन्द्रवत् उज्ज्वल एवं कमल के समान सुन्दर मुखवाली, स्वर्णादि के बने मणि-माणिक्य-जटित आभूषणों से शोभित, विविध रत्नों से बने सिंहासन पर बैठी हुई, हँस-मुखी, पद्मराग मणि जैसी आभा वाली, पीनोन्नत-पयोधरा, कृष्ण-वर्णा, कान तक फैले बड़े-बड़े नेत्रोंवाली, कटाक्ष मात्र से महदैश्वर्यदायिनी, शंकर-मोहिनी, सर्वांग-सुन्दरी, नित्या, विद्याओं द्वारा घिरी हुई, डाकिनी, योगिनी, विद्याधारी समूहों द्वारा शोभायमाना, सुन्दर स्त्रियों से विभूषिता, विविध सुगन्धादि से सुवासित देहवाली, हाथों में ताम्बूलादि लिए नायिकाओं द्वारा सुशोभिता और प्रति-नियत समस्त सिद्ध समूहों द्वारा वन्दिता, त्रिनेत्रा, सम्मोहन करनेवाली, पुष्पधनुषधारिणी, भग-लिंग-समाख्याता एवं किन्नरियों के समान नृत्यपरायणा देवी के अमृतमय वचनों को सुनने के लिए उत्सुका सरस्वती और लक्ष्मी से युक्ता देवी कामाख्या समस्त गुणों से सम्पन्ना, असीम दयामयी एवं मंगलरूपिणी हैं।

आवाहयेत् ततो देवीमेवं ध्यात्वा च साधकः।
पूजयित्वा यथोक्तेन विधानेन हरप्रिये!॥ १८॥

कुंकुमाद्यै रक्त-पुष्पैः सुगन्धि-कुसुमैस्तथा।
जवा-यावक-सिन्दूरैः करवीरैर्विशेषतः॥ १९॥
करवीरेषु देवेशि! कामाख्या तिष्ठति स्वयम्।
जवायां च तथा विद्धि मालत्यादि-समीप के॥ २०॥
करवीरस्य माहात्मयं कथितुं नैव शक्यते।
प्रदानात्तु जवायाश्च गाणपत्यमवाप्नुयात्॥ २१॥

उक्त प्रकार ध्यान कर कामाख्या देवी का आह्वान करें। तब हे शिवप्रिये! यथाशक्ति विधिपूर्वक उनकी पूजा करें। कुंकुम आदि लाल पुष्पों, सुगन्धित कुसुमों, जवा, यावक, सिन्दूर और विशेषकर करवीर पुष्पों से पूजन करें। हे देवेशि! करवीर पुष्पों में कामाख्या देवी स्वयं निवास करती हैं। जवा और मालती आदि सुगन्धित पुष्पों को भी वैसा ही समझें। करवीर पुष्प की महिमा कहना संभव नहीं है। जवा पुष्प को देने से साधक गणपतिस्वरूप बन जाता है।

पूजयेदम्बिकां देवीं पञ्चतत्त्वेन सर्वदा।
पञ्चतत्त्वं बिना पूजामभिचाराय कल्पयेत्॥ २२॥
पञ्चतत्त्वेन देव्यास्तु प्रसादो जायते क्षणात्।
पञ्चमेन महादेवी! शिवो भवति साधकः॥ २३॥

अम्बिका की पूजा सदैव पंचतत्त्वों से करें। पंचतत्त्वों के बिना पूजा व्यर्थ होती है। पंचतत्त्वों के द्वारा देवी की प्रसन्नता क्षणभर में हो जाती हैं। हे महादेवी! पंचमकारों से साधक शिव स्वरूप हो जाता है।

पञ्चतत्त्व समं नास्ति नास्ति किञ्चित् कलौ युगे।
पञ्चतत्त्वं परं ब्रह्म पञ्चतत्त्वं परा गति॥ २४॥
पञ्चतत्त्वं महादेवी! पञ्चतत्त्वं सदा शिवः।
पञ्चतत्त्वं स्वयं ब्रह्मा पञ्चतत्त्वं जनार्दनः॥ २५॥
पञ्चतत्त्वं भुक्ति-मुक्तिर्महायोगः प्रकीर्तितः।
पञ्चतत्त्वं विना नान्यत् शाक्तानां सुख-मोक्षयोः॥ २६॥

कलियुग में पंचतत्त्वों के समान कुछ भी नहीं है। पंचतत्त्व परब्रह्म स्वरूप हैं और श्रेष्ठ गतिदायक हैं। हे महादेवी! पंचतत्त्व स्वयं सदाशिव,

ब्रह्मा और विष्णु स्वरूप हैं। पंचतत्त्वों से भोग और मोक्ष दोनों मिलते हैं, अत: उनका साधन 'महायोग' कहा गया है। पंचतत्त्वों के बिना शाक्तों को सुख-भोग और मोक्ष नहीं मिलता।

पञ्चतत्त्वेन देवेशि! महापातक-कोटय:।
नश्यन्ति तत्क्षणेनैव तूल-राशिमिवानल:॥ २७॥
यत्रैव पञ्चतत्त्वानि तत्र देवी वसेद् ध्रुवम्।
पञ्चतत्त्व विहीने तु विमुखी जगदम्बिका॥ २८॥

हे देवशि! पंचतत्त्वों के प्रभाव से करोड़ों महापाप उसी प्रकार नष्ट हो जाते हैं, जिस प्रकार अग्नि रुई के ढेर को भस्म कर देती हैं। पंचतत्त्व जहाँ होते हैं, वहीं देवी निश्चय ही निवास करती हैं। पंचतत्त्व से रहित स्थान से जगदम्बिका दूर ही रहती हैं।

मद्येन मोदते स्वर्गे मांसेन मानवाधिप:।
मत्स्येन भैरवी-पुत्रो मुद्रया साधुतां व्रजेत्॥ २९॥
परेण च महादेवी! सायुज्यं लभते नर:।
भक्ति-युक्तो यजेद् देवीं तदा सर्वं प्रजायते॥ ३०॥

'मद्य' से स्वर्ग का आनन्द मिलता है, 'मांस' से राज्य प्राप्त होता है, 'मत्स्य' से भैरवी पुत्र की योग्यता मिलती है और 'मुद्रा' से साधुता आती है। परम तत्त्व 'पंचम' से, हे महादेवी! मनुष्य सायुज्य-मुक्ति को प्राप्त करता है। भक्तिपूर्वक देवी का अर्चन करे, तो यह सब लाभ होता है।

स्वयम्भू-कुसुमै: पुष्पै: कुण्ड-गोलोद्भवै: शुभै:।
कुंकुमाद्यैरासवेन चार्घ्यं देव्यै निवेदयेत्॥ ३१॥
नानोपहार-नैवेद्यैरन्नादि-पायसैरपि ।
वस्त्र-भूषादिभिर्देवि! प्रपूज्यावरणं यजेत्॥ ३२॥

स्वयम्भू-कुसुमों और कुण्ड-गोलोद्भव शुभ-पुष्पों से, कुंकुम आदि से और आसव से देवी को 'अर्घ्य' निवेदित करे। विविध उपहार, अन्नादि, खीर आदि नैवेद्यों से तथा वस्त्रों एवं आभूषणों आदि से देवी की पूजा कर आवरण-देवताओं का पूजन करें।

इन्द्रादीन् पूजयेत् तत्र तेषां यन्त्राणि शङ्करि!
पार्श्वयोः कमलां वाणीं पूजयेत् साधकोत्तमः॥ ३३॥
अन्नदा धनदा चैव सुखदा जयदा तथा।
रसदा मोहदा देवी! ऋद्धिदा सिद्धिदाऽपि च॥ ३४॥
वृद्धिदा शुद्धिदा चैव भुक्तिदा मुक्तिदा तथा।
मोक्षदा सुखदा चैव ज्ञानदा कान्तिदा तथा॥ ३५॥
एताः पूज्या महादेव्यः सर्वदा यन्त्र-मध्यतः।
डाकिन्याद्यास्तथा पूज्याः सिद्धयो यत्नतः शिवे!॥ ३६॥

वहीं इन्द्रादि दिक्पालों और उनके अस्त्रों की पूजा कर हे शंकरि! श्रेष्ठ साधक दोनों पार्श्वों में लक्ष्मी और सरस्वती की पूजा करें। हे देवी! यन्त्र के मध्य में अन्नदा, धनदा, सुखदा, जयदा, रसदा, मोहदा, ऋद्धिदा, वृद्धिदा, शुद्धिदा, भुक्तिदा, मुक्तिदा, मोक्षदा, सुखदा, ज्ञानदा, कान्तिदा—इन सोलह महादेवियों की सदा पूजा करें। साथ ही हे शिवे! यत्नपूर्वक डाकिनी आदि सिद्धियों की उसी प्रकार पूजा करें।

षडङ्गानि ततो देव्याः यजेत् पुष्पाञ्जलीन् क्षिपेत्।
यथाशक्ति जपेन्मन्त्रं शुद्धभावेन साधकः॥ ३७॥
जप समर्प्य वाद्यद्यैस्तोषयेत् पर-देवताम्।
पठेत् स्तोत्रं च कवचं प्रणमेद् विधिनाऽमुना॥ ३८॥

तब देवी के षडंगों की पूजा कर पुष्पांजलियाँ प्रदान करें और शुद्ध भाव से साधक यथाशक्ति मन्त्र का जप करें। जप समर्पित कर घण्टा-घड़ियाल बजाकर पर-देवता को प्रसन्न करें और स्तोत्र, कवच का पाठ कर विधि पूर्वक प्रणाम करें।

ततश्च हृदये देवी संयुज्य शेषिकां प्रति।
निक्षिपेदैशे त्रिकोणं परिकल्पयेत्॥ ३९॥
निर्माल्यं साधकैः सार्द्ध गृह्णीयाद् भक्ति-भावतः।
विहरेत् पञ्चतत्त्वेन यथा विधि स्व-शक्तितः॥ ४०॥

इसके बाद हृदयस्थ देवी को 'शेषिका' के प्रति उन्मुख कर ईशान कोण में त्रिकोण की कल्पना कर उस पर निर्माल्य छोड़े। साधकों के साथ

भक्तिपूर्वक निर्माल्य ग्रहण कर अपनी शक्ति के साथ पंचतत्त्वों से विहार करें।

शक्तिमूलं साधनं च शक्तिमूलं जपादिकम्।
शक्ति-मूला जपाश्चैव शक्तिमूलं च जीवनम्॥ ४१॥
ऐहिकं शक्तिमूलं च पारत्रं शक्ति-मूलकम्।
शक्तिमूलं तपः सर्वं चतुर्वर्गस्तथा प्रिये!॥ ४२॥

शक्ति ही साधना और जपादि का मूल है। शक्ति ही जीवन का मूल और वही इहलोक एवं परलोक का मूल है। शक्ति ही तप का मूल है और हे प्रिये! चारों वर्गों–धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष का भी मूल है।

शक्ति-मूलानि सर्वाणि स्थावराणि चराणि च।
अज्ञात्वा पापिनो देवी! रौरवं यान्ति निश्चितम्॥ ४३॥
तस्मात् सर्व-प्रयत्नेन साधकैश्च शिवाज्ञया।
शक्त्युच्छिष्टं पीयते हि नान्यथा यान्ति रौरवम्॥ ४४॥

जड़ और जंगम—सभी का मूल शक्ति है। हे देवी! इस तथ्य को न समझकर पापी लोग निश्चित रूप से भयानक नरक में जाते हैं। इसलिए भगवान् शिव की आज्ञा के अनुसार साधक प्रयत्न करके शक्ति का जूठा द्रव्य पीते हैं अन्यथा रौरव नरक में जाते हैं।

शक्त्यै यद्-दीयते देवी! तत् तु देवार्पितं भवेत्।
सफलं कर्म तत् सर्वं सत्यं सत्यं कुलेश्वरि!॥ ४५॥
शक्ति बिना कलौ चक्रं करोति कारयेदपि।
स याति नरकं घोरं निस्तारो नहि विद्यते॥ ४६॥

हे देवी! शक्ति को जो कुछ दिया जाता है, वह देवता को ही अर्पित होता है। जिन उद्देश्यों से वह सब दिया जाता है, हे कुलेश्वरि! वे सभी सफल होते हैं, यह सर्वथा सत्य है। शक्ति के बिना कलियुग में जो चक्रार्चन करता या करवाता है, वह घोर नरक में जाता है, उसके मोक्ष का उपाय नहीं है।

एवं तु पूजयेद् देवीं यं यं चोद्दिश्य साधकः।
तं तं कामं करे कृत्वा प्रिये! जयति निश्चितम्॥ ४७॥

पुरश्चरणकाले तु लक्षमेकं जपेत् सुधीः।
तद्-दशांशं हुनेदाज्यैः शर्करा-मुध-पायसैः॥ ४८॥
तर्पयेत् तद्-दशांशैश्च जलैश्चन्दन-मिश्रितैः।
गन्धद्यैः साधकाधीशस्तद्-दशैरभिषेचयेत्॥ ४९॥
अभिषेक-दशांशेन भोजयेच्च द्विजोत्तमान्।
मिष्ठान्नैः साधकान् देवी! देवी-भक्तांश्च पञ्चमैः॥ ५०॥
एवं पुरस्क्रियां कृत्वा सिद्धो भवति साधकः।
प्रयोगेषु ततो देवी! योग्यो भवति निश्चितम्॥ ५१॥

हे प्रिय! जिस-जिस कामना के लिए उक्त प्रकार जो देवी की पूजा करता है, वह उस-उस कामना को हस्तगत कर निश्चय ही विजय प्राप्त करता है। पुरश्चरणकाल में बुद्धिमान् साधक को एक लाख 'जप' करना चाहिए और उसका दशांश 'हवन' घृत, शर्करा, मधु-युक्त खीर द्वारा करना चाहिए। उसका दशांश 'तर्पण' चन्दनयुक्त जल से करना चाहिए। उसका दशांश गन्धादि द्वारा 'अभिषेक' करना चाहिए। 'अभिषेक' का दशांश उत्तम द्विजों को मिष्ठानों द्वारा और देवी-भक्तों को पंचतत्त्वों द्वारा भोजन कराना चाहिए। इस प्रकार पुरश्चरण की क्रिया कर साधक सिद्ध हो जाता है। हे देवी! तब वह प्रयोगों के करने में निश्चित रूप से सक्षम हो जाता है।

एतत् पूजादिकं सर्वं कामाख्या-प्रीति-कारकम्।
महा-प्रीति-करी पूजा योनि-चक्रे कुलेश्वरि!॥ ५२॥
योनिपूजा महापूजा तत्समा नहि सिद्धिदा।
तत्र देवीं यजेद् धीमान् सैव देवी न चान्यथा॥ ५३॥
आवाहनादि-कर्माणि च तत्र सर्वथा प्रिये!
लेपयेत् तां तु गन्धाद्यैः पूजयेद् विविधेन च॥ ५४॥
महाप्रीतिर्भवेद् देव्याः सिद्धो भवति तत्क्षणात्।
योनि-पूजा-समा पूजा नास्ति ज्ञाने तु मामके॥ ५५॥

हे कुलेश्वरि! यह सारा पूजनादि कामाख्या को प्रसन्न करता है। 'त्रिकोण-यन्त्र' में की गई पूजा से भगवती अत्यधिक प्रसन्न होती हैं। हे प्रिये! उसमें आवाहनादि सभी कर्म कर उस पर विविध प्रकार के गन्धादि का

लेप करें। इससे देवी को अत्यन्त प्रसन्नता होती है और साधक शीघ्र ही सिद्ध हो जाता है। मेरे ज्ञान में 'त्रिकोण' पूजा के समान अन्य कोई पूजा नहीं है।

चुम्बनाल्लेहनाद् योनेः कल्पवृक्षमतिक्रमेत्।
दर्शनात् साधकाधीशः स्पर्शनात् सर्वमोहनः॥ ५६॥
लिङ्ग-योनि-समाख्यानं कामाख्या-प्रीति-वर्द्धनम्।
तदेव जीवनं तस्या गिरिजे! बहुत किं वचः॥ ५७॥
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन योनि-पूजां समाचरेत्।
परस्त्री योनिमासाद्य विशेषेण यजेत् सुधीः॥ ५८॥
वेश्या-योनिः परा देवी! साधनं तत्र कारयेत्।
त्रिरात्रादेव सिध्यन्ति नात्र कार्या विचारणा॥ ५९॥
ऋतुयुक्तं लतामध्ये साधयेद् विधि-वन्मुदा।
अचिरात् सिद्धिमाप्नोति देवानामपि दुर्लभाम्॥ ६०॥
सारात् सार-तरं देवी! योनि-साधनमीरितम्।
विना तत्-साधनं देवी! महाशापः प्रजायते॥ ६१॥
योनि-निन्दां घृणां देवी! यः करोति नराधमः।
अचिराद् रौरवं याति देवी! सत्यं शिवाज्ञया॥ ६२॥
योनि-मध्ये वसेद् देवी योगिन्यश्चिकुरे स्थिताः।
त्रिकोणा च त्रयो देवाः शिव-विष्णु-पितामहाः॥ ६३॥
तस्मान्न निन्दयेद् योनिं यदीच्छेदात्मनो हितम्।
योनि-निन्दां प्रकुर्वाणः स-वंशेन विनश्यति॥ ६४॥
योनि-स्तुति-तरो देवी! शिवः स्यात् तत्क्षणेन च।
शैवानां वैष्णवानां च शाक्तानां च विशेषतः॥ ६५॥
किं ब्रूमो योनि-माहात्म्यं योनि-पूजा-फलानि च,
चांचल्याद् गदितं किंचित् क्षंतव्यं काम-रूपिणि॥ ६६॥

श्लोक ५६ से ६६ तक के श्लोकों को अर्थ हिन्दी में व्याख्या करना उचित नहीं है। उसके अनुसार पूजन करने का अधिकार भी सबको नहीं है। जो चाहें, वे इसका भावार्थ अपने गुरुदेव से समझ सकते हैं। या इस पुस्तक के लेखक से सम्पर्क करके इस विषय में अधिक जानकारी ले सकते हैं।

॥ इति श्रीकामाख्या-तन्त्रे देवीश्वर-सम्वादे तृतीयः पटलः॥

चतुर्थः पटलः

कामाख्या-मन्त्रः

(कामाख्या देवी का मन्त्र)

वर-मन्त्रं प्रवक्ष्यामि सादरं शृणु पार्वति!
यस्य प्रसाद-मात्रेण ब्रह्म-विष्णु-शिवा अपि॥ १॥
इन्द्राद्याः देवताः सर्वा भवन्ति कामना-युताः।
गन्धर्वाः किन्नरा देवि! तथा विद्याधरादयः॥ २॥
यत्-प्रसादं समागत्य स्वकीय-विषयान्विताः।
योगिनी डाकिनी विद्या भैरवी नायिकाऽऽदिकाः॥ ३॥
कामाख्या-मन्त्रमासाद्य भजन्ति योग्यतां पराम्।
स्वर्गे मर्त्ये च पाताले ये ये सिद्धयन्ति साधकाः॥ ४॥

हे पार्वती! श्रेष्ठ मन्त्र बताऊँगा, जिसके प्रसाद से ब्रह्मा, विष्णु, शिव भी और इन्द्रादि सभी देवता कामनापूर्ण होते हैं। हे देवी! गन्धर्व, किन्नर और विद्याधर आदि तथा योगिनी, डाकिनी, भैरवी, नायिका आदि विद्याएँ जिसके प्रसाद से आकर अपने विषय को पूर्ण करती हैं। इस कामाख्या मन्त्र को पाकर स्वर्ग, मृत्यु-लोक और पाताल में जो-जो सिद्ध साधक हैं, वे श्रेष्ठ योग्यता को प्राप्त करते हैं। उसे आदर सहित सुनो।

निज-बीज-त्रयं देवी! क्रोध-द्वयमतः परम्।
वधू-बीज-त्रयं चैव कामाख्ये च पुनर्वदेत्॥ ५॥
प्रसीदेति पदं चैव पूर्व-बीजानि कल्पयेत्।
ठ-द्वयान्ते मनुः प्रोक्तः सर्व-तन्त्रेषु दुर्लभः॥ ६॥

(त्रीं त्रीं त्रीं हूँ हूँ स्त्रीं स्त्रीं कामाख्ये! प्रसीद स्त्रीं स्त्रीं हूँ हूँ त्रीं त्रीं त्रीं स्वाहा)

हे देवी! अपने तीन बीज (त्रीं त्रीं त्रीं), उसके बाद दो 'क्रोध-बीज' (हूँ हूँ) और तीन 'वधू-बीज' (स्त्रीं स्त्रीं स्त्रीं), फिर 'कामाख्ये' कहना चाहिए, तब 'प्रसीद' शब्द और पूर्वोक्त बीजों की पुनः कल्पना करनी चाहिए। अन्त में 'दो ठ' (स्वाहा)—यह सभी तन्त्रों में दुर्लभ मन्त्र कहा गया है।

प्रणवाद्या महादेवी! त्रैलोक्ये चाति-दुर्लभा।
चतुर्वर्गप्रदा साक्षान्महापातकनाशिनी॥ ७॥
स्मरणादेव मन्त्रस्य सर्वे विघ्नाः समाकुलाः।
नश्यन्ति दहने दीप्ते पतङ्गा इव पार्वति!॥ ८॥

हे महादेवी! उक्त मन्त्र के आदि में 'प्रणव' (ॐ) लगाने से यह चारों वर्ग (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) देनेवाली, महापापों को नष्ट करनेवाली साक्षात् देवी-स्वरूप बन जाता है। हे पार्वति! इस मन्त्र का स्मरण करते ही सभी विघ्न उसी प्रकार नष्ट हो जाते हैं, जैसे अग्नि में पतंगे जलकर भस्म हो जाते हैं।

मन्त्र ग्रहण मात्रेण जीवन्मुक्तो भवेन्नरः।
भुक्ति मुक्ती करे तस्य सर्वेषां प्रियतां व्रजेत्॥ ९॥
आवृणोति स्वयं लक्ष्मीर्वदने गीः सदा वसेत्।
पुत्राः पौत्राः प्रपौत्राश्च भवन्ति चिर-जीविनः॥ १०॥

मन्त्र लेते ही मनुष्य जीवन्मुक्त हो जाता है। भोग और मोक्ष उसके हाथ में आ जाते हैं और वह सबका प्रिय बन जाता है। स्वयं लक्ष्मी उसे वरण कर लेती हैं और सरस्वती उसके मुख में निवास करती हैं तथा उसके पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र चिरंजीवी होते हैं।

पृथिव्यां सर्वपीठेषु कामाख्यादिषु शङ्किरि!
लिपिश्चलति तस्यैव नात्र कार्या विचारणा॥ ११॥
तस्य नाम च संस्मृत्य प्रणमन्ति सदा जनाः।
नाम श्रुत्वा वारमेकं पलायन्ते च हिंस्रकाः॥ १२॥

हे शंकरि! पृथ्वी पर कामाख्या आदि सभी पीठों में उसी का लेख प्रचलित होता है, इसमें कोई सन्देह नहीं। उसके नाम का स्मरण कर सुयोग्य लोग प्रणाम करते हैं और उस नाम को सुनते ही हिंसक प्राणी खड़े होते हैं।

यावत्यः सिद्धयः सन्ति मर्त्ये रसातले।
साधकानां परिचर्यां कुर्वन्ति नात्र संशयः॥ १३॥
तं दृष्ट्वा साधकेन्द्रं च वादी स्खलति दर्शनात्।
सभायां कोटिसूर्याभं पश्यन्ति सर्वसज्जनाः॥ १४॥

स्वर्ग, मृत्युलोक और पाताल में जितनी सिद्धियाँ हैं, वे सभी साधकों की सेवा करती हैं, इसमें सन्देह नहीं। उस साधकेन्द्र को देखकर शास्त्रार्थ करनेवाला कुण्ठित हो जाता है और सभा में सभी सज्जन उसे करोड़ों सूर्य के समान तेजस्वी देखते हैं।

जिह्वा-कोटि-सहस्रैस्तु वक्त्र-कोटि-शतैरति।
वर्णितुं नैव शक्नोमि मन्त्रमेतन्महेश्वरि!॥ १५॥
न्यास-पूजादिकं सर्व पूर्वक्तं वरानने!
पुरश्चर्याविधौ किन्तु षट्सहस्रं मनुं जपेत्॥ १६॥
यथाविधि षट्शतानि होमादींश्च समाचरेत्।
सिद्धो भवति मन्त्रज्ञः प्रयोगेषु ततः क्षमः॥ १७॥

हे महेश्वरी! करोड़ों हजार जीभों से और करोड़ों सैकड़े मुखों से भी इस मन्त्र की महिमा का वर्णन मैं नहीं कर सकता। हे वरानने! इसके न्यास, पूजन आदि सभी बातें पहले कही जा चुकी हैं किन्तु इसके पुरश्चरण में मन्त्र का जप छः हजार करना चाहिए। यथा विधि छः सौ होमादि करना चाहिए। इससे साधक को मन्त्र सिद्ध होता है और तब वह इसका प्रयोग करने में समर्थ होता है।

ध्यानं शृणु महादेव्या धन-धान्य-सुत-प्रदम्।
दारिद्रय-हननं देवी! क्षणेनैव न चान्यथा॥ १८॥

हे देवी! महादेवी का ध्यान सुनो, जो धन-धान्य और पुत्रदायक है तथा क्षणभर में ही दरिद्रता का नाश कर देता है, इसमें सन्देह नहीं।

कामाख्याः ध्यानम्
(कामाख्या देवी का ध्यान)

अति-सुललित-वेशां हास्य-वक्त्रां त्रिनेत्राम्,
जित-जलद-सुकान्तिं पट्ट-वस्त्र-प्रकाशाम्।
अभय-वर-कराढ्यां रत्न-भूषति-भव्याम्,
सुर-तरु-तल-पीठे रत्न-सिंहासनस्थाम्॥ १९॥
हरि-हर-विधि-वन्द्यां बुद्धि-वृद्धि-स्वरूपाम्,
मदन-शर-समाक्तां कामिनीं काम-दात्रीम्।

निखिल-जन-विलासोल्लास-रूपां भवानीम्,
कलि-कलुष-निहन्त्रीं योनि-रूपां भजामि॥ २०॥

मैं योनिरूपा भवानी का भजन करता हूँ, जो कलिकाल के पापों का नाश करती हैं और समस्त लोगों को भोगविलास के उल्लास से पूर्ण कर देती हैं। वे अत्यन्त सुन्दर केशवाली, हँसमुखी हैं, त्रिनेत्रा हैं और उनकी सुन्दर कान्ति के आगे मेघों की छवि भी फीकी पड़ जाती है। रेशमी वस्त्रों से वे प्रकाशमान हैं। उनके हाथ अभय और वर मुद्राओं से युक्त हैं। रत्न-जटित आभूषणों से वे बड़ी भव्य हैं। देव-वृक्ष के नीचे पीठ पर रत्न-जटित सिंहासन पर वे विराजमान हैं। ब्रह्मा, विष्णु, महेश द्वारा वन्दिता वे बुद्धि वृद्धिस्वरूपा हैं। कामदेव के मनोमोहक बाण के समान वे अत्यन्त कमनीयता एवं सभी की कामनाओं को पूर्ण करनेवाली हैं।

गुह्याद्-गुह्यतरं देवी! ध्यानं दारिद्रय-नाशकम्।
गोपितं सर्व-तन्त्रेषु तव भावात् प्रकाशितम्॥ २१॥

हे देवी! यह ध्यान गुप्त से भी गुप्त है और दरिद्रता का नाशक है। सभी तन्त्रों में यह गुप्त है। तुम्हारे प्रेम से मैंने प्रकट किया है।

साधना-पद्धतिः (साधना की पद्धति)

स्वयम्भू-कुसुमेनैव तिलकं परिकल्य च।
तूलिकायां महादेवी! कुल-शक्ति समाविंशेत्॥ २२॥
कर्पूरित-मुखः स्वादु साधकश्चुम्बयन्मुदा।
तस्याधरो यथा भृङ्गों नीरज-व्याकुलः प्रिये!॥ २३॥
दन्त-क्षति-वितानां च परमं तत्र कारयेत्।
आलिङ्गयेन्मदोन्मतः सुदृढं कुच-मर्दनम्॥ २४॥
नखाघातैर्नितम्बे च रमयेद् रति-पण्डितः।
पुनः पुनश्चुम्बनं च यौनौ कुर्यात् कुलेश्वरी!॥ २५॥
शुक्रं तु स्तम्भयेद् वीरो यौनौ लिङ्गं प्रवेशयेत्।
आघातैस्तोषयेत् तां तु सन्धान-भेदतः प्रिये!॥ २६॥
ततो लिङ्गे स्थिते यौनौ आज्ञां तस्याः प्रगृह्य च।
अष्टोत्तर-शतं मन्त्रं जपेद् होमादि-कांक्षया॥ २७॥

दिन-त्रयं महा-धीरः प्रजपेद् ध्यान-तत्परः।
प्राप्यते मानस वस्तु नात्र कार्या विचारणा॥ २८॥
ऋतु-युक्त-लतां देवी! निवेश्य तूलिकोपरि।
करवीर-प्रसूनं च तस्या लिङ्गोपरि न्यसेत्॥ २९॥
तद् वीक्ष्य देव-देवेशि! जपेच्चाष्ट-सहस्रकम्।
दिन-त्रयं ततो देव्याः प्रीतिः स्यादचला प्रिये!॥ ३०॥
धनं विन्दति तस्यैव लक्ष-संख्यं न संशयः।
आनन्दं वर्द्धयेन्नित्यं साधकस्य महात्मनः॥ ३१॥
अष्टोत्तर-शतं योनिं संचुम्ब्य पूज्य सज्जनः।
पुनर्लिङ्गे स्थिते योनौ जपेच्चाष्ट-सहस्रकम्॥ ३२॥
कांक्षा-पञ्च-गुणं वित्तं प्राप्यते सर्वदा सुखी।
नित्यं तस्य महेशानि! नायिका-सङ्गमो भवेत्॥ ३३॥
वेश्या-लतां समानीय कुल-चक्र विधाय च।
तस्या योनौ यजेद् देवीं हृष्ट-चित्तेन साधकः॥ ३४॥
भग-लिंङ्ग-समाख्यानं सु-स्वरेण समुच्चरेत्।
योनिं वीक्ष्य जपेन्मन्त्रं सप्त-रात्रमतन्द्रितः॥ ३५॥
प्रत्यहं सततं कृत्वा सोऽपि सिद्धीश्वरः कलौ।
आज्ञां गृह्णाति धनदस्तस्य देवी! न संशयः॥ ३६॥
सद्गुरोः स्मरणं कृत्वा योनेश्च साधनं यदि।
तदा सिद्धिमवाप्नोति चान्यथा हास्यमेव हि॥ ३७॥

श्लोक २२ से ३७ तक उक्त मन्त्र की साधना का वर्णन है, जो सर्वसाधारण के लिए नहीं है। जो विस्तार से जानकारी चाहें वे लेखक से सम्पर्क कर सकते हैं।

॥ इति श्रीकामाख्या-तन्त्रे देवीश्वर-संवादे चतुर्थः पटलः॥

पंञ्चमः पटलः

श्रीगुरु-तत्त्वम्

(श्रीगुरु का रहस्य)

॥ श्रीदेव्युवाच ॥

गुरु-तत्त्वं महादेव! विशेषेण वद प्रभो!
दुर्वहा गुरुता यातुं सम्भवेन्मानुषे कथम्॥ १॥
तत्रैव सद्गुरुः को वा श्रेष्ठः को वा वद प्रभो!
दूरीकुरु महादेव! संशयो मे महोत्कटम्॥ २॥

श्री देवी बोलीं—हे प्रभो महादेव! गुरुतत्त्व को विशेष रूप से बताइए। हे देव! गुरुत्व को वहन करना बड़ा कठिन है। मनुष्य में यह कैसे आता है? वहीं सद्गुरु या श्रेष्ठ गुरु कौन है, यह भी हे प्रभो! बताइए। हे महादेव! मेरे इस घोर सन्देह को दूर करिए।

इति देव्याः वचं श्रुत्वा प्रोवाच शंकरः प्रभुः।
शृणु सारतरं ज्ञानं साधूनां हितकारणम्॥ ३॥
गुरुः सदाशिवः प्रोक्त आदि-नाथ स उच्यते।
महाकाल्या युतो देवः सच्चिदानन्द-विग्रहः॥ ४॥

देवी की बात सुनकर भगवान शंकर ने कहा—सज्जनों के लिए हितकारक श्रेष्ठ सारपूर्ण ज्ञान सुनो। सदाशिव ही गुरु कहे गए हैं। वे आदिनाथ कहलाते हैं। महाकाली से युक्त वे देव सच्चिदानन्द-स्वरूप हैं।

सनातनः परंब्रह्म श्रीधर्मस्त्रिगुणः प्रभुः।
त्वत्प्रसादान्महादेवी! शिवोऽहमजरामरः॥ ५॥
अतएव गुरुर्नैव मनुजः किंतु कल्पना।
दीक्षायै साधकानां वृक्षादौ पूजनं यथा॥ ६॥

हे महामाये! उन्हीं के प्रसाद से मैं शिव अजर और अमर हूँ। वे आदिनाथ सनातन परब्रह्म हैं, वे श्री धर्म और तीनों गुणों के प्रभु हैं। अतः मनुष्य 'गुरु' नहीं हैं, किन्तु उनकी भावना मात्र हैं। जैसे साधकों की दीक्षा में वृक्षादि में पूजन किया जाता है।

अतएव महेशानि! कुतो हि मानुषो गुरुः?
मानुषी गुरुता देवी! कल्पना न तु तथ्यता॥ ७॥
मन्त्र-दाता शिरः-पद्मे यद् ध्यानं कुरुते गुरोः।
तद् ध्यानं शिष्य-शिरसि चोपदिष्टं न चान्यथा॥ ८॥

अतएव महेश्वरि! मनुष्य गुरु कहाँ है? मनुष्य की 'गुरुता' तो भावना ही है। हे देवी! उसमें वास्तविकता नहीं है। मन्त्र देनेवाला अपने शिरस्थ कमल में गुरु का जो ध्यान करता है उसी ध्यान को वह शिष्य के सिर में उपदिष्ट करता है। अन्य कोई बात नहीं है।

अखण्ड-मण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥ ९॥
प्रसिद्धमिति यद् देवी! तत्-पदं दर्शको नरः।
अतएव नरे देवी! गुरुता कल्पनैव हि॥ १०॥

अखण्डमण्डलाकार चराचर जगत् जिसके द्वारा व्याप्त है, उस सचिदानन्द ब्रह्म के पद को जो दिखाता है, उस श्रीगुरु को नमस्कार है—यह जो वन्दना प्रसिद्ध है, उससे स्पष्ट है कि सच्चिदानन्द ब्रह्मपद को दिखानेवाला मनुष्य गुरु है, अतः हे देवी! मनुष्य में 'गुरुता' को कल्पना ही की जाती है।

न तु गुरुः स्वयं च मूर्खता चोभयोरपि।
अयं गुरुरिति ज्ञानं शिष्योऽयं खलु मे सदा॥ ११॥
दर्शका पटलस्यैव न स्वयं मानुषो गुरुः।
मोक्षो न जायते सत्यं मानुषे गुरु-भावनात्॥ १२॥

न तो गुरु और न स्वयं शिष्य—दोनों की यह मूर्खता ही है कि सदा वे यही निश्चयपूर्वक समझते हैं कि यह मनुष्य 'गुरु' है और यह 'शिष्य'। वस्तुतः मनुष्य मात्र दिखानेवाला है, स्वयं 'गुरु' नहीं है। इस प्रकार मनुष्य में गुरु की भावना रखने से मोक्ष नहीं मिलता है, यह सत्य है।

यथा भोक्तरि भोज्यं हि स्वर्णादि-पात्रकेन च।
दीयते च तथा देवी! तस्मै सर्वं समर्पणम्॥ १३॥
यदि निन्द्यं च तत् भग्नं वापि महेश्वरि!
तदा त्यजेत् तु तत्-पात्रमन्य-पात्रेण तोषयेत्॥ १४॥

अतो हि मनुजं लुब्धं दुष्टं शिष्योऽपि सन्त्यजेत्।
असम्मतस्तु लोकैर्यस्तत्र रुष्टः सदाशिवः॥ १५॥

हे देवी! जैसे खानेवाला को भोजन स्वर्णादि-पात्र में दिया जाता है, वैसे ही मन्त्र द्वारा सबकुछ ब्रह्म को समर्पित किया जाता है। हे कुलेश्वरी! यदि उस पात्र को निन्दनीय या टूटा हुआ पाया जाता है, तो उसे त्याग कर अन्य पात्र में भोजन देकर खानेवाले को सन्तुष्ट किया जाता है। उसी प्रकार लालची, दुष्ट मनुष्य शिष्य को पाकर उसे भी छोड़ देना चाहिए क्योंकि संसार में जो निन्दनीय है, उसे मन्त्र देने से सदाशिव रूष्ट होते हैं।

राजस्वं दीयते राज्ञे प्रजाभिर्मण्डलादिभिः।
तथा तथैव तस्मै तु शिष्य-दानं समर्पणम्॥ १६॥
अत्रैव ग्राहका हिंस्रा मण्डलाद्याः स्मृता यदि।
अन्य-द्वारेण दातव्यं तांस्तान् सन्त्यज्य सर्वदा॥ १७॥

राजा को जैसे राजत्व और प्रजाओं को मण्डलसमूह का दान जिस प्रकार कल्याणकारी होता है, उसी प्रकार शिष्य को मन्त्रदान श्रेयस्कर होता है। मण्डलादिदान के क्षेत्र में जैसे हिंस्र दान-ग्रहीता को छोड़कर अन्य उपयुक्त पात्र को ही दान दिया जाता है, उसी प्रकार अन्य क्षेत्रों में—ज्ञान देते समय भी उसी नियम को माना जाता है।

सर्वेषां भुवने सत्यं ज्ञानाय गुरु-सेवनम्।
ज्ञानान्मोक्षमवाप्नुयात् तस्मात् ज्ञानं परात्परम्॥ १८॥
अतो यो ज्ञान-दाने हि न क्षमस्तं त्यजेद् गुरुम्।
अन्नाकांक्षी निरन्नं च यथा सन्त्यजति प्रिये!॥ १९॥

सभी लोकों में सत्य ज्ञान की प्राप्ति के लिए ही गुरु की सेवा की जाती है। ज्ञान से मोक्ष मिलता है, अतः ज्ञान ही सर्वश्रेष्ठ है। इसलिए जो ज्ञान देता है, उसी का आश्रय गुरु-रूप में लिया जाता है। अन्न का इच्छुक अन्नहीन को छोड़ देता है, वैसे ही ज्ञानेच्छु ज्ञानहीन का त्याग करता है।

ज्ञान-त्रयं यदा भाति स गुरुः शिव एव हि।
अज्ञानिनं वर्जयित्वा शरणं ज्ञानिनो व्रजेत्॥ २०॥
ज्ञानाद्, धर्मो भवेन्नित्यं ज्ञानादर्थो हि पार्वति!

ज्ञानात् काममवाप्नोति ज्ञानान्मोक्षो हि निर्मलः॥ २१॥

जिस व्यक्ति में ज्ञानत्रय का प्रकाश होता है, वही गुरु है, शिवस्वरूप ही है। अज्ञानी को छोड़कर ज्ञानियों को ही शरण लेनी चाहिए। हे पार्वती! ज्ञान से ही सदा 'धर्म' होता है, ज्ञान से 'अर्थ' मिलता है, ज्ञान से 'काम' की प्राप्ति होती है और ज्ञान से ही निर्मल 'मोक्ष' मिलता है।

ज्ञानं हि परमं वस्तु ज्ञानात् सार-तरं नहि।
ज्ञानाय भजते देवं ज्ञानं हि तपसः फलम्॥ २२॥
मधु-लुब्धो यथा भृङ्गः पुष्पात् पुष्पान्तरं व्रजेत्।
ज्ञान-लुब्धस्थतथा शिष्यो गुरोर्गुर्वन्तरं व्रजेत्॥ २३॥

ज्ञान ही श्रेष्ठ वस्तु है। ज्ञान से श्रेष्ठ कुछ नहीं है। ज्ञान के लिए ही देवता की उपासना की जाती है। ज्ञान ही तपस्या का फल है। जैसे मधु की इच्छा से भौंरा एक फूल से दूसरे फूल पर जाता है, वैसे ही ज्ञान के इच्छुक शिष्य को एक गुरु से दूसरे गुरु के पास जाना चाहिए।

गुरवो बहवः सन्ति शिष्य-वित्तापहारकः।
दुर्लभः सद्-गुरुर्देवि! शिष्य सन्ताप-हारकः॥ २४॥
अज्ञान-तिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जन-शलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥ २५॥

शिष्य का धन लेनेवाले गुरु बहुत हैं किन्तु हे देवी! शिष्य के दुःख को दूर करनेवाले सद्गुरु दुर्लभ हैं। ज्ञानरूपी अञ्जन को सलाई से अज्ञान रूपी अन्धेपन को दूर कर जो आँखें खोल देते हैं अर्थात् ज्ञान प्रदान करते हैं, उन श्रीगुरुदेव को नमस्कार है।

इति मत्वा साधकेन्द्रों गुरुतां कल्पयेत् सदा।
ज्ञानिन्येव शिष्य-भक्तया केवलं कल्पना शिवे!॥ २६॥
शान्तो दान्तः कुलीनश्च शुद्धान्तकरणः सदा।
पञ्च-तत्त्वार्चको यस्तु सद्गुरुः स प्रकीर्तितः॥ २७॥

उक्त बात को समझकर ही साधक को सदा 'गुरुता' की भावना करनी चाहिए। हे शिव! ज्ञानी लोगों में ही भक्त शिष्यों की 'गुरुत्व' की कल्पना होती है। शान्त, संयमी, कुलीन, सदा शुद्ध अन्तःकरण और पंचतत्त्वों से

अर्चन करनेवाला जो ज्ञानी है, वही 'सद्गुरु' कहा गया है।

सिद्धोऽसाविति चेत् ख्यातो बहुभिः शिष्य-पालकः।
चमत्कारी दैव-शक्तया सद्-गुरुः कथितः प्रिये!॥ २८॥
अश्रुतं सम्मतं वाक्यं व्यक्ति साधु मनोहरम्।
तन्त्रं मन्त्रं समं वक्ति य एव सद्-गुरुश्च सः॥ २९॥

बहुत से शिष्यों को आश्रय देने से 'वह सिद्ध हैं'—ऐसी ख्याति प्राप्त करते हैं। हे प्रिये! दैवी शक्ति से चमत्कारपूर्ण 'सद्गुरु' कहलाते हैं। जो मनोहर, हितकारी, अभूतपूर्व, तर्कसम्मत बातें करते हैं और तन्त्र-मन्त्र से युक्त कथन करते हैं, वे ही 'सद्गुरु' हैं।

सदा यः शिष्य-बोधेन हिताय च समाकुलः।
निग्रहानुग्रहे शक्तः सद्-गुरुर्गीयते बुधैः॥ ३०॥
परमार्थे सदा दृष्टिः परमार्थ प्रकीर्तितम्।
गुरु-पादाम्बुजे भक्तिर्यस्यैव सद्-गुरुः स्मृतः॥ ३१॥

जो सदैव शिष्य के उद्बोधन और कल्याण के लिए उत्सुक रहते हैं तथा अनुशासन करने में एवं कृपा करने में समर्थ होते हैं, वे ही 'सद्गुरु' हैं। जिनकी दृष्टि सदा परमार्थ पर रहती है, गुरुचरणकमलों में जो सदैव आसक्त रहते हैं, वे ही 'सद्गुरु' माने जाते हैं।

इत्यादि गुण-सम्पत्ति दृष्टवा देवी! गुरुं व्रजेत्।
त्यक्त्वाऽक्षमं गुरुं शिष्यो नात्र काल विचारणा॥ ३२॥
केवलं शिष्य-सम्पत्तिर्ग्राहको बहु-याचकः।
व्यङ्गितश्च समक्षे यो लोकैर्निन्द्यो गुरुर्यतः॥ ३३॥

हे देवी! असमर्थ मानव गुरु को छोड़कर, उक्त गुणों को देखकर शिष्य को योग्य 'गुरु' के पास जाना चाहिए, इसमें कोई शंका की बात नहीं है। केवल शिष्य की सम्पत्ति के ग्राहक और माँगनेवाले बहुत से गुरु होते हैं, जो लोगों द्वारा व्यंग्य से गुरु कहे जाते हैं तथा निन्दनीय होते हैं तथा निन्दनीय होते हैं।

कायेन मनसा वाचा शिष्यो भक्ति-युतं यदि।
दृष्ट्वाऽनुमोदनं नास्ति यस्य तद्-वस्तु कामतः॥ ३४॥

कर्मणा गर्हितेनैव हन्ति शिष्य-धनादिकम्।
शिष्य-हितैषिणं लोक वर्जयेत तं नराधमम्॥ ३५॥

शरीर, मन और वाणी से यदि कोई शिष्य भक्तियुक्त है, तो उसे देखकर जो गुरु उससे किसी वस्तु की कामना करता है और उसे सान्त्वना नहीं देता, तो वह निन्दित होता है। जो गर्हित कर्मों द्वारा शिष्य के धन आदि का नाश करता है और शिष्य के हितैषी लोगों की उपेक्षा करता है, वह गुरु नहीं—नीच मनुष्य है।

महा-विद्यां समादाय वीराचारं ददाति न।
स याति नरकं घोरं शिष्योऽपि पतितो ध्रुवम्॥ ३६॥
पशु-भावे स्थितो यो हि कालिका-तारिणी-मनुम्।
दत्त्वाऽऽचारं वदेन्नैव नरकान्न निवर्तते॥ ३७॥

जो गुरु शिष्य को 'महाविद्या' का मन्त्र बताकर 'वीराचार' की शिक्षा नहीं देता, वह घोर नरक में जाता है और शिष्य का भी पतन होता है, वह सर्वथा निश्चित है। पशु-भाव में रहते हुए जो गुरु भगवती काली और भगवती तारा के मन्त्र की दीक्षा देकर उनका 'आचार' नहीं बताता, वह नरक से कभी छुटकारा नहीं पाता।

तस्मात् पशु-गुरुस्त्यक्तः साधकैः सर्वदा प्रिये!
पशोर्दीक्षाऽधमा प्रोक्ता चतुर्वर्ग-विघातिनी॥ ३८॥
यदि दैवात् पशोर्दीक्षां लभते शक्तिमान् नरः।
कौलात् तु कौलिकीं प्रार्थ्य तन्मनुं पुनरालभेत्॥ ३९॥

इसलिए हे प्रिये! साधकों को 'पशु-गुरु' का सदा त्याग करना चाहिए क्योंकि पशु-दीक्षा अधम कही गई है, जो चारों वर्ग (धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष) की विशेष रूप से बाधक है। संयोग से यदि पशुदीक्षा कोई शक्ति उपासक पा जाए, तो उसे किसी कौल साधक से प्रार्थना कर उस मन्त्र की दीक्षा पुनः लेनी चाहिए।

तदा विद्या प्रसन्ना स्यात् फलदा जननी सदा।
अन्यथा विमुखी देवी कुतस्तस्यैव सद्गतिः॥ ४०॥

पूर्वोक्त-दोष-युक्तश्च दिव्यो वा वीर एव वा।
तयोरपि न कर्त्तव्या शिष्येण गुरु भावना॥ ४१॥
किन्तु भाव्यं हितैषित्वं गुरुता-कल्पनां त्यजेत्।
दिव्ये वीर-वरे वापि न दोषोऽत्र शिवाज्ञया॥ ४२॥

तब (कौल साधक से पुनः दीक्षा लेने पर) वह विद्या (मन्त्र) माँ के समान अभीष्ट फलदायिनी हो जाती है। अन्यथा देवी साधक से विमुख रहती है, जिससे साधक की सद्गति नहीं होती। पूर्वोक्त दोष-युक्त चाहे कोई दिव्य साधक हो, या वीर साधक, उन दोनों ही के प्रति शिष्य को गुरु-भावना नहीं रखनी चाहिए। केवल उन्हें अपना हितैषी समझना चाहिए, गुरु मानना छोड़ देना चाहिए। ऐसा करने से कोई दोष नहीं होता। भगवान् शिव का ऐसा ही आदेश है।

॥ श्रीदेव्युवाच ॥

दिव्यतो वीरतो देव! पशुतः किं विशेषतः।
वद मे परमेशान! श्रोतुं मे चित्तमुत्सुकम्॥ ४३॥

श्री देवी बोलीं—हे परमेशान! बताइए कि 'दिव्य', 'वीर' और 'पशु'—इन साधकों में क्या विशेषता है? यह सुनने को मेरा मन उत्सुक है।

॥ श्रीशिव उवाच ॥

शृणु देवी, जगद्-वन्द्ये! यत्-पृष्टं तत्त्वमुत्तमम्।
दिव्यः सर्व-मनोहारी मितवादी स्थिरासनः॥ ४४॥
गम्भीरः शिष्ट वक्ता च सभाव-ध्यान-तत्परः।
गुरु-पादाम्बुजे भीरुः सर्वत्र भय-वर्जितः॥ ४५॥
सर्व-दर्शी सर्व-वक्ता सर्व-दुष्ट-निवारकः।
सर्व-गुणान्वितो दिव्य सोऽहं किं बहुत-वाक्यतः॥ ४६॥

श्री शिव ने कहा—हे विश्ववन्दनीय देवी! तुमने जो श्रेष्ठ सार की बात पूछी है, उसे सुनो। 'दिव्य' साधक सबके लिए मनोहर, अल्पभाषी और स्थिर रहनेवाला होता है। वह गम्भीर, शिष्टता से बात करनेवाला, भावुक, ध्यानतत्पर, गुरुचरणकमलों को छोड़कर अन्य सबसे निर्भय, सब कुछ देखनेवाला, सब कुछ बतानेवाला, सभी प्रकार के दुष्टों को निवारण करनेवाला,

सर्वगुणसम्पन्न और अधिक क्या कहूँ, साक्षात् मेरे समान ही तेजस्वी होता है।

निर्भयोऽभयदो वीरो गुरु-भक्ति-परायणः।
वाचालो बलवान् शुद्धः पञ्चतत्त्वे सदा रतिः॥ ४७॥
महोत्साहो महा-बुद्धिर्महा-साहसिकोऽपि च।
महाशयः सदा देवी! साधूनां पालने रतः॥ ४८॥
तत्त्व-मयः सदा वीरो विनयेन महोत्सुकः।
एवं बहु-गुर्णर्युक्तो वीरो रुद्रः स्वयं प्रिये!॥ ४९॥

हे देवी! वीर साधक भयहीन, अभयदाता, गुरुभक्त, वाक्पटु, शक्तिशाली, सच्चरित्र, पञ्चतत्त्वप्रेमी, अतिउत्साही, अत्यन्त बुद्धिमान्, साहसी, महामना और सज्जनों का सदा पालन करने वाला होता है। तत्त्वों से युक्त वीरसाधक सदा नम्रता दिखाने को अति उत्सुक रहता है। हे प्रिये! इस प्रकार बहुत से गुणों से सम्पन्न वीर साधक रुद्र के ही समान सर्वसमर्थ होता है।

पशून् शृणु महादेवी! सर्व-देव-बहिष्कृतान्।
अधमान् पाप-चित्तांश्च पञ्च-तत्त्व-विनिन्दकान्॥ ५०॥
केचिच्छागोपमा देवी! केचिन्मेषोपमा इव।
केचित् खरोपमा भ्रष्टाः केचिच्च शूकरोपमाः॥ ५१॥
इत्याद्याः पशवो देवी! ज्ञेया दुष्टा नराधमाः।
एषां देव्यार्चनं सिद्धिर्गमनं वा कुतो भवेत्॥ ५२॥
अतो ही पशवश्छेद्या भेद्याः खाद्याश्च वीरकैः।
वर्जिताः सर्वथा भद्रे! परमार्थ बहिष्कृताः॥ ५३॥

हे महादेवी! सभी देवों द्वारा बहिष्कृत पशुओं के सम्बन्ध में सुनो। पंचतत्त्वों की निन्दा करनेवाले, नीच, पापयुक्त मन वाले पशु साधकों में कुछ तो छाग (बकरे) के समान कामुक, कुछ मेष (भेंड़े) के समान क्रोधी, कुछ गधे के समान मूर्ख और कुछ सुअर के समान दुराचारी होते हैं। हे देवी! इस प्रकार के दुष्ट हीन मनुष्यों को 'पशु' समझना चाहिए। इनका देवी-पूजन सिद्धिदायक नहीं होता। अतः पशु स्वभाव वाले साधकों को निराकरण करना चाहिए। वे परामर्थ के कार्यों से सर्वथा बाहर ही रखे जाने चाहिए।

॥ श्रीदेव्युवाच ॥

किं चित्रं कथितं नाथ! सन्देहः प्रबली-कृतः।
क्षुद्रो हि पशु-भावश्च गदितो यत् स्वयं सदा॥५४॥
अर्चितं पशु-भावेन वरं साधारणं वद।
देवता नैव जानाति तस्मात् समर्पितं नहि॥५५॥
भञ्ज भञ्जाशु सन्देहं करुणा-सागर प्रभो!
सूर्यो यथ सदा हन्ति चान्धकारं क्षणादपि॥५६॥

श्री देवी बोलीं—हे नाथ! आपने क्या ही विचित्र बात बताई है, इससे मेरा सन्देह और भी पुष्ट हो गया है। आपने स्वयं सदा बताया है कि 'पशु-भाव' क्षुद्र भाव है, इसे 'साधारण भाव' कहना अधिक उचित होगा किन्तु पशुभाव से की गई साधना को यदि देवता 'साधना' न समझें और उस साधना का फल देवता को अर्पित न हो सके, तो उक्त क्षुद्र भाव को 'पशु-भाव' या 'साधारण भाव' कैसे कहा जा सकता है? हे दयामय प्रभो! मेरे इस सन्देह को शीघ्र नष्ट करें, जैसे सूर्य अँधेरे को क्षण भर में नष्ट कर देता है।

॥ श्रीशिव उवाच ॥

भद्रमुक्तं त्वया विज्ञे! तत्त्वं तु शृणु संस्कृतम्!
य उक्तः पशुभावो हि कलौ कस्तस्य पालकः॥५७॥
पञ्चतत्त्वं न गृह्णाति तत्र निन्दां करोति न।
शिवेन गदितं यत् तु तत् सत्यमिति भावयन्॥५८॥
निन्दायाः पातकं वेत्ति पाशवः स प्रकीर्तितः।
तस्याचारं वदाम्याशु शृणु संशय नाशनम्॥५९॥

श्री शिव ने कहा—हे विशेष जाननेवाली देवी! तुमने ठीक कहा। शुद्ध सार की बात सुनो। जिसे 'पशुभाव' कहते हैं, उसका पालन करनेवाला कलियुग में कौन है? जो पंचतत्त्व को ग्रहण नहीं करता किन्तु उसकी निन्दा नहीं करता। शिव ने जो कुछ कहा है, वह सत्य है—यही वह सोचता है। निन्दा करना वह पाप समझता है। वही 'पाशव' या 'पशुभाव' का पालन करनेवाला है। उसके 'आचार' को मैं बताता हूँ, जो सन्देह को नष्ट कर देता है, उसे सुनो।

हविष्यं भक्षयेन्नित्यं ताम्बूलं न स्पृशेदपि।
ऋतु-स्नातां बिना नारीं काम-भावे न हि स्पृशेत्॥ ६०॥
परस्त्रियं कामभावो दृष्ट्वा स्वर्ण समुत्सृजेत्।
सन्त्यजेन्मत्स्य मांसानि पाशवो नित्यमेव च॥ ६१॥
गन्ध माल्यानि वस्त्राणि चीराणि प्रभजेन्न च।
देवालये सदा तिष्ठेदाहारार्थं गृहं व्रजेत्॥ ६२॥
कन्या-पुत्रादि-वात्सल्यं कुर्यान्नित्यं समाकुलः।
ऐश्वर्यं प्रार्थयेन्नैव यद्यस्ति तत् न त्यजेत्॥ ६३॥
सदा दानं समाकुर्याद् यदि सन्ति धनानि च।
कार्पण्यं नैव कर्तव्यं यदीच्छेदात्मनो हितम्॥ ६४॥

'पशुभाव' का पालन करनेवाला नित्य हविष्यान्न खाए, ताम्बूल को छुए भी नहीं। ऋतुस्नान की हुई नारी के सिवा किसी नारी को काम से स्पर्श न करे। पराई स्त्री को यदि कामभाव से देखे तो तत्काल स्वर्ण दान कर प्रायश्चित करे। पशुभाव के साधक को मत्स्य, मांस आदि का सदा त्याग करना चाहिए। सुगन्ध, पुष्पमाला, रेशमी वस्त्रादि धारण न करें। सदा मन्दिर में रहे, भोजन के लिए ही घर में जाए। पुत्र-पुत्री आदि से सदा स्नेह करे। सदैव ऐश्वर्य प्राप्ति के लिए प्रार्थना करता रहे और जो कुछ पास में हो, उसका त्याग न करे। यदि पास में धन हो, तो सदा दान-पुण्य करता रहे। यदि अपना भला चाहता हो, तो कभी कंजूसी न करे।

कार्य-द्रोहान् क्षिपेत् सर्वानहङ्कारादिकांस्ततः।
विशेषेण महादेवी! क्रोधं संवर्जयेदपि॥ ६५॥
सेवनं परमं कुर्यात् पित्रोर्नित्यं समाहितः।
परनिन्दां परद्रोहानहङ्कारादिकान् क्षिपेत्॥ ६६॥

हे महादेवी! कर्म में डालनेवाले अहंकार आदि सभी को दूर करें। विशेष कर क्रोध को दूर रखें। प्रतिदिन माता-पिता की सेवा मन लगाकर करता रहें। दूसरों की निन्दा, दूसरों से शत्रुता और अहंकार से दूर रहें।

कदाचिद् दीक्षयेन्नैव पाशवः परमेश्वरि!।
सत्यं सत्यं पुनः सत्यं नान्यथा वचनं मम॥ ६७॥

अज्ञानाद् यदि वा लोभान्मन्त्र-दानं करोति च।
सत्यं सत्यं महादेवी! देवी-शापं प्रजायते॥ ६८॥

हे परमेश्वरी! पशु स्वभाव वाले को कभी दीक्षा न दें। यह अत्यन्त सत्य बात है, इसकी उपेक्षा कभी न करें। अज्ञान या लोभ वश यदि कोई मन्त्र देता है, तो हे महादेवी! उसे देवी का शाप लगता है, वह सर्वथा सत्य है।

इत्यादि बहुधाऽऽचाराः क्वचिद् ब्रूमः पशोर्मतेः।
तथापि च न मोक्षः स्यात् सिद्धिश्चैव कदाचन॥ ६९॥
यदि चक्रमणे शक्तिः खड्ग-धारे सदा नरः।
पश्वाचारं सदा कुर्यात् किन्तु सिद्धिर्न जायते॥ ७०॥
जम्बू-द्वीपे कलौ देवी! ब्राह्मणो हि कदाचन।
पशुर्न स्यात् पशुर्न स्यात् पशुर्न स्यात् शिवाज्ञया॥ ७१॥

इस प्रकार 'पशु साधक' के बहुत से आचार मैंने बताए हैं, तथापि इनसे न मोक्ष मिलता है और न ही कभी सिद्धि मिलती है। यदि किसी मनुष्य को खड्ग की धार पर चलने की क्षमता हो, तो वह पश्वाचार का सदा पालन करे, किन्तु उसे सिद्धि नहीं मिलेगी। हे देवी! कलियुग में जम्बूद्वीप का कोई ब्राह्मण कभी पशुसाधक न बने, ऐसी शिव की आज्ञा है।

सत्ये क्रमाच्चतुर्वर्णैः क्षीराज्य-मधु-पिष्टकैः।
त्रेतायां पूज्यते देवी! घृतेन सर्व-जातिभिः॥ ७२॥
मधुभिः सर्व-वर्णेश्च पूजिता द्वापरे युगे।
पूजनीया कलौ देवी! केवलैरासवैः शवैः॥ ७३॥

हे देवी! सत्ययुग में चारो वर्ण क्रमशः दूध, घी, मधु और पिष्टक द्वारा और त्रेतायुग में सभी जातियाँ घी द्वारा पूजा करें। द्वापरयुग में सभी वर्ण मधु द्वारा और हे देवी! कलियुग में केवल आसव द्वारा ही देवी पूजनीया हैं।

नानुकल्पः कलौ दुर्गे! नानुकल्पः कलौ युगे।
नानुकल्पो ब्राह्मणानां शूद्रादीनां कलौ युगे॥ ७४॥
सत्यमेतत् सत्यमेतत् सत्यमेतच्छिवोदितम्।
सद्गुरोः शरणं नीत्वा कुलाचारं भजेन्नरः॥ ७५॥

हे दुर्गे! कलियुग में अनुकल्प का विधान नहीं है। कलियुग में ब्राह्मणों

और शूद्र आदि के लिए अनुकल्प नहीं है। शिव द्वारा कथित यह सर्वथा सत्य है। सद्गुरु की शरण लेकर व्यक्ति को कुलाचार का पालन करना चाहिए।

दिव्यत्वं लभते किम्वा वीरत्वं लभते शुभे!
असाध्यं साधयेद् वीरोऽप्यनायासेन यद् भुवि॥ ७६॥
वीरत्वं क्लेशतो देवी! प्राप्नोतीह न चान्यथा।
पशु-कल्प-शतैर्वापि साधितुं न च तत् क्षमः॥ ७७॥
लङ्घितुं नैव शक्नोति यथा पशुर्गिरिं क्वचित्।
अति-गुह्यमिदं प्रोक्तं रहस्यं त्वयि सुन्दरि!॥ ७८॥
गोपनीयं गोपनीयं गोपनीयं सदाऽनघे!॥ ७९॥

हे कल्याणी! दिव्यभाव को प्राप्त करे, चाहे वीरभाव को। वीर साधक पृथ्वी पर अनायास ही असाध्य को भी सिद्ध कर लेता है। हे देवी! इस संसार में वीरभाव कठिनाई से प्राप्त होता है, इसमें सन्देह नहीं। सैकड़ों पशुकल्पों से भी वैसी सिद्धि पाने में कोई समर्थ नहीं होता, जैसे कोई पशु कभी पर्वत को पार नहीं कर सकता। हे सुन्दरी! यह अत्यन्त गुप्त रहस्य तुमसे कहा है। इसे हे अनघे! सदा गोपनीय रखना चाहिए।

॥ श्रीकामाख्या-तन्त्रे देवीश्वर-सम्वादे पञ्चमः पटलः॥

षष्ठम् पटलः

काम-कला साधनं

(काम-कला का साधन)

॥ श्रीदेव्युवाच॥

कस्या देव्याः साधकानामेकान्त-निन्दनं महत्।
न कृत्वा पञ्च-तत्त्वैश्च पूजनं परमेश्वर!॥ १॥

श्री देवी बोलीं—हे परमेश्वर! पंचतत्त्वों से जो साधक देवी का पूजन नहीं करते, उनमें किन देवियों के साधक और कौन सबसे अधिक निन्दनीय हैं?

॥ श्रीशिव उवाच॥

कलौ तु सर्व-शक्तानां ब्राह्मणानां विशेषतः।
पञ्चतत्त्व विहीनानां निन्दनं परमेश्वरि!॥ २॥

तन्मध्ये कालिका-तारा-साधकानां कुलेश्वरी!।
मद्यं बिना साधनं च महाहास्याय कल्पते॥ ३॥
यथा दीक्षां बिना देवी! साधनं हास्मेव हि।
तथा तयोः साधकानां ज्ञेयं तत्त्वं बिना सदा॥ ४॥

श्रीशिव ने कहा—हे परमेश्वरी! कलियुग में पंचतत्त्वविहीन सभी शाक्तों में विशेषतया ब्राह्मण साधक निन्दनीय हैं। उनमें भी हे कुलेश्वरी! कालिका और तारा के साधकों की मद्य बिना साधना अति हास्यास्पद है। हे देवी! जैसे दीक्षा के बिना साधना करना हास्यास्पद है, उसी प्रकार इन दोनों महादेवियों के साधकों की तत्त्वरहित साधना समझनी चाहिए।

शिलायां शस्य-वापैश्च न भवेदंकुरो यथा।
आनावृष्ट्या क्षितौ देवि! कर्षणं यथा नहि॥ ५॥
ऋतुं विना कुतो देवि! कुतोपऽत्यं प्रजायते।
गमनं च विना क्वापि ग्राम-प्राप्तिर्यथा न च॥ ६॥
अतो देव्याः साधनेषु पञ्चतत्त्वं सदा लभेत्।
पञ्चतत्त्वैः साधकेन्द्रावर्चयेद् विधिना मुदा॥ ७॥

हे देवी! जैसे शिला में बोया हुआ बीज अंकुरित नहीं होता, वर्षा के बिना भूमि जोती नहीं जा सकती, ऋतु के बिना सन्तान नहीं होती और बिना चले किसी गाँव तक पहुँचा नहीं जा सकता, उसी प्रकार पंचतत्त्वों के बिना देवी की साधना सफल नहीं होती। अतः दोनों महाविद्याओं के साधकों को प्रसन्न मन से विधिपूर्वक पंचतत्त्वों से पूजन करना चाहिए।

मद्यैर्मांसैस्तथा मत्स्यैर्मुद्राभिर्मैथुनैरपि।
स्त्रीभिः सार्द्ध सदा साधुरर्चयेज्जगदम्बिकाम्॥ ८॥
अन्यथा च महानिन्दा गीयते पण्डितैः सुरैः।
कायेन मनसा वाचा तस्मात् तत्त्व-परो भवेत्॥ ९॥

मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा और स्त्रियों के सम्पर्क में सदैव जगदम्बा का उत्तम अर्चन करना चाहिए। अन्यथा विद्वानों और देवताओं द्वारा निन्दा की जाती है। अतः मन, वचन और शरीर से तत्त्व-परायण होना चाहिए।

कालिका-तारिणी-दीक्षां गृहीत्वा मद्य-सेवनम्।
न करोति नरो यस्तु स कलौ पतितो भवेत्॥ १०॥
वैदिकीं तान्त्रिकीं सन्ध्यां जप-होम-बहिष्कृतः।
अब्राह्मणः स एवोक्तः स एव हन्ति मूर्खकः॥ ११॥
शूनी-मूत्र-समं तस्य तप्रणं यत् पितृष्वपि।
अतो न तर्पयेत् सोऽपि यदीच्छेदात्मनो हितम्॥ १२॥

कालिका और तारिणी की दीक्षा लेकर जो मनुष्य मद्य-सेवन नहीं करता, वह कलियुग में पतित होता है। वैदिकी और तान्त्रिकी सन्ध्या तथा जप-होम से बहिष्कृत होकर वह अब्राह्मण कहा जाता है तथा वह मूर्ख नष्ट होता है। पितरों के लिए वह जो तर्पण करता है, वह भी स्वीकृत नहीं होता। अतः ऐसे व्यक्ति को यदि अपने कल्याण की इच्छा हो, तो पितरों का तर्पण न करें।

काली-तारा-तनुं प्राप्य वीराचारं करोति न।
शूद्रत्वं तच्छरीरे तु प्राप्तं तेन न चान्यथा॥ १३॥
क्षत्रियोऽपि तथा देवि! वैश्यश्चाण्डालतां व्रजेत्।
शूद्रो हि शूकरत्वं च याति याति न संशयः॥ १४॥
अवश्यं ब्राह्मणो नित्यं राजा वैश्यश्च शूद्रकः।
पञ्चतत्त्वैः भजेद् देवीं न कुर्यात् संशयं क्वचित्॥ १५॥

काली और तारा के मन्त्र को पाकर जो 'वीराचार' का पालन नहीं करता, उसके शरीर में शूद्रता आ जाती है। ऐसे क्षत्रिय की भी वही दशा होती है। वैश्य चाण्डाल के समान और शूद्र शूकर के समान पापग्रस्त हो जाता है। अतः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सभी को सदा पंचतत्त्वों से देवी की पूजा करनी चाहिए, इसमें कुछ भी शंका न करें।

पञ्चतत्त्वैः कलौ देवि! पूजयेद् यः कुलेश्वरीम्।
तस्यासाध्यं त्रिभुवने न किञ्चिदपि विद्यते॥ १६॥
स ब्राह्मणो वैष्णवश्च स शाक्तो गाणपोऽपि च।
सौरः स परमार्थी च स एव पूर्ण-दीक्षितः॥ १७॥
स एव धार्मिकः साधुर्ज्ञानी चैव महाकृतिः।
याज्ञिकः सर्व-कर्माहः सो हि देवो न चान्यथा॥ १८॥

हे देवी! कलियुग में जो कुलेश्वरी की पूजा पंचतत्त्वों से करता है, उसके लिए तीनों लोकों में कोई भी कार्य असाध्य नहीं रह जाता। वही व्यक्ति ब्रह्मज्ञानी, विष्णुभक्त, शक्तिउपासक, गणेशोपासक, सूर्योपासक, परमार्थी और पूर्ण दीक्षित माना जाता है। वही वास्तव में धार्मिक साधु, ज्ञानी, अत्यन्त पुण्यात्मा, यज्ञकर्ता, सभी कार्यों में योग्य और देवस्वरूप होता है।

पावनानीह तीर्थानि सर्वेषामिति सम्मतम्।
तीर्थानां पावनः कौलो गिरिजे! बहु किं वचः॥ १९॥
अस्यैव जननी धन्या धन्या हि जनकादयः।
धन्या ज्ञाति-कुटुम्बाश्च धन्या आलापिनो जनाः॥ २०॥

हे गिरिजे! सभी का मत है कि तीर्थ पवित्र होते हैं। इन तीर्थों से भी पवित्र 'कौल' साधक होता है, इससे अधिक क्या कहें। उसकी माँ धन्य है और उसका पिता धन्य है, उसकी जाति और परिवारवाले धन्य हैं, उससे बात करनेवाले धन्य हैं।

नृत्यन्ति पितरः सर्वे गाथां गायन्ति ते मुदा।
अपि कश्चित् कुलेऽस्माकं कुलज्ञानी भविष्यति॥ २१॥
तदा योग्या भविष्यामः कुलीनानां सभातले।
समागन्तुमिति ज्ञात्वा सूत्सुकाः पितरः परे॥ २२॥
कुलाचारस्य माहात्म्यं किं ब्रूमः परमेश्वरि!
पञ्च-वक्त्रेण देवेशि! सनातन्याः फलानि च॥ २३॥

हे परमेश्वरि! समस्त पितर लोग नाचते गाते हुए आनन्द से कहते हैं कि कोई भी हमारे कुल में कुलज्ञानी होगा, जिससे हम कुलीनों की सभा में सम्मिलित हो सकेंगे। यह जानकार अन्य पितर भी उत्सक हो उठते हैं। हे देवेशि! पंचमुखों से कुलाचार की महिमा और फलों का वर्णन कहाँ तक करूँ!

॥ श्रीदेव्युवाच॥

साधनं वद कौलेश! साधकानां सुखावहम्।
दिव्यं रम्यं मनोहारि सर्वाभीष्ट-फल प्रदम्॥ २४॥

श्री देवी बोली—हे कौलेश! साधकों को सुखदायक साधन बताइए, जो दिव्य, सुन्दर, मनोहर और सभी वांछित फलों को देनेवाला हो।

॥ श्रीशिव उवाच ॥

शृणु काम-कलां कान्ते! साधनं तु सुखावहम्।
यत् किञ्चिद् गदितं पूर्वं विस्मृतं तद् वदाम्यहम्॥ २५॥

श्रीशिव ने कहा—हे कान्ते! सुखदायक 'कामकला' के साधन को सुनो। जो कुछ मैंने पहले बताया था, वह विस्मृत हो गया है। उसी को फिर बताता हूँ।

अति-सुललित-दिव्यं स्थानमालोक्य तु भक्त्या,
हृदि च परम देवीं सम्विभाव्यैक-चित्तः।
मधुर-कुसुम-गन्धैर्व्याप्तमाहृत्य साधुः,
तदुपरि खलु तिष्ठेत् साधनार्थी कुलज्ञः॥ २६॥

कुल-ज्ञानी साधक अत्यन्त सुन्दर और दिव्य स्थान को देखकर भक्तिपूर्वक और हृदय में परमा देवी का एकाग्र चित्त से ध्यान कर सुन्दर सुगन्धित पुष्पों से उस स्थान को सज्जित कर उस पर बैठें।

जयवति यतमानः शब्द-पुष्पं क्षिपेत् तत्,
स खलु करक-वीजान्यत्र दुर्गे! ततो हि।
चिर-भव-बक-पुष्पं वर्जयित्वाऽर्चयित्वा,
यदि जपति विधिज्ञस्तत्क्षणत् सोप्यहं च॥ २७॥
उप-वन-परि-युक्त शुद्ध-रम्यालते यो,
विधि-कृत-वर-लिङ्गं लेपयित्वा सुगन्धैः।
विविध-कुसुम-धूपैधूपयित्वा लतां सः,
सम्प्रति जपति भु-भक्त्या त्वत्-सुतो जायते सः॥ २८॥
अचल-शिखर-मध्ये शीघ्रमालम्बयित्वा,
कनक-कुसुम-सार्ध शब्द-पुष्पं निवेद्य।
कृत-बहु-विधि-पूजाः स्वं गुरुं भावयित्वा,
जपति यदि विलासी विष्णुरेव स्वयं सः॥ २९॥

परिचरति स साधुः सिद्धि-वर्गः सशङ्कः,
पर-वधू-लतानां वक्त्र-पद्मोपभोगी।
जयति भुवन-मध्ये निर्जरश्चामरोऽपि,
व्रजति तमनु नित्यं सार्वभौमो नृणां सः॥ ३०॥
अभिनव-शुभनीरं रक्त-पद्म-प्रकीर्णम्,
विविध-कमल-रम्यं भर्ज-मीन-प्रयुक्तम्।
अपर-विहित-वस्तु व्याप्तमीशेश्वरोऽपि,
विगत-जन-समूहे प्राप्य देवी! प्रकोणे॥ ३१॥
घन-जनित-सुशोभे विद्युदादीप्ति-रम्ये,
हृदि च परम-देवीं चिन्तयित्वा सु-भक्त्या।
विधि-विहित-विधानैः स्नान-पूजां समाप्य,
प्रति-जपति निशायां गह्वरे ब्रह्म कः स्यात्॥ ३२॥
इह च गुरु-वराज्ञां प्राप्य शीर्षे निधाय,
त्वयि भजति कुलज्ञो भाव-भेदात् कुलेशि!।
सुर-गुरुरिह को वा कोऽपि चन्द्रो दिनेशो,
व्रजति भुवन-मध्ये दिक्-पतित्वं च कोऽपि॥ ३३॥
इति च परम-देव्याः साधनं यन्मयोक्तम्,
यदि पठति सु-भव्यो गद्गदो वासनाभिः।
अभिमत-फल-सिद्धिः सर्वलोकैर्वरेण्यो,
भवति भुवन-मध्ये पुत्र-दारैर्युतोऽपि॥ ३४॥
अचल-धन-समूहस्तस्य भोगे वसेत् तु,
प्रतिदिनमभिपूजा देवता-गृहे च।
परिजन-गण-भक्तिः सर्वदा तत्र तिष्ठेत्,
सदसि वसति राज्ञः सादरः सोऽपि वन्द्यः॥ ३५॥

श्लोक २७ से ३५ तक विशेष विधान वर्णित है, जो सामान्य साधकों के लिए बोधगम्य नहीं है। जिज्ञासु पाठक अपने गुरुदेव से अथवा लेखक से सम्पर्क करें।

॥ श्रीकामाख्या-तन्त्रे पार्वतीश्वर-सम्वादे षष्ठः पटलः॥

सप्तमः पटलः

शत्रुनाशउपायं

॥ श्रीदेव्युवाच ॥

श्रुतं रहस्यं देवेश! कामाख्याया महेश्वर!
महा-शत्रु-विनाशाय, साधनं किं वद प्रभो!॥ १॥

श्री देवी बोलीं—हे देवेश, महेश्वर! कामाख्या के रहस्य को मैंने सुना। हे प्रभो! बताइए कि महान् शत्रु के विनाश का क्या उपाय?

॥ श्रीशिव उवाच ॥

अति-गुह्यतरं देवि! तब स्नेहाद् वितन्यते।
महावीरः साधकेन्द्रः, प्रयोगं तु समाचरेत्॥ २॥
पूजयित्वा महादेवीं, पञ्चतत्त्वेन साधकः।
महाऽऽनन्दमयो भूत्वा, साधयेत् साधनं महत्॥ ३॥

श्री शिव ने कहा—हे देवी! और भी अधिक गुप्त बात तुम्हारे स्नेह से बताता हूँ। महावीर श्रेष्ठ साधक को इस प्रयोग को करना चाहिए। महादेवी का पंचतत्त्वों से पूजन कर अत्यन्त आनन्दमय होकर इस महान् उपाय को करें।

स्व-मूत्रं तु समादाय, कूर्च-बीजेन शोधयेत्।
तर्पयेद् भैरवीं घोरां, शत्रु-नाम्ना पिवेत् स्वयम्॥ ४॥
दश-दिक्षु महापीठे, प्रक्षिपेदाननेऽपि च।
नग्नो भूत्वा भ्रमेत् तत्र, शत्रु-नाशो भवेद् ध्रुवम्॥ ५॥

अपने मूत्र को लेकर कूर्च-बीज (हूँ) से शुद्ध करें। घोर-स्वरूपा भैरवी का तर्पण करें और शत्रु का नाम लेकर उसे स्वयं पी जाएँ। दस दिशाओं में, महापीठ पर और मुख पर उसे छिड़ककर और नग्न होकर वहाँ भ्रमण करें। इस प्रयोग से निश्चय ही शत्रु का नाश हो जाएगा।

शुक्र-शोणित-मूत्रेषु, वीरो यदि घृणी भवेत्।
भैरवी कुपिता तस्य, सत्यं सत्यं वदाम्यहम्॥ ६॥
दृष्ट्वा श्रुत्वा महेशानि! निन्दां करोति यो नरः।
स महानरकं याति, यावच्चन्द्र-दिवाकरौ॥ ७॥

वीर्य, रक्त और मूत्र—इन सबके प्रति यदि वीरसाधक को घृणा हो, तो भैरवी उससे क्रोधित होती है, यह मैं सर्वथा सत्य कहता हूँ। हे महेशानि! देख या सुनकर जो मनुष्य निन्दा करता है, वह चन्द्र और सूर्य जब तक हैं, तब तक भयंकर नरक में रहता है।

वीराचारं महेशानि! न निन्देत् मनसाऽपि च।
वीरो यस्तु महादेवी! स्वेच्छाचारी सदा शुचिः॥ ८॥

हे महेशानि! 'वीराचार' की निन्दा मन से भी न करनी चाहिए। हे महादेवी! जो 'वीर' है, वह सदा स्वेच्छाचारी होकर भी सदा पवित्र रहता है।

मृत्पात्रं तु समादाय, साध्यनाम लिखेच्छिवे!।
वायुना पुटितं कृत्वा, स्व-मूत्रं तत्र निक्षिपेत्॥ ९॥
उन्मादो जायते शत्रुः, म्रियते वा महेश्वरि!।
माया-बीजं महेशानि! अष्टोत्तर-शतं जपेत्॥ १०॥

हे शिवे! मिट्टी का पात्र लेकर 'साध्य' का नाम लिखे। वायु-बीज (यं) से उसे पुटित कर उस पर अपना मूत्र छिड़कें और माया-बीज (ह्रीं) का १०८ बार जप करें। इससे हे महेश्वरी! शत्रु का उन्माद होता है या वह मर जाता है।

भैरव्यै तर्पयेत् देवि! मारणोच्चाटनं भवेत्।
स्वमूत्रं च समादाय, वाम-हस्तेन शङ्करि!॥ ११॥
शोधितं भैरवी-मन्त्रे, निःक्षिपेत् साधकोत्तमः।
उन्मादो जायते शत्रुः, म्रियते वा महेश्वरि!
मोहितः क्षोभितो वापि, वश्यो वापि भवेद् ध्रुवम्॥ १२॥

हे देवी, शंकरी! बाएँ हाथ से अपने मूत्र को लेकर भैरवी को तर्पण करें, तो मारण और उच्चाटन होते हैं। भैरवी-मन्त्र (ह्स्रैं) से शोधित स्वमूत्र को श्रेष्ठ साधक फेंके, तो हे महेश्वर! शत्रु को उन्माद होता है, या वह मुग्ध अथवा क्षुब्ध या वशीभूत होता है, यह निश्चित है।

मूत्र-साधन-मात्रेण, सहस्राक्ष-समं रिपुम्।
नाशयेत् साधको वीरो, नात्र कार्या विचारणा॥ १३॥

वीर साधक केवल मूत्र-साधन द्वारा इन्द्र के समान शत्रु का नाश कर देता है, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

॥ श्रीदेव्युवाच ॥

शुक्र-शोणित-मूत्राणि, शुद्धानीह कथं प्रभो?
तद् वदस्व महेशान! सन्देह-नाशनं मम॥ १४॥

श्री देवी बोलीं—हे प्रभो, महेशान! वीर्य, रक्त और मूत्र पर संसार में शुद्ध कैसे हैं? यह बताइए और मेरे सन्देह को नष्ट करें।

॥ श्रीशिव उवाच ॥

शृणु देवि! रहस्यं च, महाज्ञानं वदाम्यहम्।
शुक्रोऽहं शोणितं त्वं हि, द्वयोरेवाखिलं जगत्॥ १५॥
शुद्धं सर्व-शरीरं तु, शुक्र-शोणितजं यतः।
एवम्भूत-शरीरे तु, यद्-यद् वस्तु प्रजायते॥ १६॥
अशुद्धं तु कथं देवि! पामरो निन्देति ध्रुवम्।
ब्रह्म-ज्ञानमिदं देवि! मया ते गदितं किल॥ १७॥

श्री शिव ने कहा—हे देवी! रहस्य को सुनो। महान् ज्ञान को मैं बताता हूँ। वीर्य मैं हूँ, रक्त तुम हो। इन दोनों ही से सारा विश्व है। समस्त शरीर ही शुद्ध है क्योंकि यह वीर्य और रक्त से उत्पन्न होता है। इस प्रकार के शरीर में जो-जो वस्तु होती है, वह हे देवी! अशुद्ध कैसे हैं? पापी ही निन्दा करता है, यह निश्चित है। हे देवी! यह ब्रह्मज्ञान है, जिसे मैंने तुमसे कहा है।

अतः शुद्धं जगत् सर्वं, स्व-कायस्थे तु का कथा।
ब्रह्मज्ञानं विना देवि! न च मोक्षः प्रजायते॥ १८॥
ब्रह्मज्ञानी शिवः साक्षाद्, विष्णुर्ब्रह्मा च पार्वति!।
स एव दीक्षितः शुद्धो, ब्राह्मणो वेद-पारगः॥ १९॥
क्रोड़े तस्य वसन्तीह, सर्व-तीर्थानि निश्चितम्॥ २०॥

हे देवी! इस प्रकार सारा संसार ही शुद्ध है। फिर अपने शरीर में विद्यमान वस्तुओं का क्या कहना। ब्रह्मज्ञान के बिना मोक्ष नहीं होता। हे पार्वती! ब्रह्मज्ञानी साक्षात् ब्रह्मा, विष्णु और महेश ही होता है। वही दीक्षा-

प्राप्त साधक हैं, शुद्ध, वेदज्ञ ब्राह्मण है। उसकी गोद में समस्त तीर्थ निश्चित रूप से निवास करते हैं।

॥ श्रीकामाख्या-तन्त्रे पार्वतीश्वर-सम्वादे सप्तमः पटलः॥

अष्टमः पटलः

पूर्णाभिषेक तत्वं एवं गुरू लक्षण

॥ श्रीदेव्युवाच ॥

महादेव, जगद्-वन्द्य! करुणा-सागर, प्रभो!
पूर्णाभिषेकं कौलानां, वद मे सुख-मोक्षदम्॥ १॥

श्री देवी बोलीं—हे विश्व-वन्दनीय महादेव! दयासागर भगवन्! कौलों के 'पूर्णाभिषेक' के सम्बन्ध में मुझे बताइए, जो सुखप्रद और मोक्षदायक होता है।

॥ श्रीशिव उवाच ॥

श्रृणु देवी! मम प्राण-वल्लभे! परमाद्भुतम्।
पूर्णाभिषेकं सर्वाशा-पूरकं शिवता-प्रदम्॥ २॥

श्री शिव ने कहा—हे मेरी प्राणप्रिये देवी! अत्यन्त विलक्षण 'पूर्णाभिषेक' के सम्बन्ध में सुनो, जो सभी आशाओं की पूर्ति करनेवाला और शिवत्व को देनेवाला है।

आगत्य सद्गुरुं सिद्धं, मन्त्र-तन्त्र-विशारदम्।
कौलं सर्व-जन-श्रेष्ठमभिषेक-विधिं चरेत्॥ ३॥
अति-गुप्तालये शुद्धे, रम्ये कौलिक-सम्मते।
वेश्याङ्गनाः समानीय, तत्त्वानि च सु-यत्नतः॥ ४॥
विशिष्टान् कौलिकान् भक्तया, तत्रैव सन्निवेशयेत।
अर्चयेदभिषेकार्थं, गुरुं वस्त्रादि-भूषणैः॥ ५॥

मन्त्र-तन्त्र में पारङ्गत, सिद्ध और सभी में श्रेष्ठ कौल सद्गुरु के पास आकर 'अभिषेक' की विधि को करें। अत्यन्त गुप्त और शुद्ध तथा सुन्दर गृह में, जो कौलिक द्वारा समर्थित हो, वेश्यांगनाओं और तत्त्वों को सुन्दर प्रयत्न के साथ एकत्रित करें। फिर वहीं विशिष्ट कौलों को बुलाकर भक्तिपूर्वक बिठाये। तब 'अभिषेक' के वस्त्रादि आभूषणों से गुरु की पूजा करें।

प्रणमेद् विधिवद् भक्तया, तोषयेत् स्तुति-वाक्यतः।
प्रार्थयेच्छुद्ध-भावेन, कुल-धर्मं वदेति च॥ ६॥
कृतार्थं कुरु मे नाथ! श्रीगुरो, करुणा-निधे!
अभिषिक्तैः साधकैश्च, सेवार्थं शरणागतः॥ ७॥

विधिवत्, भक्तिपूर्वक गुरु को प्रणाम करें, स्तुति, वचनों से उन्हें प्रसन्न करें। फिर शुद्ध भाव से प्रार्थना करें कि 'हे नाथ! कुलधर्म को बताएँ और मुझे कृतार्थ करें। हे दयासागर, श्री गुरुदेव! मैं अभिषिक्त साधकों के साथ आपकी शरण में आया हूँ।'

ततोऽभिषिक्त्वा तत्त्वानि, शोधयेच्छक्तिमान् मुदा।
स्थापयित्वा पुरः कुम्भं, मन्त्रैर्मुद्राभिः प्रिये!॥ ८॥
वितानैर्धूप-दीपैश्च, कृत्वा चामोदितं स्थलम्।
नाना-पुष्पैस्तथा गन्धैः, सर्वोपकरणैर्यजेत्॥ ९॥

हे प्रिय! तब शक्तिमान् गुरु प्रसन्न होकर तत्त्वों का शोधन करें और मन्त्रों एवं मुद्राओं द्वारा अपने सम्मुख कलश की स्थापना कर धूप-दीप आदि के द्वारा वातावरण को प्रफुल्लित कर विविध पुष्पों, सुगन्धियों और सभी प्रकार की सामग्रियों से पूजन करें।

समाप्य महतीं पूजां, तत्त्वानि सन्निवेद्य च।
आदौ स्त्रीभ्यः समर्प्यैव, प्रसादाल्पं भजेत् ततः॥ १०॥
शुभ-चक्रं विनिमयि, आगमोक्त-विधानतः।
अभिषिक्त्वा साधकांश्च, पायेत् तु स्वयं पिबेत्॥ ११॥

महापूजा को समाप्त कर और तत्त्वों को अर्पित कर चुकने पर पहले स्त्रियों को देकर तब थोड़ा प्रसाद स्वयं ग्रहण करें। तन्त्रोक्त विधि से चक्र की रचना कर साधकों का अभिषेक कर उन्हें पान कराएँ और स्वयं पान करें।

भुंजीरन् मत्स्य-मांसाद्यैश्चर्व्य-चोष्यादिभिश्च।
तैः रमेरन् परमानन्दैर्वेश्यायां च यथासुखम्॥ १२॥
वदेयुः कर्म-कर्तुश्च, सिद्धिर्भवतु निश्चला।
अभिषेचन-कर्माशु, निर्विघ्नं चेति निश्चितम्॥ १३॥

मत्स्य, मांसादि चर्व्य और चोष्य भोजन करते हुए यथासुख वेश्याओं

के साथ परमानन्द के साथ विहार करें और कहें कि 'कर्म करानेवाले को अटल सिद्धि प्राप्त हो।' इस प्रकार 'अभिषेक' कर्म निश्चय ही शीघ्र और निर्विघ्न सम्पन्न होता है।

चक्रालयान्निःसरेन्न जन एकोऽपि शङ्करि!।
प्रातःकृत्यादि-कर्माणि, कुर्यात् तत्रैव साधकः॥ १४॥
दिनानि त्रीणि संव्याप्य, भक्तया तांस्तु समर्चयेत्।
शिष्यश्चादौ दिवा-रात्रमभिषिक्तो भवेत् ततः॥ १५॥

हे शंकरी! चक्रालय से एक भी व्यक्ति बाहर न निकले। प्रत्येक साधक को वहीं प्रातः कृत्यादि समस्त कार्य करने चाहिए। इस प्रकार तीन दिनों तक शिष्य रात-दिन भक्तिपूर्वक उन सबका अर्चन करें। तब वह 'अभिषिक्त' होता है।

अनुष्ठान-विधिं वक्ष्ये, सादरं शृणु पार्वति!।
न प्रकाण्डं नहि क्षुद्रं, प्रमाणं घटमाहरेत्॥ १६॥
ताम्रेण निर्मितं वापि, स्वर्णेन निर्मितं च वा।
प्रवालं हीरकं मुक्तां, स्वर्ण-रूप्ये तथैव च॥ १७॥

हे पार्वती! अनुष्ठान की विधि बताता हूँ, सादर सुनो। न बहुत बड़ा और न बहुत छोटा—उचित रूप का 'घट' लाएँ। चाहे ताँबे का बना हो या सोने का अथवा हीरे-मोती-मूंगे या सोने-चाँदी को हो।

नानालङ्कार-वस्त्राणि, नाना-द्रव्याणि भूरिशः।
कस्तूरी-कुंकुमादीनि, नाना-गन्धानि चाहरेत्॥ १८॥
नाना-पुष्पाणि माल्यानि, पञ्चतत्त्वानि यत्नतः।
विहितान् धूप-दीपांश्च, घृतेन यत्नतः॥ १९॥

विविध प्रकार के आभूषण और वस्त्र, विविध प्रकार के द्रव्य पर्याप्त मात्रा में, कस्तूरी, कुंकुम और विविध प्रकार के सुगन्धित पदार्थ एकत्र करें। विविध प्रकार के पुष्प और मालाएँ, यत्नपूर्वक पाँचों तत्त्व और धूप तथा घृत-दीप प्रयत्न करके लाएँ।

ततः शिष्यं समानीय, गुरुः शुद्धालये प्रिये!।
वेश्याभिः साधकैः सार्द्धं, पूजनं न समाचरेत्॥ २०॥

पटलोक्त-विधानेन, भक्तितः परिपूजयेत्।
पूजां समाप्य देव्यास्तु, स्तवैस्तु प्रणमेन् मुदा॥ २१॥

तब हे प्रिये! गुरुदेव शिष्य को शुद्ध गृह में लाएँ और वेश्याओं तथा साधकों के साथ पूजन करें। 'पटल' में बताई विधि से भक्तिपूर्वक देवी की पूजा समाप्त करें और आनन्द के साथ स्तुतियों द्वारा प्रणाम करें।

ततो हि शिव-शक्तिभ्यो, गन्ध-माल्यानि दापयेत्।
आसनं वस्त्र-भूषाश्च, प्रत्येकेन कुलेश्वरी!॥ २२॥
ततः शङ्खादि-वाद्यैश्च, मङ्गलाचरणैः परैः।
घट-स्थापनकं कुर्यात्, क्रमं तत्र शृणु प्रिये!॥ २३॥

तदनन्तर हे कुलेश्वरी! शिवशक्तियों को गन्ध, पुष्प-मालादि से सुशोभित करें। प्रत्येक को आसन, वस्त्र और आभूषण प्रदान करें। तब शंखादि वाद्य बजाते हुए, मंगलाचरण का गान करते हुए, 'घट' की स्थापना करें। हे प्रिये! उसकी विधि सुनो।

काम-बीजेन सम्प्रोक्ष्य, वाग्भवेनैव शोधयेत्।
शक्तया कलशमारोप्य, मायया पूरयेज्जलैः॥ २४॥
प्रवालादीन् पञ्चरत्नान्, विन्यसेत् तत्र यत्नतः।
आवाहयेच्च तीर्थानि, मन्त्रेणानेन देशिकः॥ २५॥

काम-बीज (क्लीं) से 'घट' का प्रोक्षण कर, वाग्-भव (ऐं) से उसे शुद्ध करें। शक्ति (सौः) से 'कलश' को स्थापित कर माया (ह्रीं) द्वारा उसे जल से भरें। उसमें यत्न-पूर्व प्रवाल (मूंगा) आदि पाँच रत्न डालें और निम्न मन्त्र से तीर्थों का आह्वान करें।

ॐ गङ्गाद्याः सरितः सर्वाः, समुद्राश्च सरांसि च।
सर्वे समुद्राः सरितः, सरांसि जलदा नदाः॥ २६॥
ह्रदाः प्रस्रवणाः पुण्याः, स्वर्ग-पाताल-भू-गताः।
सर्व-तीर्थानि पुण्यानि, घटे कुर्वन्तु सन्निधिम्॥ २७॥

गंगा आदि सभी नदियाँ और समुद्र तथा सरोवर, सभी सागर एवं धाराएँ, तालाब, नद और जलाशय, पवित्र झरने आदि जो समस्त पवित्र तीर्थ स्वर्ग, पाताल और पृथ्वी में हैं, वे सब इस 'घट' में प्रविष्ट हो जाएँ।

रमा-बीजेन जप्तेन, पल्लवं प्रतिपादयेत्।
कूर्चेन फल-दानं स्याद्, गन्ध-वस्त्रे हृदात्मना॥ २८॥
ललनयैव सिन्दूरं, पुष्पं वद्यात् तु कामतः।
मूलेन दूर्वां प्रणवैः, कुर्यादभ्युक्षणं ततः॥ २९॥
हूं फट् स्वाहेति मन्त्रेण, कुर्याद् दर्भैश्च ताड़नम्।
विचिन्त्य मूलपीठं तु, संयोज्य पूजयेत्॥ ३०॥
स्वतन्त्रोक्त-विधानेन, प्रार्थयेदमुना बुधः।
तद्-घटे हस्तमारोप्य, शिष्यं पश्यन् गुरश्च सः॥ ३१॥

रमा-बीज (श्रीं) से घट के ऊपर अभिमन्त्रित पल्लव रखें। कूर्च (हूं) से फल दे और हृद् (नमः) से गन्ध एवं वस्त्र प्रदान करें। ललना (स्त्रीं) से सिन्दूर और काम-बीज (क्लीं) से पुष्प चढ़ाएँ। मूल-मन्त्र का उच्चारण करते हुए दूर्वा चढ़ाकर प्रणव (ॐ) से घट का अभ्युक्षण करें। 'हूं फट् स्वाहा' के कुशों द्वारा घट का ताड़न करें। तब घट में योनि-पीठ का ध्यान कर उसका पूजन करें। इसके बाद उस घट के ऊपर अपने तन्त्रोक्त विधान से हाथ रखकर गुरुदेव शिष्य को देखते हुए निम्न मन्त्र द्वारा घट से प्रार्थना करें।

उत्तिष्ठ ब्रह्मकलश! देवताऽभीष्टदायक!।
सर्व-तीर्थाम्बु-सम्पूर्ण! पूरयास्मन्मनोरथम्॥ ३२॥

अर्थात् समस्त तीर्थों के जल से पूर्ण एवं देवता के अभीष्ट फल को देनेवाले हे ब्रह्मकलश! उठो और हमारे मनोरथ को पूर्ण करो।

अभिषिञ्चेत् गुरुः शिष्यं, ततो मन्त्रैश्च पार्वति!।
मङ्गलैर्निखिलैर्द्रव्यैः, साधकैः शक्तिभिः सह॥ ३३॥
पल्लवैराम्रकाद्यैश्च, नति-मत् शिष्यमेव च।
आनन्दैः परमेशानि! भक्तानां हित-कारिणी॥ ३४॥

हे पार्वती! परमानन्दपूर्वक गुरुदेव मन्त्रों का उच्चारण करते हुए आम्रपल्लव द्वारा पहले शिष्य का अभिषेक करें। फिर उपस्थित सभी साधकों और शक्तियों सहित समस्त मण्डल पर जल छिड़कें। इससे सभी भक्तों का कल्याण होता है।

॥ उपसंहार ॥

ततो देवीं गुरुं चैव, प्रणमेद् बहुधा मुदा।
दक्षिणां गुरवे दद्यात्, स्वर्ण-काञ्चन-मानतः॥ १॥
नाना-वस्त्रैरलङ्कारैर्गन्ध-माल्यादिभिस्तथा।
तोषयेत् स्तुति-वाक्यैश्च, प्रणमेत् पुनरेव हि॥ २॥

अन्त में शिष्य को आनन्दपूर्वक भगवती एवं गुरुदेव के श्रीचरणों में बारम्बार प्रणाम करना चाहिए और स्वर्ण-मूल्य के अनुसार यथाशक्ति दक्षिणा गुरु को देनी चाहिए। विविध प्रकार के वस्त्रों, अलंकारों, सुगन्धित पदार्थों एवं पुष्प-माला आदि से तथा स्तुति-प्रार्थना-वचनों द्वारा उन्हें प्रसन्न करना चाहिए और पुनः प्रणाम करना चाहिए।

कायेन मनसा वाचा, गुरुः कुर्यात् तथाऽऽशिषः।
वचनैर्विविधैः शिष्यं, ग्राहयेत् तत्त्वमुत्तमम्॥ ३॥
गुरुश्च भैरवैः सार्द्धं, शक्तिभिर्विहरेन्मुदा।
भैरवाः शक्तयश्चापि, कुर्युराशीः सुयत्नतः॥ ४॥

गुरुदेव मनसा, वाचा और शरीर से शिष्य को आशीर्वाद दें। विविध उपदेशों से शिष्य को उत्तम तत्त्व समझाएँ। तब साधकों और शक्तियों के साथ गुरुदेव आनन्द से विहार करें। साधक एवं शक्तियाँ भी यत्नपूर्वक शिष्य को आशीर्वाद प्रदान करें।

तथा त्रि-दिवसं व्याप्य, भोजयेद् भैरवान् बुधः।
अष्टमे दिवसे शिष्यः, पुनः कुर्यात् तु सेचनम्॥ ५॥
ताम्र-पात्रोदकैर्देवि! विद्यां राज्ञां जपन् सुधीः।
कुन्दुकां च तथा सप्त, सम्पत्ति-हेतवे प्रिये!॥ ६॥
शक्तिभ्यो भैरवेभ्योऽपि, ततो-वस्त्रादि-भूषणम्।
दद्यात् प्रयत्नतः साधु विद्धि देवि! समापनम्॥ ७॥

इस प्रकार बुद्धिमान् व्यक्ति तीन दिनों तक साधकों को भोजन कराएँ। आठवें दिन शिष्य पुनः अभिषेक कराएँ। उस समय हे प्रिये! सम्पत्ति-लाीा के लिए सात कुम्भ स्थापित कर ताम्र-पात्रस्थ जल द्वारा श्रेष्ठ मन्त्र का जप करें। अन्त में शक्तियों और साधकों को भी प्रयत्नपूर्वक वस्त्राभूषण प्रदान करें।

॥ श्रीगुरोर्लक्षणम् ॥

(गुरुलक्षण)

॥ श्रीदेव्युवाच ॥

श्रुतं रहस्यं देवेश! चाभिषेचन-कर्मणः।
गुरुः को वाऽधिकारी, स्यादत्र तन्मे वद प्रभो!॥ १॥

श्री देवी बोलीं—हे देवेश! अभिषेक कर्म का रहस्य मैनें सुन लिया। इस कर्म करने के अधिकारी गुरुदेव अथवा कौन व्यक्ति हैं? हे प्रभू! मुझे यह बतलाइये।

॥ श्रीशिव उवाच ॥

महा-ज्ञानी कौलिकेन्द्रः, शुद्धो गुरु-परायणः।
निग्रहानुग्रहे शक्तः, शिष्य-पालन-तत्परः॥ २॥
पुत्र-दारादिभिर्युक्तः, सज्जनस्तु प्रपूजितः।
श्रद्धावानागमे नित्यं, सोऽधिकर्ता न चान्यथा॥ ३॥

श्री शिव ने कहा—महान् ज्ञानी, विशुद्धाचारी एवं गुरुभक्त श्रेष्ठ कौलिक जो अनुशासन करने में और कृपा करने में समर्थ है तथा जो शिष्यों का पालन करता रहता है, पत्नी-पुत्रादि से मुक्त रहता हुआ अपने कुटुम्बियों से सम्मानित होता हुआ सदा आगम-शास्त्र में श्रद्धा रखता है, वही इस 'अभिषेक-कर्म' के करने का अधिकारी है, अन्य कोई नहीं।

अन्धं खञ्जं तथा रुग्णं, स्वल्प-ज्ञानयुतं पुनः।
सामान्य-कौलं वरदे! वर्जयेन्मति-मान् सदा॥ ४॥
उदासीनं विशेषेण, वजयेत् सिद्धि-कामुकः।
उदासीन-मुखाद दीक्षा, वन्ध्या नारी यथा प्रिये!॥ ५॥

हे वरदायिनि! अन्धे, लूले, रोगी और अल्प-ज्ञानी साधारण कौल साधक को बुद्धिमान् सदा छोड़ दें। सिद्धि की कामना रखनेवाला विशेषकर विरक्त साधक का सहयोग न लें क्योंकि हे प्रिये! विरक्त के मुख से ली गई दीक्षा उसी प्रकार निष्फल होती है, जिस प्रकार बाँझ स्त्री।

अज्ञानाद् यदि वा मोहाद्, उदासीनात् तु पामरः।
अभिषिक्तो भवेद् देवी! विघ्नस्तस्य पदे-पदे॥ ६॥

किं तस्य जप-पूजाभिः, किं ध्यानैः किं च भक्तितः।
सर्व हि विफलं तस्य-नरकं यान्ति चान्तिमे॥ ७॥
कल्प-कोटि-शतैर्देवि! भुक्ते स नरकं सदा।
ततो हि बहु-जन्मेभ्यो, देवी-मन्त्रमवाप्नुयात्॥ ८॥

हे देवी! अज्ञानवश या मोह में पड़कर जो विरक्त साधक से अभिषिक्त होता है, उसके मार्ग में पग-पग पर बाधाएँ आती हैं। उसके जप-पूजन, ध्यान और भक्ति सभी निष्फल होते हैं और अन्त में वह नरक में जाता है। हे देवी! करोड़ों-सैकड़ों कल्पों तक वह सदा नरकभोग करता है। तब अनेक जन्मों के बाद देवी का मन्त्र प्राप्त करता है।

ततो हि विहितं शुद्धं गृहस्थं गुरुमालभेत्।
अभिषेचन-कर्माणि, पुनः कुर्यात् प्रयत्नतः॥ ९॥
सफलं हि सदा कर्म, सर्व तस्य भवेद् ध्रुवम्।
विद्याऽपि जननी तुल्या, पालितं सततं प्रिये!॥ १०॥

अतः विधिसम्मत शुद्ध गृहस्थ गुरुदेव को प्राप्त करना चाहिए। फिर प्रयत्न करके अभिषेक-कर्म कराना चाहिए। तब उसके कर्म निश्चय ही सदा सफल होंगे। हे प्रिये! विद्या अर्थात् कुलसाधना भी माँ के समान है। उसका पालन-पोषण निरन्तर करना चाहिए।

यथा पशुं परित्यज्य, कौलिकं गुरुमालभेत्।
उदासीनं परित्यज्य, तथाभिषेचनु शतम.॥ ११॥
अभिषिक्ततः शिवः साक्षाद, अभिषिक्तो हि दीक्षितः।
स एवं ब्राह्मणो धन्यो, देवी-देव-परायणः॥ १२॥

जिस प्रकार पशु-साधक का त्याग कर कौलिक गुरु को प्राप्त करना चाहिए, उसी प्रकार विरक्त साधक को छोड़कर लोकहित में तत्पर कौल साधक से अभिषेक कराना ही विधि-सम्मत है। अभिषिक्त साधक साक्षात् शिवस्वरूप होता है। दीक्षा-प्राप्त ही अभिषिक्त होता है तथा वही देवी और देवीक्त ब्राह्मण धन्य कहा जाता है।

तस्यैव सफलं जन्म, धरण्यां शृणु पार्वति!।
तस्यैव सफलं कर्म, तस्यैव सफलं धनम्॥ १३॥

तस्यैव सफलो धर्मः, कामश्च सफलो मनुः।
दीक्षा हि सफला देवि! क्रिया च सफला तनुः॥ १४॥

हे पार्वति! सुनो उसी अभिषिक्त साधक का धर्म सफल होता है। उसी की कामनाएँ पूर्ण होती हैं और उसका मन्त्र फलदायक होता है। हे देवी! उसी की दीक्षा सफल होती है और तब उसकी क्रिया भी फलवती होती है।

सर्व हि सफलं तस्य, गिरजे! बहु किं वचः।
यत्र देशे वसेत् साधुः, सोऽपि वाराणसी समः॥ १५॥
तस्य क्रोड़े वसन्तीह, सर्वतीर्थानि निश्चितं।
सत्यं सत्यं महामाये, पुनः सत्यं मयोदितम्॥ १६॥

हे गिरिजे! अधिक कहने से क्या, उसके सभी कार्य सफल होते हैं। जिस स्थान में वह निवास करता है, वह वाराणसी के समान तीर्थ बन जाता है। निश्चय ही यहाँ उसकी गोद में सभी तीर्थ रहते हैं। हे महामाये! यह कथन सर्वथा सत्य है।

उक्तानि यानि यानीह, सेचनानि च पार्वती!।
सर्व-तन्त्रेषु तान्यत्र, कलां नार्हन्ति षोडशीम्॥ १७॥
योग्यं गुरुं तथा शिष्यं, विनैतत् पटलं न हि।
जायते देव-देवेशि! सत्यं सत्यं मयोदित्तम्॥ १८॥

हे पार्वति! यहाँ जो-जो अभिषेक-वचन कहे हैं, सभी तन्त्रों में वे सब पूर्णाभिषेक के हैं और उनके बिना सोलह कलाओं में से एक भी कला का ज्ञान नहीं हो पाता। इस पद्धति के बिना योग्य गुरुऔर वैसे ही शिष्य का होना सम्भव नहीं होता। हे देव-देवेशि! मेरे यह कथन सर्वथा सत्य हैं।

इदं तु सेचनं देवि! त्रिषु लोकेषु दुर्लभं।
गणेशः पात्रमत्रैव, कार्तिकेयोऽपि पार्वति!॥ १९॥
मम तुल्यो ब्रह्म-तुल्यो, विष्णु-तुल्योऽत्र भाजनं।
पञ्च-वक्त्रैश्च शक्तो न, वर्णितुं परमेश्वरि!॥ २०॥

हे देवी! यह अभिषेक विधि तीनों लोकों में दुर्लभ है। हे पार्वती! गणेश और कार्तिकेय जैसे व्यक्ति की पात्रता इसमें है। मेरे समान, या ब्रह्मा और विष्णु के समान व्यक्ति की इसमें योग्यता है। हे परमेश्वरी! पाँच मुखों

से भी इसकी महिमा का वर्णन करना सम्भव नहीं है।

इति ते कथितं गुप्तं, सेचनं महत्।
गोपनीयं गोपनीयं, गोपनीयं प्रयत्नतः॥ २१॥
यथा रतिर्गोपनीया, तथाभिषेचनं परं।
यथा योनिर्गोपनीया तथाऽभिषेचनं परम्॥ २२॥
निखाते धनमागत्य, गोपयेत्तु यथा परं।
तथैव तु महामाये, गोपनीयं ममाज्ञया॥ २३॥

इस प्रकार मैंने अत्यन्त महत्त्वपूर्ण गुप्त अभिषेक का वर्णन तुमसे किया है। इसे प्रयत्नपूर्वक गुप्त रखना चाहिए। जिस प्रकार रतिक्रीड़ा और योनि गोपनीया हैं, उसी प्रकार श्रेष्ठ अभिषेक को गुप्त रखना चाहिए। जैसे भूगर्भ में धन रखकर उसे अति गुप्त रखा जाता है, उसी प्रकार हे महामाये! इसे मेरी आज्ञा से गुप्त रखना चाहिए।

॥ श्री कामाख्या-तन्त्रे पार्वतीश्वर-संवादे अष्टमः पटलः॥

नवमः पटलः

मुक्ति-तत्त्वम्

(मुक्ति का साधन)

॥ श्रीदेव्युवाच॥

मुक्ति-तत्त्वं महादेव, वद में करुणानिधे!।
यस्मिन् षड्-दर्शनानीह, चोपहास्य-गतानि च॥ १॥

श्री देवी ने कहा—हे दयासागर महादेव! मुझे मुक्तितत्त्व बताइए, जिसके समक्ष छः दर्शनों का ज्ञान भी इस संसार में हँसी की बात बन जाता है।

॥ श्रीशिव उवाच॥

शृणु देवि! शुभे विज्ञे, यत्पृष्टं तत्त्वमुत्तमं।
एतन्मर्म च त्वं वेत्ति! अहं वेद्मि तथा हरिः॥ २॥
मोदकेन यथा लोकः, प्रतारयति बालकान्।
लगुड़ेन यथा देवी! बध्नाति दुर्जनं हि च॥ ३॥

तथानङ्गकृतो लोके, दर्शनैर्बर्बरो मया।
दुर्जने यदि मुक्तिः स्याच्छङ्कयेति शुभानने!॥ ४॥

श्री शिव ने कहा—हे कल्याणि, विशेष जाननेवाली देवी! श्रेष्ठतत्त्व को सुनो। इस रहस्य को तुम जानती हो या मैं और विष्णु ही जानते हैं। जिस प्रकार लोग लड्डू देकर बच्चों को बहलाते हैं या जैसे हे देवी! दुष्ट को रस्सी से बाँधते हैं, उसी प्रकार दुष्ट को 'मुक्ति' में ही शंका होती है, अतः दर्शनशास्त्रों द्वारा मैं संसार में बर्बर (अहंकारी) को मोह में डाल देता हूँ।

षड्दर्शन-महाकूपे, पतिताः पशवः प्रिये!।
परमार्थं न जानन्ति, दर्वी! पाक-रसं यथा॥ ५॥
न सारः कदली-वृक्षे, नैरण्डे तु शुभानने!।
दर्शनेषु तथा मुक्तिर्नास्ति देवि! मयोदितम्॥ ६॥

छः दर्शनरूपी भयंकर कुएँ में पशु-भावापन्न लोग गिर जाते हैं और वे परमार्थ को नहीं समझ पाते, जैसे चमचा रसीले पदार्थ को परोसता है, किन्तु वह उसके स्वाद को जड़ होने के कारण नहीं जानता। हे कल्याणमुखि! जैसे केले या रेड़ी के पेड़ में कोई तत्त्व नहीं होता, उसी प्रकार हे देवी! 'दर्शन' के ज्ञान से मुक्ति नहीं होती।

यथा मरीचिकायास्तु, निवर्तनते पुनर्मृगाः।
दर्शनेभ्यो निवर्तन्ते, तथा मुमुक्षवः पुनः॥ ७॥
श्रीगुरोश्च प्रसादेन, मुक्तिमादौ सदा लभेत्।
विचरेत् सर्व-शास्त्रेषु, कौतुकाय ततः सुधीः॥ ८॥

जिस प्रकार मिर्च के पास जाकर पशु पुनः लौट जाते हैं, वैसे ही मोक्ष चाहनेवाले दर्शनशास्त्र का अध्ययन कर उससे विमुख हो जाते हैं। श्रीगुरुदेव की प्रसन्नता से ही सदैव मुक्ति मिलती है। अतः बुद्धिमान् को उनकी कृपा प्राप्त करने के बाद ही अपनी जिज्ञासा को शान्त करने के लिए सभी शास्त्रों का अध्ययन करना चाहिए।

मुक्तितत्त्व प्रवक्ष्यामि, सादरं श्रृणु पार्वति!।
शरीर-धारणं यस्य, कुर्वन्तीह पुनः पुनः॥ ९॥
आदावनुग्रहो देव्याः, श्रीगुरोस्तदनन्तरं।

तदाननात्ततो दीक्षा, भक्तिस्तस्याः प्रजायते॥ १०॥
ततो हि साधनं शुद्धं, तस्माज् ज्ञानं सुनिर्मलं।
ज्ञानान्मोक्षो भवेत् सत्यं, इति शास्त्रस्य निर्णयः॥ ११॥

हे पार्वती! मैं 'मुक्ति' के तत्त्व को कहूँगा, आदरसहित सुनो। जो इस संसार में बारम्बार जन्म लेते हैं, उन्हें पहले देवी का, तब श्री गुरुदेव का अनुग्रह पाना चाहिए। तब उनके मुख से दीक्षा ग्रहण करें, जिससे भक्ति उत्पन्न होती है। तदनन्तर पवित्र साधनों से साधना करनी चाहिए। उससे निर्मल ज्ञान उत्पन्न होता है और उस ज्ञान से मोक्ष होता है, यह सत्य है—ऐसा शास्त्र का निर्णय है।

मुक्तिश्चतुर्विधा प्रोक्ता, सालोक्यं तु शुभानने!।
सारोप्यं सह-योज्यं च, निर्वाणं हि परात्परम्॥ १२॥
सालोक्यं वसतिर्लोके, सारोप्यं तु स्वरूपतः।
सायोज्यं कलया युक्तं, निर्वाणं तु मनोलयम्॥ १३॥

हे कल्याणमुखी! 'मुक्ति' चार प्रकार की कही गई है—१. सालोक्य, २. सारोप्य, ३. सह-योज्य और ४. श्रेष्ठ निर्वाण। 'सालोक्य मुक्ति' में इष्ट-देवता के लोक में निवास करने का सौभाग्य मिलता है, 'सारूप्य' में साधक इष्ट-देवता जैसा ही स्वरूपवान बन जाता है, 'सायुज्य' में वह इष्टदेव की 'कला' से युक्त हो जाता हे और 'निर्वाण मुक्ति' में मन का इष्ट में लय हो जाता है।

॥ श्रीदेव्युवाच॥

सम्यक् लयो जनस्यैव, निर्वाणं यत्तु कथ्यते।
तत् किं वद महादेव, संशयं लयसात् कुरु॥ १४॥

श्री देवी ने कहा—हे महादेव! जीव का लय समुचित रूप से जिस 'मुक्ति' द्वारा होता है, जिसे 'निर्वाण' तत्त्व कहते हैं, वह क्या है, उसे बताइए और सन्देह दूर कीजिए।

॥ श्रीशिव उवाच॥

व्यक्तिर्लयात्मिका मुक्तिरसुराणां दयानिधे!।
दुर्जनत्वाल्लोपयित्वा, क्रीडयामि सुरानहम्॥ १५॥

मनोलयात्मिका मुक्तिरिति जानीहि शंकरि!।
प्राप्तं मया विष्णुना च ब्रह्मणा नारदादिभिः॥ १६॥

श्री शिव ने कहा—हे दयानिधे! आसुरी व्यक्तित्व का लोप होना ही 'मुक्ति' है। दुर्जनता का नाश करके मैं देवताओं को प्रसन्न करता हूँ। हे शंकरी! मनोलयात्मिका 'मुक्ति' को मैंने, विष्णु ने, ब्रह्मा ने और नारद आदि मुनियों ने प्राप्त किया है।

सालोक्यं केवलं यत्तु, याति सारोप्य-युक् द्वयं।
त्रिधा सायोज्यवानेति, निर्वाणी सर्वमेव हि॥ १७॥
नीलोत्पल-दल-श्यामा, मुक्तिर्द्विदल-वर्तिनी।
मुक्तस्यैव सदा स्फीता, स्फुरत्यविरतं प्रिये!॥ १८॥

'सालोक्य' भी मुक्ति है, 'सालोक्य' और 'सारूप्य' दोनों मुक्ति हैं और 'सालोक्य', 'सारूप्य' और 'सायुज्य'—ये तीनों ही 'निर्वाण' हैं। दो दलवाले कमल के मध्य में निवास करनेवाली, नीलकमल की पंखुड़ियों के समान श्याम वर्णवाली मुक्ति देवी मुक्त जीव के समक्ष प्रकट होकर उसे निरन्तर आनन्दित करती रहती है।

सनातनी जगद्-वन्द्या, सच्चिदानन्द-रूपिणी।
परा च जननी, चैव, सर्वाभीष्ट-प्रदायिनी॥ १९॥
इष्टे निश्चल-सम्बन्धं, निर्वाण-मुक्तिरीदृशी।
साधूनां देव-देवेशि! सर्वेषां विद्धि निश्चितम्॥ २०॥

वह 'मुक्ति देवी' सनातनी है, विश्ववन्द्या है, सच्चिदानन्द-रूपिणी पराऽम्बा है और सभी अभीष्ट कामनाओं की पूर्ति करती है। इष्टदेव के साथ स्थिर सम्बन्ध होना 'निर्वाण-मुक्ति' है। हे देवेश्वरी! सभी साधुजनों को यही मुक्ति निश्चित रूप से मिलती है।

मुक्तिज्ञानं कुलज्ञनां, नान्य-ज्ञानं कुलेश्वरि!
तथा च साधनं ज्ञेयं, पञ्चतत्त्वैश्च मुक्तिदम्॥ २१।
अनुग्रहं तु देव्याश्च, कुल-मार्ग-प्रदर्शकः।
दीक्षा कुलात्मिका देवी! श्रीगुरोर्मुख-पंकजात्॥ २२॥

हे कुलेश्वरी! कुल-धर्म के ज्ञाता साधक 'मुक्ति' का यह ज्ञान अवश्य

रखते हैं, अन्य ज्ञान को वे महत्त्व नहीं देते। साथ ही मुक्तिदायक पंचतत्त्वों द्वारा साधना को जानते हैं। देवी का अनुग्रह ही कुलमार्ग का प्रदर्शक है। हे देवी! कुलान्तिका दीक्षा श्री गुरुदेव के मुख-कमल से मिलती है।

कुल-द्रव्येषु या भक्तिः, सा मोक्ष-दायिनी मता।
ज्ञात्वा चैवं प्रयत्नेन, कुल-ज्ञानं भजेद् बुधः॥ २३॥
यदि भाग्य-वशाद् देवी! मन्त्रमेतत्तु लभ्यते।
मुक्तेश्च कारणं तस्याः, स्वयं जातं न चान्यथा॥ २४॥

कुलद्रव्यों में जो भक्ति होती हैं, वही मोक्षदायिनी मानी गई है। प्रयत्नपूर्वक ऐसा जानकर बुद्धिमान् को कुल, धर्म का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। भाग्यवश यदि इस प्रकार की मन्त्रदीक्षा किसी को मिलती है, तो उसकी मुक्ति का मार्ग स्वयं खुल जाता है, इसमें सन्देह नहीं।

अश्रुतं मुक्ति-तत्त्वं हि, कथितं ते महेश्वरी!।
आत्म-योनिर्यथा देवि! तथा गोप्यं ममाज्ञया॥ २५॥

हे महेश्वरी! अब तक न सुने गए मुक्तितत्त्व को मैंने तुमसे कहा। हे देवी! इसे मेरी आज्ञा से अपनी योनि के समान गुप्त रखना चाहिए।

॥ श्रीकामाख्या-तन्त्रे पार्वतीश्वर-संवादे नवमः पटलः॥

दशमः पटलः

कामाख्या-देव्याः स्वरूपम्

(कामाख्या देवी का स्वरूप)

॥ श्रीदेव्युवाच॥

कामाख्या या महादेवी, कथिता सर्वरूपिणी।
सा का वद जगन्नाथ! कपटं मा कुरु प्रभो!॥ १॥
कुर्यास्तु कपटं नाथ! यदि में शपथस्त्वयि।
रतौ का कामिनी योनि, सम्यक् न दर्शयेत् पतिम्॥ २॥

श्री देवी ने कहा—हे जगन्नाथ! जो महादेवी कामाख्या सर्वरूपिणी कही गई हैं, वे कौन हैं? हे प्रभो! बताइए, कपट न करें। हे नाथ! यदि बताने में कपट करें, तो आपको मेरी सौगन्ध। रतिकाल में पति को किसी कामिनी

की योनि का स्पष्ट दर्शन न कराना चाहिए?

श्रुत्वैतत् गिरिजा-वाक्यं, प्रहस्योवाच शङ्करः।

॥ श्रीशिव उवाच॥

श्रृणु देवि! मम प्राण-वल्लभेक! कथयामि ते॥ ३॥
यो देवी कालिका माता, सर्व-विद्या-स्वरूपिणी।
कामाख्या सैव विख्याता, सत्यं देवि! न चान्यथा॥ ४॥
कामाख्या सैव विख्याता, सत्यं सत्यं न संशयः।
सैव ब्रह्मेति जानहि, यज्ञार्थ दर्शनानि च॥ ५॥

पार्वती के उक्त कथन को सुनकर शङ्कर ने हँसकर कहा—हे मेरी प्राणप्रिये देवी सुनो! तुम्हें बताता हूँ। जो माता कालिका देवी सर्वविद्यास्वरूपिणी हैं, वे ही 'कामाख्या' नाम से प्रसिद्ध हैं। हे देवी! यह सत्य है, अन्य कोई बात नहीं है। वे ही 'कामाख्या' रूप से विख्यात हैं, यह निःसन्देह सत्य है। यज्ञ और दर्शन-शास्त्र के लिए वे ही 'ब्रह्म' हैं, ऐसा जानो।

विचरन्ति चोत्सुकानि, यथा चन्द्रे हि वामनः।
तस्यां हि जायते सर्व, जगदेतच्चराचरम्॥ ६॥
लीयते पुनरस्यां च, सन्देहं मा कुरु प्रिये!।
स्थूला सूक्ष्मा परा देवी, सच्चिदानन्द-रूपिणी॥ ७॥
अमेया विक्रमाख्या सा, करुणा-सागरा माता।
मुक्तिमयी जगद्धात्री, सदाऽऽनन्दमयी तथा॥ ८॥

जैसै चन्द्रमा को देखकर बौने लोग उसके सम्बन्ध में उत्सुक होकर भटकते फिरते हैं, वैसे ही उस महादेवी से ही सारा चराचर, जगत् उत्पन्न होता और पुनः उसी में लय होता है। इसमें हे प्रिये! कोई सन्देह न करो। वे असीमित शक्ति की आधार हैं और अपार दयामयी माँ हैं। वे मुक्तिदायिनी, जगद्धात्री और सदा परमानन्दमयी हैं।

विश्वम्भरी क्रिया-शक्तिस्तथा चैव सनातनी।
यथा कर्म-समाप्तौ च, दक्षिणा फल-सिद्धिदा॥ ९॥
तथा मुक्तिरसौ देवी! सर्वेषां फल-दायिनी।
अहो हि दक्षिणा काली, कथ्यते वर-वर्णिनी॥ १०॥

वे ही विश्व का पालन करनेवाली क्रियाशक्ति और सनातनी महादेवी हैं। जिस प्रकार यज्ञादि कर्मों की समाप्ति पर 'दक्षिणा' ही अभीष्ट फल देती है, उसी प्रकार हे देवी! वे ही मुक्ति और सबके अभीष्ट फल को देनेवाली हैं। इसी से हे सुन्दरी! वे 'दक्षिणा काली' कही जाती हैं।

कृष्ण-वर्णा सदा काली, आगमस्येति निर्णय।
उक्तानि सर्वतन्त्राणि, तथा नान्येति निर्णयः॥ ११॥
कृत्वा सङ्कल्पमित्यस्य, काम्येषु पाठयेद् बुधः।
पठेत् वा पाठयेद् वापि, शृणोति श्रावयेदपि॥ १२॥
तं तं काममवाप्नोति, श्रीमत्-काली-प्रसादतः।
यथा स्पर्श-मणिर्देवि! तथैतत् तन्त्रमुत्तमम्॥ १३॥

आगम या तन्त्रशास्त्र का निर्णय है कि काली सदा कृष्णवर्णा हैं। सभी तन्त्रों में ऐसा ही कहा है, अन्य बात नहीं, यही निर्णय है। संकल्प कर जो बुद्धिमान काम्य कर्म के लिए इस तन्त्र का पाठ करता या करवाता है अथवा सुनता या सुनवाता है, वह श्री काली की कृपा से उन-उन कामनाओं को प्राप्त करता है। हे देवी! स्पर्शमणि के समान यह तन्त्र उत्तम फलदायक है।

यथा कल्पतरुर्दाता, तथा ज्ञेयं मनीषिभिः।
यथा सर्वाणि रत्नानि, सागरे सन्ति निश्चितम्॥ १४॥
तथाऽत्र सिद्धयः सर्वाः, भुक्ति-मुक्तिर्वरानने!।
सर्व-देवाश्रयो मेरुर्यथा सिद्धिस्तथा पुनः॥ १५॥

जिस प्रकार 'कल्पवृक्ष' सभी फलों को प्रदान करता है, वैसा ही इस तन्त्र को मनीषियों को जानना चाहिए। जैसे सभी प्रकार के रत्न समुद्र में रहते हैं, वैसे ही, हे सुमुखि! सभी सिद्धियाँ-भुक्ति और मुक्ति इससे मिलती हैं। सब देवों का आश्रय जैसे मेरु पर्वत है, वैसे ही यह तन्त्र सभी सिद्धियों का आश्रय है।

सर्व-विद्या-युतं मन्त्रं, शपथेन वदाम्यहम्।
यस्य गेहे स्थितं देवि! तन्त्रमेतद् भयापहम्॥ १६॥

रोग-शोक-पातकानां, लेशो नास्ति कदाचन।
तत्र दस्यु-भयं नास्ति, ग्रह-राज-भयं न च॥ १७॥

हे देवी! मैं सत्य कहता हूँ, विद्याओं से युक्त यह मन्त्र है। जिसके घर में भय को दूर करनेवाला यह तन्त्र विद्यमान है, उसके यहाँ रोग, शोक और पापों का लेश मात्र कभी नहीं रहता। न वहाँ चोरों का भय रहता है, न ग्रहों या राजदण्ड का भय।

न चोत्पात-भयं तस्य, न च मारी-भयं तथा।
न पराजयस्तेषां हि, भयं नैव मयोदितम्॥ १८॥
भूत-प्रेत-पिशाचानां, दानवानां च राक्षसाम्।
न भयं क्वापि सर्वेषां, व्याघ्रादीनां तथैव च॥ १९॥

उस घर के रहनेवालों को न उत्पातों का भय रहता है, न महामारी का। उनकी कभी पराजय नहीं होती, न किसी अन्य प्रकार का भय रहता है। भूत-प्रेत, पिशाच और दानवों या राक्षसों का न व्याघ्र आदि हिंसक पशुओं का भय कहीं उन्हें होता है। यह मेरा वचन है।

कूष्माण्डानां भयं नैव, यक्षादीनां भयं न च।
विनायकानां सर्वेषां, गन्धर्वाणां तथा न च॥ २०॥
स्वर्गे मर्त्ये च पाताले, ये ये सन्ति भयानकाः।
ये विघ्न-कराश्चैव, न तेषां भयमीश्वरि!॥ २१॥

कूष्माण्डों का भय नहीं होता, न यक्ष आदि का। सभी विनायकों और गन्धर्वों का भी भय नहीं होता। हे ईश्वरी! स्वर्ग, मृत्युलोक और पाताल में जो-जो भयानक और विघ्नकारक जीव हैं, उन सबका भय भी उन्हें नहीं होता।

यम-दूताः पलायन्ते, विमुखा भय-विह्वलाः।
सत्यं सत्यं महादेवि! शपथेन वदाम्यहम्॥ २२॥
सम्पत्तिरतुला तत्र, तिष्ठति सप्त-पौरुषम्।
वाणी तथैव देव्यास्तु, प्रसादेन तु ईरिता॥ २३॥

हे महादेवी! मैं सर्वथा सत्य कहता हूँ कि यमदूत भी भय से व्याकुल होकर भाग जाते हैं। असीम सम्पत्ति सात पीढ़ियों तक विद्यमान रहती है।

साथ ही देवी कामाख्या की कृपा से सरस्वती भी उस घर में उतने ही समय तक बनी रहती है।

एतत् ते कथितं स्नेहात्, न प्रकाश्यं कदाचन।
गोपनीयं गोपनीयं, गोपनीयं सदा प्रिये!॥ २४॥
पशोरग्रे विशेषण, गोपयेत् तु प्रयत्नतः।
भ्रष्टानां साधकानां च, सान्निध्यं न वदेदपि॥ २५॥

हे प्रिये! यह सब मैंने तुम्हारे स्नेहवश बताया है। इसे कभी प्रकट न करें। सदा इसे गुप्त ही रखें। विशेष कर पशु भाववाले लोगों से इसे प्रयत्न करके छिपा रखना चाहिए। भ्रष्ट साधकों के समक्ष भी इसकी चर्चा न करनी चाहिए।

न दद्यात् काण-खञ्जेभ्यो, विगतेभ्यस्तथैव च।
उदासीन-जनस्यैव, सान्निध्ये न वदेदपि॥ २६॥
दाम्भिकाय न दातत्यं, नाभक्ताय विशेषतः।
मूर्खाय भाव-हीनाय, दरिद्राय ममाज्ञया॥ २७॥

मेरी आज्ञा है कि इस तन्त्र को काने, लूले, कुलाचार-त्यागी और विरक्त लोगों को न बताएँ। विशेषकर अहंकारी, मूर्ख, भाव-शून्य, दरिद्र और भक्तिहीन लोगों को इसे न देना चाहिए।

दद्यात् शान्ताय शुद्धाय, कौलिकाय महेश्वरी!।
काली-भक्ताय शैवाय, वैष्णवाय शिवाज्ञया॥ २८॥
अद्वैत-भाव-युक्ताय, महाकाल प्रजापिने।
कुल-स्त्री-वन्द्य-कायाऽपि, शिवाय विनीताय च॥ २९॥

हे महेश्वरी! अद्वैतभाव से युक्त, शान्त, शुद्ध, कालीभक्त, शैव, वैष्णव, महाकाल के उपासक और कुलस्त्रियों द्वारा वन्दित, विनम्र, शिव-स्वरूप साधक को ही इसे देना चाहिए। यही शिवाज्ञा है।

॥ श्रीकामाख्या-तन्त्रे पार्वतीश्वर-सम्वादे दशमः पटलः॥

एकादशः पटलः

कामाख्या-पीठ-स्थान-वर्णनम्

(कामाख्या-पीठ स्थान का वर्णन)

नेपालं च महा-पीठं, पौगण्ड-वर्द्धमानाथ।
पुर-स्थिरं महा-पीठं, चर-स्थिरमतः परम्॥ १॥
काश्मीरं च तथा पीठं, कान्यकुब्जमथ भवेत्।
दारुकेशं महा-पीठमेकाम्रं च तथा शिवे!॥ २॥
त्रिस्रोत-पीठमुद्दिष्टं, काम-कोटमतः परम्।
कैलासं भृगु-नगं च, केदारं पीठमुत्तमम्॥ ३॥
श्री-पीठं च तथोङ्कारं, जालन्धरमतः परम्।
मालवं च कुलाब्जं च, देव-मातृकामेव च॥ ४॥
गोकर्णं च तथा पीठं, मारुतेश्वरमेव च।
अष्टहासं च वीरजं, राज-गृहमतः परम्॥ ५॥
पीठं कोल-गिरिश्चैव, एला-पुरमतः परम्।
कालेश्वरं महा-पीठं, प्रणवं च जयन्तिका॥ ६॥
पीठमुज्जयिनीं चैव, क्षीरिका-पीठमेव च।
हस्तिनापूरकं पीठं, पीठमुड्डीशमेव च॥ ७॥
प्रयागं च हि षष्ठीशं, मायापुरं कुलेश्वरी।
मलयं च महा-पीठं, श्रीशैलं च तथा प्रिये!॥ ८॥
मेरु-गिरिं महेन्द्रं च, वामनं च महेश्वरि!।
हिरण्य-पूरकं पीठं, महा-लक्ष्मी-पुरं तथा॥ ९॥
उड्डीयानं महा-पीठं, काशी-पुरमतः परम्।
पीठान्येतानि देवेशि! अनन्त-फल-दायिनी॥ १०॥

हे देवेशि! अनन्त फल देनेवाले महापीठ ये हैं—१. नेपाल, २. पौगण्ड, ३. वर्द्धमान, ४. पुर-स्थिर, ५. चर-स्थिर, ६. काश्मीर, ७. कान्यकुब्ज, ८. दारुकेश और ९ एकाम्र। इनके बाद अत्यन्त उत्कृष्ट पीठ हैं—१. त्रि-स्रोत (त्रिवेणी-संगम), २. कामकोट, ३. कैंलाश पर्वत, ४. भृगु पर्वत और ५.

केदार। अन्य पीठ ये हैं—१. ॐकार, २. जालन्धर, ३. मालव, ४. कुलाब्ज, ५. देव-मातृका, ६. गोकर्ण, ७. मारुतेश्वर, ८. अष्टहास, ९. वीरज, १०. राजगृह। पुनः महापीठ ये हैं—१. कोलगिरि, २. एलापुर, ३. कोलेश्वर प्रणव और ४. जयन्तिका। इनके अतिरिक्त पीठ ये हैं—१. उज्जयिनी, २. क्षीरिका, ३. हस्तिनापुर और ४. उड्डीश। पुनः महापीठ ये है—१. प्रयाग, २. षष्ठीश, ३. मायापुर, ४. कुलेश्वरी (जनेश्वरी), ५. मलय पर्वत, ६. श्रीशैल पर्वत, ७. मेरु पर्वत, ८. महेन्द्र पर्वत, ९. वामन पर्वत, १०. हिरण्यपुर, ११. महालक्ष्मीपुर और १२. उड्डीयान। इन सभी पीठस्थानों में साधना अनन्त फल देती है।

यत्रास्ति कालिका-मूर्तिर्निर्जन-स्थान-कानने।
विल्व-वनादि-कान्तारे, तत्रास्थायाष्टमी-दिने॥ ११॥
कृष्ण-पक्षे चतुर्दश्यां, शनि-भौम-दिने तथा।
महा-निशायां देवेशि! तत्र सिद्धिरनुत्तमा॥ १२॥

हे देवेशि! यदि किसी निर्जन स्थान में, वन के बीच या किसी बिल्वादि-वन में या किसी दुर्गम घने वन के बीच काली की कोई मूर्ति हो, तो ऐसे किसी स्थान में बैठकर शनिवार या मंगलवारयुक्त कृष्णाऽष्टमी या कृष्णा चतुर्दशी तिथि में महानिशाकाल में कालिका देवी की साधना करने से अति उत्तम सिद्धि प्राप्त होती है।

अन्यान्यपि च पीठानि, तत्र सन्ति न संशयः।
देव-दानव-गन्धर्वाः, किन्नराः प्रमथादयः॥ १३॥
यक्षाद्या नायिका सर्वा, किन्नर्यश्च देवाङ्गनाः।
अचर्यन्त्यत्र देवेशीं, पञ्चतत्त्वादिभिः पराम्॥ १४॥

अन्य भी पीठ संसार में हैं, इसमें सन्देह नहीं। वहाँ देव-दानव-गन्धर्व, किन्नर, प्रमथ, यक्ष, सभी नायिकाएँ, किन्नरियाँ और देव-स्त्रियाँ पंचतत्त्वों आदि से परा देवी की पूजा करती हैं।

वाराणस्यां सदा पूज्या, शीघ्रं तु फलदायिनी।
ततस्तु द्विगुणा प्रोक्ता, पुरुषोत्तम-सन्निधो॥ १५॥
ततो हि द्विगुणा प्रोक्ता, द्वारावत्यां विशेषतः।
नास्ति क्षेत्रेषु तीर्थेषु, पूजा द्वारावती-समा॥ १६॥

वाराणसी में देवी कामाख्या सदा पूजनीया हैं, शीघ्र ही फल देती हैं। उससे दूना फल पुरुषोत्तम तीर्थ में मिलता है। विशेष कर द्वारावती में उससे भी दूना फल मिलता है। द्वारावती के समान फलदायिनी पूजा अन्य किसी क्षेत्र, तीर्थ में नहीं होती।

विन्ध्येऽपि षड्-गुणा प्रोक्ता, गङ्गायामपि तत्-समा।
आर्यावर्ते मध्य-देशे, ब्रह्मावर्ते तथैव च॥ १७॥
विध्यवत् फलदा प्रोक्ता, प्रयागे पुष्करे तथा।
एतच्च द्विगुणोक्तं प्रोक्तं, करतोया-नदी-जले॥ १८॥

विन्ध्याचल और गंगा किनारे पूजा करने से छः गुना फल होता है और आर्यावर्त, मध्य-देश एवं ब्रह्मावर्त में भी वैसा ही फल मिलता है। प्रयाग और पुष्कर विन्ध्याचल के समान ही फलप्रद हैं। करतोया नदी के जल-मध्य में उसका दूना फल मिलता है।

ततश्चतुर्गुणं प्रोक्तं, नन्दी-कुण्डे च भैरवे।
एतच्चतुर्गुणं प्रोक्तं वल्मीकेश्वर-सन्निधौ॥ १९॥
यत्र सिद्धेश्वरी योनौ, ततोऽपि द्विगुणा स्मृता।
ततश्चतुर्गुणा प्रोक्ता लौहित्य-नद-पयसि॥ २०॥

नदी-कुण्ड और भैरव-कुण्ड में पूजा का चौगुना फल होता है। उससे चौगुना फल वल्मीकेश्वर के निकट मिलता है। जहाँ सिद्धेश्वरी योनि विद्यमान है, वहाँ दुगुना फल होता है। उससे चौगुना फल लोहित नद के जल में बताया गया है।

तत्-समा काम-रूपे, सर्वत्रैव जले स्थले।
देवी-पूजा तथा शस्ता, काम्र-रूपे सुरालये॥ २१॥
देवी-क्षेत्रे काम-रूपं, विद्यते नहि तत्-समम्।
सर्वत्र विद्यते देवी, काम-रूपे गृहे गृहे॥ २२॥

काम-रूप में जल और स्थल सभी स्थानों में की गई पूजा का फल वैसा ही होता है। काम-रूप और देवालय में महाशक्ति की पूजा प्रशस्त है। देवी-क्षेत्र में काम-रूप विद्यमान रहता है, उसके समान कुछ भी नहीं है। इस प्रकार देवी काम-रूप में घर-घर में विराजमाना हैं।

ततश्चतुर्गुणं प्रोक्तं, कामाख्या-योनि-मण्डलम्।
कामाख्यायां महा-माया, सदा तिष्ठति निश्चितम्॥ २३॥

कामाख्या-योनि-मण्डल चौगुना फलदायक है। कामाख्या में महामाया सदैव निश्चित रूप से विद्यमान रहती हैं।

एषु स्थानेषु देवेशि! यदि दैवात् गतिर्भवेत्।
जप-पूजादिकं कृत्वा, नत्वा गच्छेत् यथा-सुखम्॥ २४॥

हे देवेशि! उक्त स्थान में यदि दैवयोग से पहुँच जाए, तो जप-पूजा आदि करके देवी को प्रणाम कर सहर्ष अभीष्ट स्थान को जाना चाहिए।

स्त्री-समीपे कृपा पूजा, जपश्चैव वरानने!।
काम-रूपाच्छत-गुणं, फलं हि समुदीरितम्॥ २५॥
अतएव महेशानि! संहतिर्योषितां प्रिये!।
गृहीत्वा रक्त-वसनां, दुष्टां तु वर्जेत् भक्तिमान्॥ २६॥

हे वरानने! स्त्री के पास की गई पूजा और जप का फल 'काम-रूप' के प्रभाव से सौ गुना अधिक होता है। अतः हे महेशानि! रक्तवस्त्रा स्त्रियों का सहयोग लेना चाहिए। दुष्ट स्वभाववाली स्त्रियों से भक्त साधकों को दूर रहना चाहिए।

एक-नित्यादि-पीठे वा, श्मशाने वर-वर्णिनि!।
स्त्री-रूपे हि सदा सन्ति, पीठेऽन्यत्रापि चा प्रिये!॥ २७॥
स्त्रयङ्गेषु च महामाया, जागर्ति सततं शिवे!।
देह-पीठं, प्रत्यक्षं दिव्य-रूपिणी॥ २८॥

हे प्रिय सुन्दरी! एक नित्या आदि पीठ में या श्मशान में या अन्य पीठों में भी स्त्री-रूप में देवी सदैव विराजमान रहती हैं। हे शिवे! स्त्री के अंगों में महामाया निरन्तर जाग्रत रहती हैं। देहपीठ ही महापीठ है, वहाँ देवीरूप प्रत्यक्ष दिखाई देता है।

भ्रान्त्याऽन्यत्र भ्रमन्ति ये, देशे देशे च मानवाः।
पशवस्ते.........यथानघे! ॥ २९॥

भ्रान्तिवश जो मनुष्य देश-देश में भटकते फिरते हैं, हे पवित्रे! वे पशु के समान ही हैं।

काली-मूर्तिर्यत्र निर्जने, विपिने कान्तारे वापि।
कृष्णाष्टमी-निशा-भागे, कालीं सम्पूज्य पञ्चमे॥ ३०॥
गुटिका-खड्ग-सिद्धिं च, खेचरी-सिद्धिमेव च।
यक्ष-गन्धर्व-नागानां, नायिकानां महेश्वरी!॥ ३१॥
भूत-वेताल-देवानां, कन्यानां सिद्धिमेव च।
जायते परमेशानि! किं पुनः कथयामि ते!॥ ३२॥
पञ्चतत्त्व-विहीनानां, सर्वं निष्फलतां व्रजेत्॥ ३३॥

निर्जन स्थान में, वन या घने जंगल में, जहाँ भी काली की मूर्ति स्थापित हो, वहाँ कृष्णाऽष्टमी के रात्रिकाल में पंचतत्त्वों से काली की पूजा करें, तो गुटिका-सिद्धि, खेचरी-सिद्धि, यक्ष-गन्धर्व-नाग-भूत-वेताल-देवों की नायिकाओं और कन्याओं की सिद्धि प्राप्त होती है। हे परमेश्वरी! इससे अधिक क्या कहूँ। हाँ, पंचतत्त्वों से विहीन लोगों के सभी कर्म निष्फल होते हैं।

॥ कामाख्या-तन्त्रे शिव पार्वती-सम्वादे एकादशः पटलः॥

मन्त्र-तन्त्र की अन्य प्रमुख पुस्तकें

- **मन्त्र रहस्य** (सजिल्द संस्करण, मोटे कागज पर)
- **तान्त्रिक चमत्कार : मन्त्र तन्त्र यन्त्र महाशास्त्र** (यशपाल जी)
- **श्री यन्त्रम् और पूजा विधान** (रंगीन पोस्टर १८×२३ इंच सहित)
- **सिद्धि प्रदायक यन्त्र संग्रह : रंगीन एलबम**
- **चमत्कारी ५५ पूजा यन्त्र** (पं. कुलपति मिश्र)
- **दश महाविद्या तन्त्र सार** (योगीराज यशपाल जी)
- **बगलामुखी महासाधना** (योगीराज यशपाल जी)
- **यंत्र विधान** (योगीराज यशपाल जी)
- **संकट मोचिनी कालिका सिद्धि** (योगीराज यशपाल जी)
- **यंत्र माला** (योगीराज यशपाल जी)
- **संजीवनी विद्या : महामृत्युंजय प्रयोग** (योगीराज यशपाल जी)
- **सिद्ध शाबर मंत्र** (योगीराज यशपाल जी)
- **तंत्र प्रयोग** (लेखक : योगीराज यशपाल जी)
- **आदित्य हृदय स्तोत्र—सूर्योपासना सहित** (यशपाल जी)
- **उड्डीश तंत्र** (सम्पादन : योगीराज यशपाल जी)
- **दत्तात्रेय तंत्र** (सम्पादन : योगीराज यशपाल जी)
- **मंत्र रामायण : रामचरित मानस के सिद्ध मंत्र** (योगीराज यशपाल जी)
- **आदि मंत्र शास्त्र** (योगीराज यशपाल जी)
- **तंत्र महायोग** (योगीराज अवतार सिंह अटवाल)
- **महाविद्या तन्त्र मन्त्र** (योगीराज अवतार सिंह अटवाल)
- **सचित्र तान्त्रिक जड़ी बूटी दर्शन** (योगीराज अवतार सिंह अटवाल)
- **गुरु नानक मंत्र शक्ति** (योगीराज अवतार सिंह अटवाल)
- **मन्त्र पोथी** (योगीराज अवतार सिंह अटवाल)
- **बावन जंजीरा** (यशपाल जी व अटवाल जी)
- **मंत्र दीक्षा और रहस्य** (पं. महावीर प्रसाद मिश्र)
- **मन्त्र तन्त्र और रत्न रहस्य** (तान्त्रिक बहल और पं. कपिल मोहन)
- **तंत्र के अचूक प्रयोग** (तांत्रिक बहल)

- पृथ्वी में गढ़ा धन कैसे पायें (बहल)
- नाग और नागमणि (तांत्रिक बहल)
- तंत्र मंत्र द्वारा रोग निवारण (तांत्रिक बहल)
- गोरख तंत्र (तांत्रिक बहल)
- मुस्लिम तंत्र (तांत्रिक बहल)
- मृत आत्माओं से सम्पर्क और अलौकिक साधनाएँ (तांत्रिक बहल)
- वनस्पति तंत्र (तांत्रिक बहल)
- चमत्कारी मंत्र साधना (तांत्रिक बहल)
- सुखी जीवन के लिए टोटके और मंत्र (तांत्रिक बहल)
- सुगम तांत्रिक क्रियाएँ (तांत्रिक बहल)
- तंत्र मंत्र यंत्र (चाणक्य विरचित) प्रस्तुति तांत्रिक बहल
- मंत्र साधना कैसे करें (तांत्रिक बहल)
- तंत्र साधना कैसे करें (तांत्रिक बहल)
- तान्त्रिक तरंग (के.एल. निषाद भैरमगढ़ी)
- तन्त्र की रहस्यमयी काली किताब
- तंत्र द्वारा मनोकामना सिद्धि (पं. भृगुनाथ मिश्र)
- यक्षिणी भूतिनी साधना और देवी सिद्धियाँ
- त्रिसूक्तम् : यंत्र और अनुवाद सहित (पं. हरिओम कौशिक)
- तंत्र द्वारा दूर करें दुर्भाग्य (गोपाल राजू)
- धनदायक तांत्रिक प्रयोग (गोपाल राजू) रंगीन चित्रों सहित
- यंत्र विद्या के १२१ प्रयोग (बाबा औढरनाथ तपस्वी)
- मंत्र प्रयोग (बाबा औढरनाथ तपस्वी)
- मंत्र तंत्र और टोटके (डॉ. रामकृष्ण उपाध्याय)
- सौन्दर्य लहरी (यंत्र और व्याख्या सहित) प्रस्तुति पं. कुलपति मिश्र
- वृहद शाबर मन्त्र शास्त्र

पुस्तकें मंगाने का पता— **फोन : 01334-226297**

रणधीर प्रकाशन

रेलवे रोड, हरिद्वार-२४९४०१
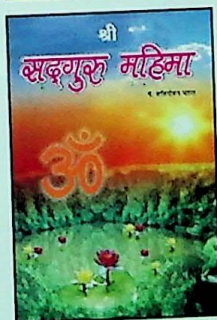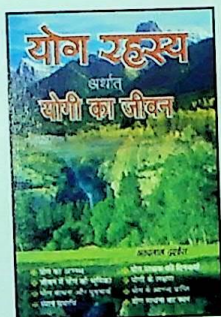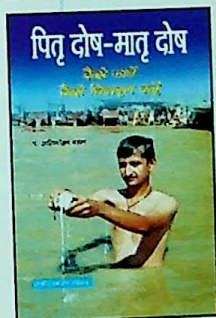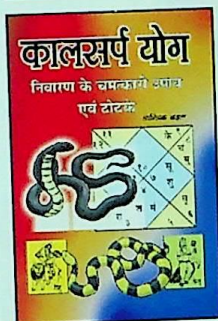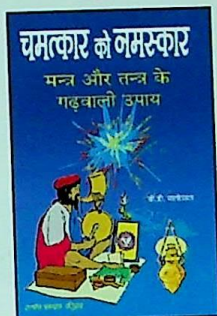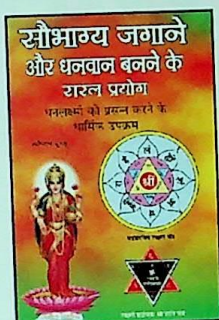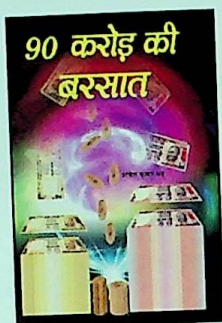
2. धार्मिक ग्रन्थ और नयी पुस्तकें
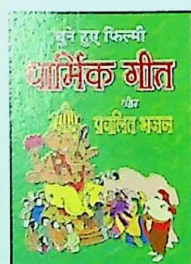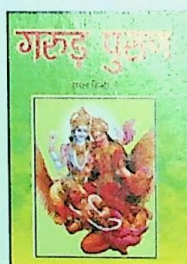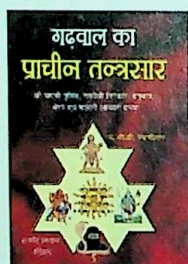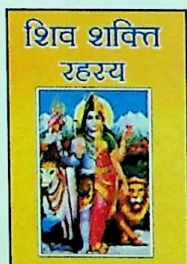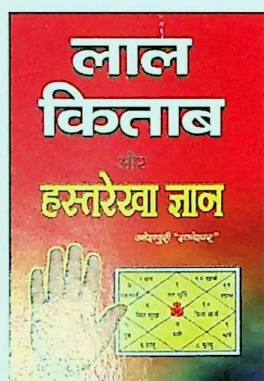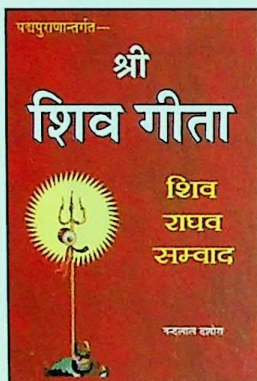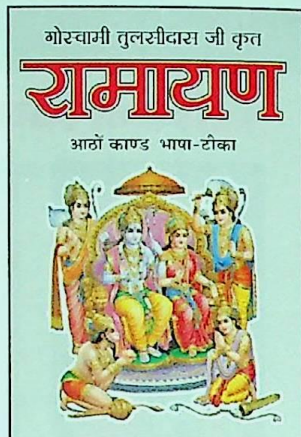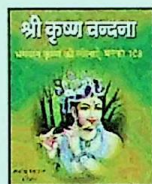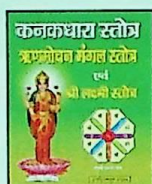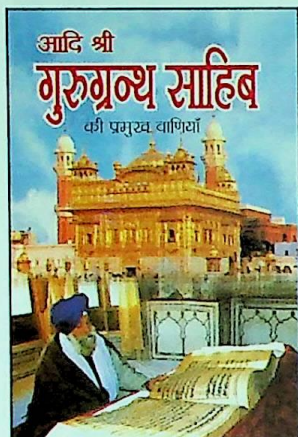
रणधीर प्रकाशन, रेलवे रोड, हरिद्वार

3. प्रत्येक परिवार के लिए संग्रहणीय ग्रन्थ
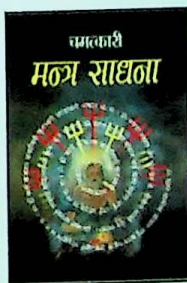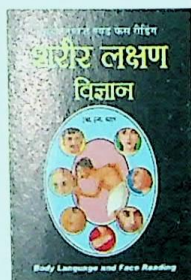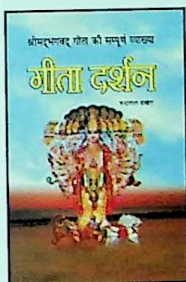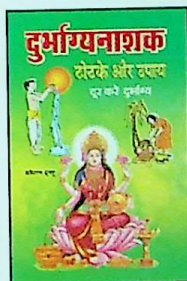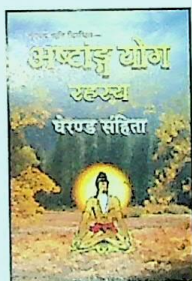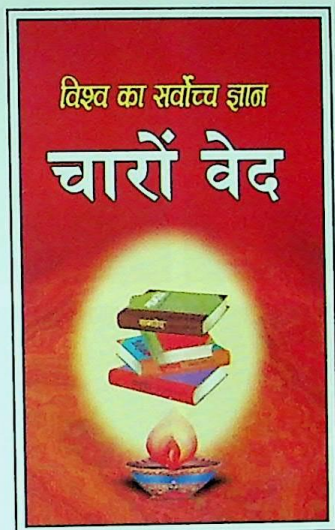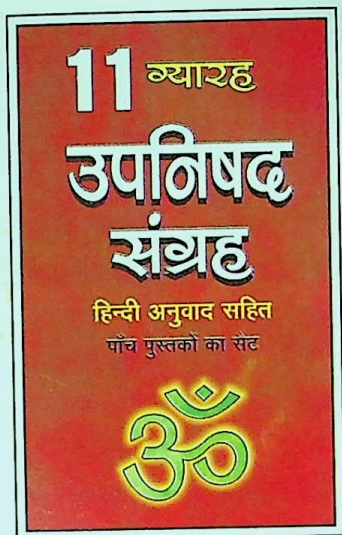
4. विभिन्न प्रकार के विषयों की श्रेष्ठ पुस्तकें
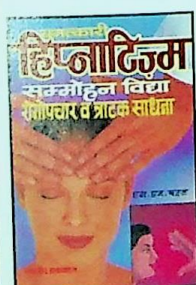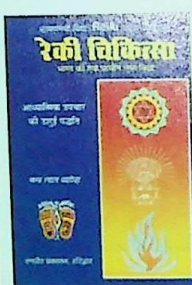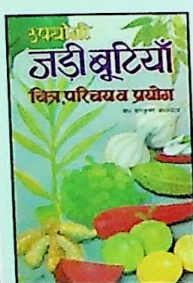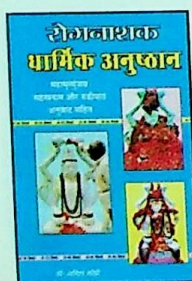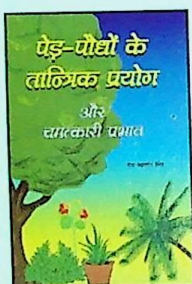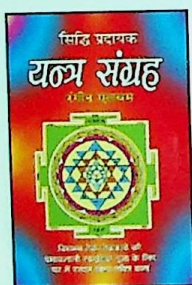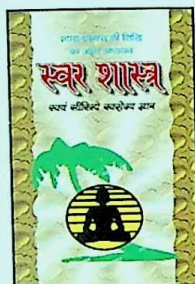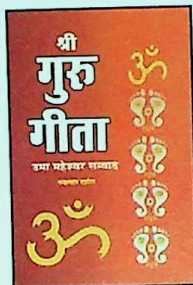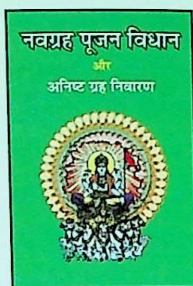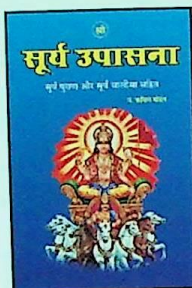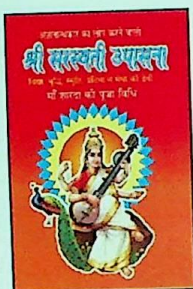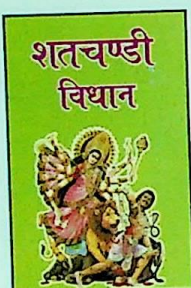
रणधीर प्रकाशन, रेलवे रोड, हरिद्वार

5. ज्ञान से परिपूर्ण पुस्तकों का अनूठा संग्रह
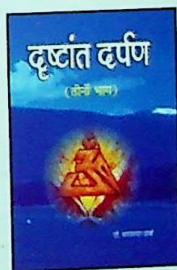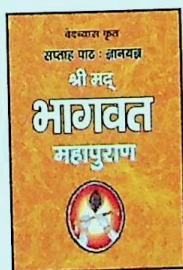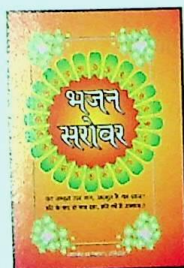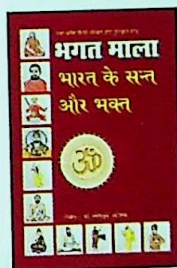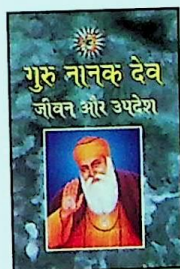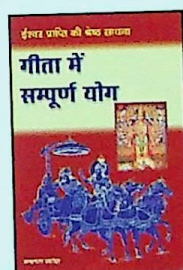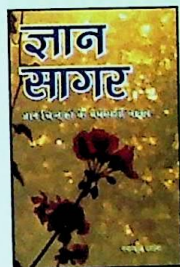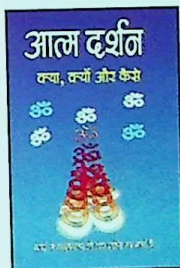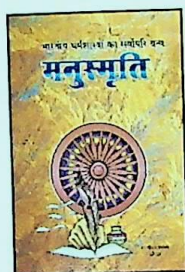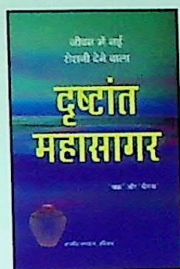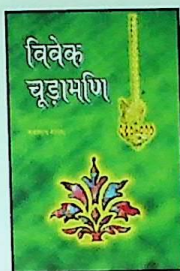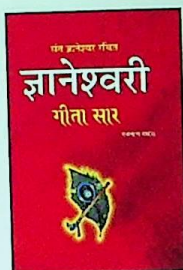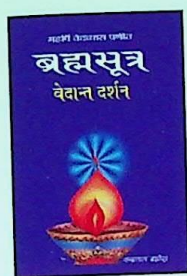
रणधीर प्रकाशन, रेलवे रोड, हरिद्वार

6. मन्त्र, तन्त्र, यन्त्र व रत्न सम्बन्धी पुस्तकें
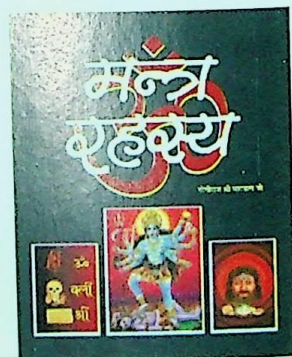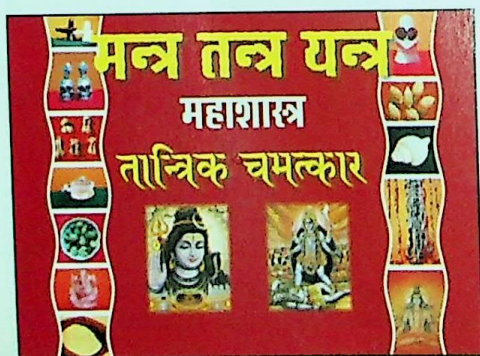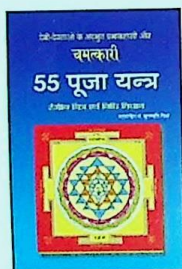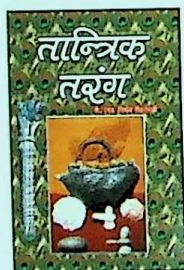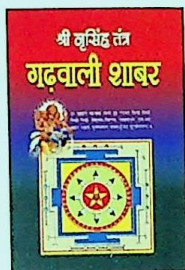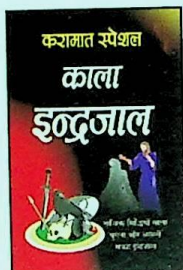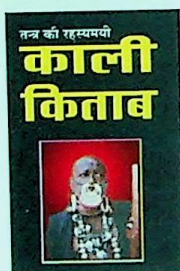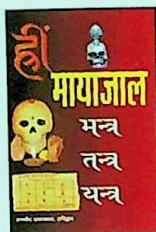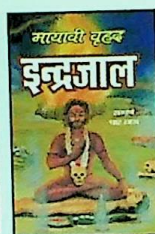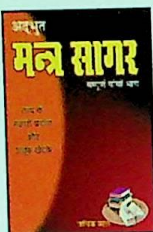
रणधीर प्रकाशन, रेलवे रोड, हरिद्वार

7. ज्योतिष, रत्न, वास्तु एवं अन्य पुस्तकें
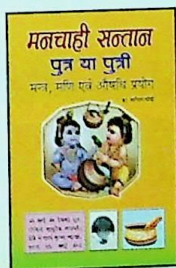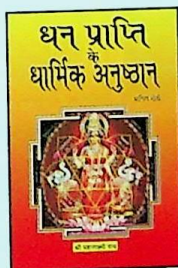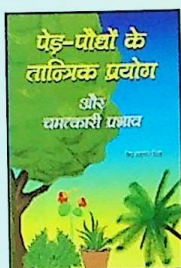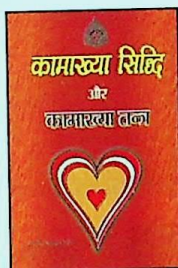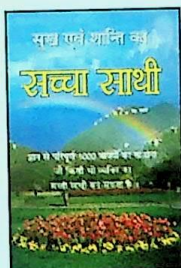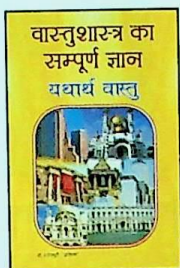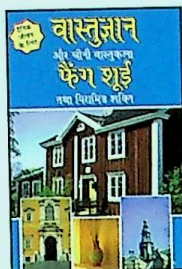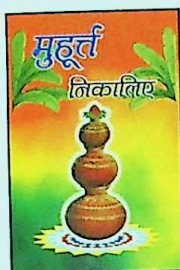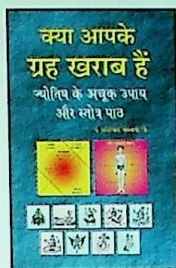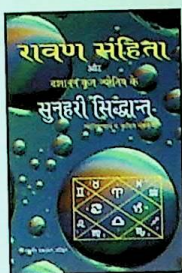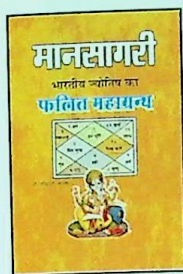
रणधीर प्रकाशन, रेलवे रोड, हरिद्वार

४. हर घर में पढ़े जाने वाले पुराणों की श्रृंखला
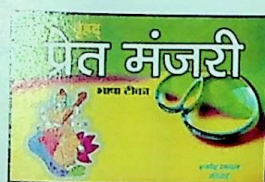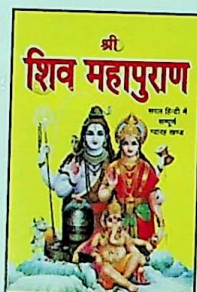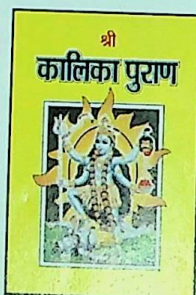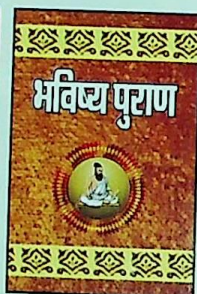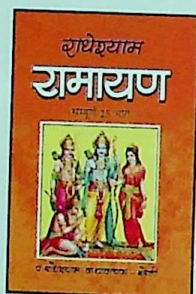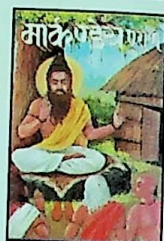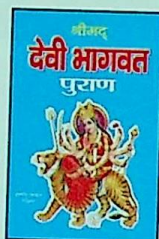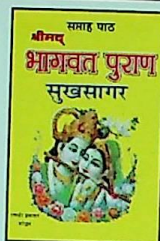
रणधीर प्रकाशन, रेलवे रोड, हरिद्वार

आजकल भारत के बहुत से नगरों में और विदेशों में भी तन्त्र शास्त्र के प्रति लोगों की रुचि बढ़ चली है जिसके कारण बहुतेरे चतुर व्यक्तियों ने अपने आपको तान्त्रिक घोषित करके अपनी तन्त्र की दुकान खोल ली हैं और वास्तविकता तो यह है कि धर्म से अनभिज्ञ एवं धर्मभीरू जनता ऐसे तान्त्रिकों के चंगुल में सरलतासे फँस जाती है। यदि इन किसी भी तन्त्र के व्यवसायिकों से कोई पूछे कि भारत में तान्त्रिक सिद्ध पीठ कहाँ-कहाँ हैं? उन पीठों में कौन-कौन सिद्ध तान्त्रिक हैं? जिन्हें दीक्षा देने का अधिकार है, वह सिद्धि क्यों प्राप्त की जाती है या किस तन्त्र पद्धति से किस महाविद्या अथवा शक्ति की सिद्धि के लिए कितने दिनों तक साधना करके कौन-सी सिद्धि प्राप्त होती है? तो वह तथाकथित ढोंगी तान्त्रिक कुछ भी उत्तर नहीं दे सकेंगे।

वस्तुत: तन्त्र शास्त्र में तो समस्त साधना रहस्य बताये गये हैं जिनका किसी साधारण व्यक्ति के लिए अध्ययन कर पाना भी कठिन कार्य है।

इस प्रस्तुत ग्रन्थ में भारतवर्ष की सर्वप्रसिद्ध कामरूप कामाख्या देवी की सिद्धि का विधान एवं दुर्लभ कामाख्या तन्त्र का ज्ञान प्राप्त करके आप इस ओर आगे बढ़ सकेंगे।

–लेखक